# शिक्षा में क्रियात्मक-अनुसन्धान

[ ACTION RESEARCH IN EDUCATION ]

लेखक

**कामताप्रसाद पाण्डेय**

एम० ए०, एम० एड० (यूनिवर्सिटी गोल्ड-मैडलिस्ट)

Specialization in Experimental Education

असिस्टैन्ट प्रोफ़ेसर,

बी० आर० कॉलिज ऑफ एजुकेशन,

आगरा।

विनोद पुस्तक मन्दिर

हॉस्पिटल रोड, आगरा

## समर्पण

अपने पूज्य गुरुवर प्रोफेसर मनमोहन वर्मा

के

कर कमलों में

# पाठकों से

शिक्षा के क्षेत्र मे अनुसन्धान की आवश्यकता पर बल देना, शिक्षा-शास्त्र की वैज्ञानिक सत्ता को सुदृढ़ बनाए रखने मे सहायक सिद्ध होगा। आज के वैज्ञानिक युग में जीवन के सभी पक्षो मे एक अभिनव क्रान्ति सी छा गई है। शिक्षा जगत इससे अछूता नहीं रह सकता। जहाँ एक ओर शिक्षा में नवीन सिद्धान्तों एवं तथ्यो की गवेषणा को प्रोत्साहित करना हमारा परम लक्ष्य होना चाहिए, वहाँ दूसरी ओर विद्यालयो की गति-विधियो मे अपेक्षित सुधार किंवा विकास के प्रति भी सचेष्ट रहना चाहिए। 'शिक्षा मे क्रियात्मक-अनुसन्धान' विद्यालयों की इसी आवश्यकता को ध्यान में रखकर पाठको के समक्ष प्रस्तुत है। आशा है जिज्ञासु शिक्षक-वृन्द तथा प्रधानाचार्य इससे अवश्य लाभान्वित होंगे।

शिक्षक-प्रशिक्षण महाविद्यालयो तथा विश्वविद्यालयो के शिक्षा-विभागो से प्रतिवर्ष सैकड़ों की तादाद में शिक्षको को प्रशिक्षित किया जा रहा है। यदि प्रशिक्षण काल मे ही इन शिक्षको को क्रियात्मक-अनुसन्धान की विधि से अवगत करा दिया जाए तो विद्यालयों में इस प्रकार का आन्दोलन शीघ्र ही जड़ पकड़ लेगा और निकट भविष्य में शिक्षा की समस्याएँ इतनी द्रुतगति से नहीं पनप पायेंगी। इस दृष्टि से बी० एड०, बी० टी०, एल० टी० तथा एम० एड० के छात्रों के लिए यह ग्रन्थ उपयोगी होगा।

अपने दृष्टिकोण को पाठकों के सम्मुख रखते हुए भारतीय-विद्यालयों की परिस्थितियों के प्रति जागरूक रहने का भरसक प्रयत्न किया गया है। क्रियात्मक-अनुसन्धान की प्रक्रिया को भारतीय विद्यालयो मे लागू करने के निमित्त एक चेतना प्रस्फुटित करने की दिशा में यह एक लघु प्रयास है। लेखक का यह दृढ़ विश्वास है कि भारतीय शिक्षा-शास्त्री इस प्रकार के ग्रन्थो का स्वागत

करेंगे तथा क्रियात्मक-अनुसन्धान की ओर विद्यालयों को मोड़ने में आवश्यक सहयोग प्रदान करेंगे ।

पुस्तक के अन्त में सहायक-ग्रन्थों की सूची दी गई है । लेखक उन सभी महानुभावों का ऋणी है जिनकी कृतियों को पढ़कर क्रियात्मक-अनुसन्धान सम्बन्धी अपने विचारों को यह रूप दे सका है । विशेषतौर से स्टीफेन एम० कोरी का आभारी हूँ जिनके ग्रन्थ का अवलोकन कर भारतीय विद्यालयों में क्रियात्मक-अनुसन्धान के प्रति कुछ सोचने की प्रेरणा प्राप्त हुई है ।

पुस्तक कैसी बन पड़ी है इसका निर्णय पाठकों के आधीन है । आशा है विज्ञ पाठक अपनी आलोचनाओं को लेखक तक पहुँचाने का कष्ट करेंगे । पुस्तक को अधिक उपयोगी बनाने के लिए जो सुझाव दिये जाएँगे उनसे लेखक अपने को अनुगृहीत समझेगा ।

बसंत पंचमी
६ फरवरी, १९६५,

कामताप्रसाद पाण्डेय

# विषय-सूची

अध्याय ६



अध्याय ७



अध्याय ८



अध्याय ९

१

# क्रियात्मक-अनुसन्धान से तात्पर्य

"The process by which practitioners attempt to study their problems scientifically in order to guide, correct, and evaluate their decisions and actions is what a number of people have called action research."

—*Stephen M. Corey*

क्रियात्मक-अनुसन्धान हमारे विद्यालयों तथा शिक्षा-संस्थाओं के लिए एक नये आन्दोलन के रूप में उपस्थित हुआ है। शिक्षा में अनुसन्धान की दृष्टि से अपना देश पर्याप्त पीछे है। आज शिक्षा के क्षेत्र में जितने भी मौलिक-अनुसन्धान हुए हैं अथवा हो रहे हैं, उन्हें सरलतापूर्वक गिनाया जा सकता है। खेद है कि इस प्रकार के जो भी शैक्षणिक-अनुसन्धान हमारे शिक्षा-वर्षों में हुए हैं वे किसी तरह के सुधार अथवा परिवर्तन लाने में सर्वथा असमर्थ रहे हैं। शिक्षा-संस्थाओं तथा शैक्षणिक-अनुसन्धानकर्ताओं के बीच एक ऐसी खाई सी बन गई है जिसे पाटना प्रजातंत्र की रक्षा हेतु नितान्त आवश्यक बन गया है। प्रजातंत्रात्मक राष्ट्र के विद्यालयों को सतत विकासशील बनाये रखना प्रजातंत्र को जीवित रखना है। इसके लिए विद्यालयों के प्रधानाचार्यों, व्यवस्थापकों, अध्यापकों तथा निरीक्षकों को चाहिए कि वे अपनी जिम्मेदारियों को वैज्ञानिक दृष्टि से समझने की चेष्टा करें। वे अपनी शैक्षणिक समस्याओं का हल स्वयं ढूँढें तथा सदैव इस बात का प्रयत्न करें कि विद्यालय निरन्तर प्रगति के नवीन चरण चिह्नों का सृजन करे। शिक्षा में 'क्रियात्मक-अनुसन्धान' इसी तथ्य की पुष्टि हेतु विकसित हुआ है। शिक्षा के लिए यह एक अभिनव देन

है। शिक्षा-संस्थाओं में सुधार के लिए यह एक स्तुत्य प्रयास है। लोकशाही शासन-व्यवस्था में विद्यालयों की नींव सुदृढ़ बनाने के निमित्त इसे एक नई सूझ की संज्ञा दी जा सकती है।

## क्रियात्मक-अनुसन्धान से तात्पर्य

पूर्व कथन से यह स्पष्ट है कि 'क्रियात्मक-अनुसन्धान' विद्यालयों की कार्य-पद्धति में सुधार किंवा विकास लाने के लिए एक सराहनीय कदम है। इसके अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता कोई विशेष व्यक्ति न होकर विद्यालयों से प्रत्यक्ष रूप में सम्बन्ध रखने वाले लोग ही होते हैं। उनका उद्देश्य उपाधि-प्राप्त करना नहीं होता। आजकल एम० एड०, एम० ए० (शिक्षा) तथा पी० एच-डी० की उपाधि के लिए जो शोध-ग्रन्थ तैयार हो रहे हैं अथवा जो शोध-कार्य हो रहे हैं उन्हें 'क्रियात्मक-अनुसन्धान' के क्षेत्र में कदापि नहीं माना जा सकता। इस प्रकार के अनुसन्धान विद्यालयों की कार्य-प्रणाली के अधिक निकट नहीं हुआ करते। अनुसन्धानकर्ता भी एक ऐसा व्यक्ति होता है जो विद्यालय की क्रियाओं से सर्वथा दूर होता है। उसका उन क्रियाओं से सीधा सम्बन्ध नहीं होता। इसका परिणाम यह होता है कि उसके द्वारा प्राप्त फल विद्यालय के अध्यापकों, प्रधानाचार्यों, प्रबन्धकों अथवा निरीक्षकों तक कठिनाई से पहुँच पाते हैं और जब पहुँचते भी हैं तो उनका कार्यान्वयन (Implementation) असम्भव सा होता है। क्रियात्मक-अनुसन्धान (Action research) तथा मौलिक-अनुसन्धान (Fundamental or Basic research) में यह एक महत्त्वपूर्ण अन्तर है। मौलिक-अनुसन्धान तो नवीन सत्यों एवं सिद्धान्तों की स्थापना करता है जबकि क्रियात्मक-अनुसन्धान नित्य की क्रियाओं में सुधार एवं विस्तार लाने का मार्ग ढूँढ़ता है। हम रोज जो कार्य करते हैं उसकी शैली में, उसकी पद्धति में अभीष्ट प्रभावोत्पादकता लाना क्रियात्मक-अनुसन्धान का लक्ष्य होता है। इसके द्वारा व्यवहार में सुगमता लाने का प्रयास किया जाता है।

क्रियात्मक-अनुसन्धान को अनुसन्धान की नवीनतम शाखा के रूप में समझना चाहिए। व्यवहार-पक्ष को मजबूत बनाने का यह एक सबल माध्यम है। मौलिक-अनुसन्धान द्वारा सिद्धान्त (Theory) पक्ष में समृद्धि लाई जाती है। शिक्षा के क्षेत्र में नये सिद्धान्त इसी प्रकार के अनुसन्धानों द्वारा प्राप्त किये जाते हैं। सीखने की नई विधियों का प्रतिपादन मौलिक-अनुसन्धानों के कारण सम्भव हो सका है। जॉन डिवी की प्रोजेक्ट पद्धति, फ्राबेल की किण्डरगार्टन प्रणाली एवं मेरिया मान्टेसरी की प्रणाली शिक्षा में मौलिक-अनुसन्धान के जीवन्त

किया जा रहा है। हम आये दिन मूल्यांकन (Evaluation), व्यवस्थित शिक्षण (Programmed learning) तथा नये प्रकार की परीक्षाओं (New type tests) के बारे में सुनते हैं। कहना न होगा कि ये सभी मौलिक-अनुसन्धान की उपज हैं। क्रियात्मक-अनुसन्धान में इसके विपरीत कार्य-पक्ष पर अधिक बल दिया जाता है। शिक्षक अपनी शिक्षण-क्रिया, प्रधानाचार्य अपने विद्यालय की प्रशासनिक एवं शैक्षणिक क्रियाओं तथा व्यवस्थापक एवं विद्यालय-निरीक्षक अपनी-अपनी क्रियाओं में उपयुक्त परिवर्तन, संशोधन एवं सुधार विधिवत् रूप में लाने की कोशिश करते हैं। वे अपनी समस्याओं को वस्तुनिष्ठ (Objective) ढंग से विश्लेषित करते हैं तथा उनका निराकरण प्रयोगात्मक तरीके से करने के लिए सोचते हैं। समस्याओं के कई हल प्रयोग की आँच में निर्लिप्त भाव से तपाये जाते हैं और अन्त में सर्वाधिक प्रभावशील समाधान को निर्धारित कर अपनी कार्य-पद्धति में सुधार एवं प्रगति लाई जाती है। इसे ही क्रियात्मक-अनुसन्धान कहा जाता है।

क्रियात्मक-अनुसन्धान को और विस्तारपूर्वक समझने से पूर्व हमें 'अनुसन्धान' तथा 'शिक्षा में अनुसन्धान' के सम्बन्ध में स्पष्ट जानकारी होनी चाहिए।

## अनुसन्धान क्या है ?

अनुसन्धान (Research) से एक ऐसी पद्धति का बोध होता है जिसके द्वारा कुछ सामान्य नियमों का निर्धारण अथवा किसी नूतन सत्य की उपलब्धि होती है। सामान्य व्यक्ति जब किसी परिस्थिति विशेष में सोच-विचार प्रारम्भ करता है तो उसकी चिन्तना में एक व्यवस्था का अभाव सा होता है। प्रायः वह अपनी व्यक्तिगत धारणाओं को पहचान नहीं पाता। किन्तु अनुसन्धानकर्ता अपने वैयक्तिक पक्ष पर नियन्त्रण रखते हुए विचार प्रारम्भ करता है। उसकी चिन्तना उद्देश्य-पूर्ण होती है और उसमें एक प्रकार की तर्क संगतता का भी समावेश रहता है। इस सम्बन्ध में अनुसन्धान की अनेक महत्वपूर्ण परिभाषाएं उद्धृत की जा सकती हैं।

## अनुसन्धान की कुछ महत्वपूर्ण परिभाषाएं

(१) "अनुसन्धान केवल सत्य की खोज मात्र नहीं है, अपितु यह एक दीर्घ कालीन, प्रगाढ़ एवं सोद्देश्य शोध है।"[1] तात्पर्य यह है कि अनुसन्धान में सत्य की

---

1 "Research is not merely a search for truth but a prolonged intensive, purposeful search."

—*Webster's New International Dictionary*

खोज करना उद्देश्य होता है। यह खोज एक अस्थायी एवं सही वस्तु से नहीं प्राप्त होती। इसके लिए गहराई में जाना आवश्यक है।

(२) डब्लू० एस० मुनरो[2] के अनुसार अनुसन्धान से आशय है—एक ऐसी पद्धति का जो किसी समस्या के अध्ययन हेतु अपनाई जाती है तथा जिसमें समस्या के प्रति दिए गए सुझावों की पुष्टि तथ्यों द्वारा की जाती है। ये तथ्य सम्मति के रूप में अथवा विवरण-पत्रों, लेखा-पत्रों, प्रश्नावलियों के उत्तरों, परीक्षाओं के अङ्कों तथा प्रयोगों द्वारा प्राप्त होने वाले प्रदत्तों के रूप में हो सकते हैं। कहने का अर्थ यह है कि अनुसन्धान किसी समस्या का विधिवत् विश्लेषण एवं अध्ययन है। इसके अन्तर्गत समस्याओं की पुष्टि उपयुक्त साक्षियों द्वारा की जाती है। ये साक्षियाँ (Evidences) सम्मति अथवा तथ्य के रूप में उपलब्ध हो सकती हैं। सम्मति (Opinion) से अभिप्राय है—किसी व्यक्ति विशेष अथवा समूह की राय। तथ्य से अभिप्राय है—ऐसे विवरण से जो वस्तुनिष्ठ ( *Objective* ) रूप में प्रकट किया जा सके तथा जिसका अलग अस्तित्व हो।

(३) श्री एल० वी० रेडमैन तथा ए० वी० एच० मोरी ने बड़े ही अल्प शब्दों में अनुसन्धान को परिभाषित करने का प्रयास किया है। उनके मत में नवीन ज्ञान को प्राप्त करने के लिए व्यवस्थित प्रयास ही अनुसन्धान है।[3]

(४) पी० एम० कुक[4] का कथन है कि अनुसन्धान किसी समस्या के प्रति निर्व्याज, सांगोपांग एवं समझदारी के साथ की हुई खोज है। यह खोज तथ्यों

---

2 Research may be defined as a method of studying problems whose suggestions are to be derived partly or wholly from facts. The facts dealt with in research work may be statements of opinion, historical facts, those contained in records and reports, the results of tests, answers to questionnaires, *experimental data of any sort and so forth.*

—*W. S. Monroe.*

3 "*Research is a systematized effort to gain new knowledge.*"

—*L. V. Redman & A. V. H. Mory.*

4 "Research is an honest, exhaustive, intelligent searching for facts and their meanings or implications with reference to a given problem. The product or findings of a given piece of Research should be an authentic, verifiable contribution to knowledge in the field studied" —*P. M. Cook.*

एवं उनके अर्थों का पता लगाने के लिए की जाती है। उनके विचारानुसार अनुसन्धान द्वारा प्राप्त फल प्रामाणिक एवं समर्थनीय हो तथा उससे अधीत क्षेत्र में नये ज्ञान की वृद्धि होनी चाहिए। श्री कुक की इस परिभाषा में अधो-लिखित बातों पर अधिक ध्यान देना होगा—

(अ) अनुसन्धान एक निर्व्याज (Honest) खोज है।
(ब) अनुसन्धान एक साङ्गोपाङ्ग (Exhaustive) खोज है।
(स) अनुसन्धान एक समझदारी के साथ की हुई खोज है।
(द) अनुसन्धान के अन्तर्गत की जाने वाली यह खोज तथ्यों (Facts) एवं उनके अर्थों (Implications) का पता लगाती है।
(य) अनुसन्धान द्वारा प्राप्त परिणाम प्रामाणिक (Authentic) होते हैं।
(र) अनुसन्धान द्वारा प्राप्त परिणाम समर्थनीय (Verifiable) होते हैं।
(ल) अनुसन्धान द्वारा प्राप्त परिणाम ऐसा होना चाहिए जिससे उस क्षेत्र में जिसमें कि वह अध्ययन किया गया है, नवीन ज्ञान की प्राप्ति हो।

यह परिभाषा 'अनुसन्धान' के प्रायः सभी अंगों का स्पष्ट निर्देश करती है।

(५) सी० सी० क्राफोर्ड[5] के मत मे अनुसन्धान, विचार करने की एक सूक्ष्म एवं व्यवस्थित प्रविधि है जिसमे विशेष यन्त्रों, उपकरणों व विधियों का प्रयोग किया जाता है तथा जिसके द्वारा किसी समस्या का समुचित हल उपलब्ध होता है। इसमें जिज्ञासा की वृत्ति प्रधान होती है न कि किसी तथ्य को बलपूर्वक सिद्ध करने की वृत्ति। इसमें मौलिक कार्य निहित होता है न कि केवल सम्मति मात्र। अनुसन्धान से केवल 'क्या' का ही बोध नहीं होता बल्कि 'कितना' का भी बोध होता है। अनुसन्धान के लिए मापन

---

5. "Research is simply a systematic and refined technique of thinking, employing specialized tools, instruments and procedures in order to obtain a more adequate solution of a problem than would be possible under ordinary means. It starts with a problem, collects data or facts, analyses these critically and reaches decisions based on the actual evidence. It involves original work instead of more exercise of personal opinion. It involves from a genuine desire to know rather than a desire to prove something. It is quantitative, seeking to know not only what, but how much and measurement is, therefore, a central feature of it."

—C. C. *Crawford*.

परमावश्यक है। श्री क्राफोर्ड अनुसन्धान की प्रक्रिया निम्नांकित प्रकार से मानते हैं—

१. अनुसन्धान का प्रारम्भ समस्या से होता है। इसके अन्तर्गत समस्या का चुनाव एवं उसका सीमांकन आ जाता है।
२. तदुपरान्त समस्या के समाधान हेतु तथ्यों का संकलन किया जाता है।
३. तथ्यों का संकलन हो जाने पर उनका विश्लेषण आलोचनात्मक दृष्टि से किया जाता है।
४. अन्त में, किसी निर्णय विशेष पर पहुँचा जाता है। इसे हम सामान्यीकरण (Generalization) कह सकते हैं। किन्तु यह निर्णय वास्तविक साक्षियों द्वारा समर्थित होता है।

(६) [6]डोनाल्ड स्लेसिगर तथा मेरी स्टीफेन्सन के विचार भी उल्लेखनीय हैं। उनके विचार से अनुसन्धान के अन्तर्गत सामान्यीकरण अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यह सामान्यीकरण ज्ञान मे विस्तार लाने के लिए हो सकता है, पूर्व-स्थापित ज्ञान को शुद्ध करने अथवा उसे प्रमाणित करने हेतु हो सकता है। चाहे वह ज्ञान किसी सिद्धान्त के निर्माण करने में सहायक हो अथवा व्यवहार पक्ष को सबल बनाने में।

(७) जेम्स हार्वे रॉबिन्सन[1] ने अनुसन्धान को एक अध्यवसायी खोज के रूप में माना है। इसकी उपमा प्राचीन आखेट से दी है। जिस प्रकार का परिश्रम पुरातन काल में आखेट अथवा शिकार के लिए अपेक्षित था, ठीक उसी प्रकार का श्रम *अनुसन्धानकर्ता के लिए आवश्यक है।*

इन सभी परिभाषाओं का सारांश यह है कि अनुसन्धान एक विधि-बद्ध ढंग से किसी समस्या का हल प्राप्त करने की क्रिया है। इसके अन्तर्गत समस्या का विश्लेषण एवं उसका हल प्राप्त करना मुख्य है। साथ ही यह हल एक

---

6 "*Research is the manipulation of things, concepts or* symbols for the purpose of generalizing to extend, correct or verify *knowledge-whether that knowledge aids in the* construction of a theory or in the practice of an art."

—*Donald Slesiger & Mary Stephenson.*

"Research is but diligent search which enjoys the high *savour of primitive hunting.*"

—*James Harvey Robinson.*

विशेष तरीके से प्राप्त किया जाता है। प्रत्येक अनुसन्धान का आरम्भ 'समस्या' की अनुभूति से होता है और उसका अन्त उस समस्या विशेष का हल प्राप्त करने के रूप मे होता है। अनुसन्धान का अन्तिम लक्ष्य कुछ सामान्य सत्यो को निर्धारित करना है। इसे हम अनुसन्धान का गन्तव्य स्थल कह सकते हैं।

अनुसन्धान मे लेखा-जोखा बड़ी सावधानी के साथ रखा जाता है। अनुसन्धान के अन्तर्गत प्रत्येक शब्द सुपरिभाषित होते हैं। जिस विधि का अनुसरण किया जाता है उसका विवरण स्पष्टतापूर्वक दिया जाता है। अनुसन्धान की सीमाओं अथवा न्यूनताओं का बिना किसी दुराव के उल्लेख किया जाता है। अनुसन्धान के अन्तर्गत प्राप्त होने वाले परिणामो को पर्याप्त वस्तुनिष्ठता के के साथ लिपि-बद्ध किया जाता है। अनुसन्धान-विषयक उपर्युक्त स्पष्टीकरण जॉन डब्ल्यू बेस्ट[8] ने अपने ग्रन्थ "रिसर्च इन एडूकेशन" मे दिया है।

वस्तुतः अनुसन्धानकर्ता तथा एक सामान्य व्यक्ति मे अन्तर केवल इस दृष्टि से है कि सामान्य व्यक्ति अपनी सीमाओ अथवा असफलताओं को सरलतापूर्वक स्वीकार नही करता जबकि अनुसन्धानकर्ता अपनी कमियों को बड़ी सावधानी के साथ इङ्गित करता है। वह अनुसन्धान में अपने वैयक्तिक पक्षों को प्रतिबिम्बित नही होने देता। आगे हम 'शिक्षा में अनुसन्धान' का अर्थ स्पष्ट करेंगे।

## शिक्षा में अनुसन्धान से क्या तात्पर्य है ?

मनुष्य की अन्तर्निहित शक्तियों का चरम विकास शिक्षा द्वारा सम्पन्न होता है। व्यापक अर्थ मे शिक्षा, जीवन की अविच्छिन्न प्रक्रिया है। हम जन्म से मृत्यु पर्यन्त शिक्षा ग्रहण करते हैं। चूंकि जीवन गतिशील (Dynamic) होता है और शिक्षा जीवन की एक क्रिया है अतः शिक्षा-प्रक्रिया भी स्वाभाविक रूप मे गतिशील प्रक्रिया (Dynamic process) है। प्रचलित अर्थ मे शिक्षा से तात्पर्य है—एक विधि-बद्ध एवं औपचारिक प्रक्रिया से। इसमें शिक्षार्थी, शिक्षक

---

8 Research is carefully recorded and reported. Every term is carefully defined, all procedures are described in detail, all limiting factors are recognized, all references are carefully documented, and all results are objectively recorded. All conclusions and generalizations are cautiously arrived at, with due consideration for all of the limitations of methodology, data collected, and errors of human interpretation."

—*John W. Best.*

एवं शिक्षालय का बोध होता है। किन्तु यह प्रक्रिया औपचारिक होने के साथ-साथ गतिशील (Dynamic) भी है। सारांश यह है कि सामान्य अर्थ में शिक्षा भी एक गत्यात्मक क्रिया है। इसमें कार्यों का यन्त्रवत् सम्पादन उपयुक्त नहीं है। जहाँ शिक्षा में यान्त्रिकता आ जाती है, वहीं शिक्षा का वास्तविक रूप तिरोहित हो जाता है। शिक्षालयों और कारखानों में कोई अन्तर नहीं रह जाता। शिक्षा एक व्यापार बन जाती है। वस्तुतः शिक्षा एक सतत, जागरूक एवं सचेष्ट प्रक्रिया है। इसमें क्षण भर की असावधानी भी हानिकारक सिद्ध हो सकती है। शिक्षा की इस प्रक्रिया को गतिशील बनाये रखने के लिए अनुसन्धान की आवश्यकता होती है। शिक्षा में अनुसन्धान द्वारा रूढ़ियों एवं अन्धविश्वासों का बहिष्कार सम्भव हो जाता है। शिक्षक एवं शिक्षा-शास्त्री परम्परा की लीक पीटने के दोष से मुक्त होते हैं। शिक्षण में नई गति आती रहती है। शिक्षक की क्रियाओं में यमाव अथवा मन्दता नहीं आ पाती।

एम० डब्ल्यू० ट्रैवर्स[9] ने शैक्षणिक-अनुसन्धान को व्यवहार-विज्ञान (Science of behaviour) का विकास कहा है। उनके अनुसार शैक्षणिक-अनुसन्धान एक ऐसी क्रिया है जिसके द्वारा शैक्षणिक-परिस्थितियों में नये-नये व्यवहारों की उत्पत्ति होती है। अभिप्राय यह है कि अनुसन्धान द्वारा नये व्यवहारों के प्रति संकेत प्राप्त होते हैं। अमुक शैक्षणिक-परिस्थिति में हमें क्या करना चाहिए—कौन-सी पद्धति अधिक प्रभावशाली होगी? किस मार्ग से चलना अधिक मितव्ययी होगा? आदि बातों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त होती है। नये तथ्यों एवं सत्यों की खोज शिक्षा के क्षेत्र में व्यवहारों से अधिक सम्बन्ध रखती है। अतः शिक्षा-अनुसन्धान से अभिप्राय है—ऐसे सत्यों की खोज करना जिनका व्यावहारिक रूप स्पष्ट हो।

डब्ल्यू० एस० मुनरो[10] के मत में शिक्षा-अनुसन्धान का उद्देश्य है शैक्षणिक-सिद्धान्तों एवं विधियों का प्रतिपादन। केवल तथ्यों का संग्रह कर लेना

---

9 "Educational Research is that activity which is directed towards the development of a science of behaviour in educational situations." —*M. W. Travers.*

10 "The final purpose of Educational research is to ascertain principles and develop procedures in the field of education; therefore, it should conclude by formulating principles or procedures. The mere collection and tabulation of facts is not research, though it may be preliminary to it or even a part thereof." —*W. S. Monroe*

अनुसन्धान नहीं कहलाता। यद्यपि अनुसन्धान की प्रारम्भिक अवस्था में तथ्यों का संकलन आवश्यक होता है, फिर भी इसे ही अनुसन्धान कहना भूल होगी। शिक्षा में अनुसन्धान से अभिप्राय है—उन समस्त वैज्ञानिक प्रयासों से जिनके द्वारा शैक्षणिक-समस्याओं का हल प्राप्त होता है, शैक्षणिक-प्रक्रियाओं पर नई रोशनी पड़ती है तथा शिक्षण-सम्बन्धी नये नियमों एवं सिद्धान्तों का प्रतिपादन सम्भव होता है। यहाँ पर वैज्ञानिक प्रयास (Scientific approach) से तात्पर्य है—वस्तुनिष्ठ (Objective), निष्पक्षपातपूर्ण एवं विधिवद् किये गए प्रयत्नों से।

## शिक्षा में क्रियात्मक-अनुसन्धान

शिक्षा में होने वाले अनुसन्धानों को मुख्यतः दो भागों में विभाजित किया जा सकता है:—

१. मौलिक-अनुसन्धान (Basic or Fundamental research)।

२. व्यवहृत-अनुसन्धान (Applied research)।

इन दो तरह के अनुसन्धानों में यह आवश्यक नहीं है कि अनुसन्धानकर्ता वे हों जो विद्यालयों से सीधे सम्बन्ध रखते हों। इस तरह के अनुसन्धान शिक्षा-विभाग अथवा प्रशिक्षण महाविद्यालय के स्नातकों एवं शिक्षक वर्ग तथा अधिकारियों द्वारा सम्पादित होते हैं। इसके लिए अनुसन्धान-केन्द्रों (Research-centres) की आवश्यकता होती है। यत्र-तत्र 'अनुसन्धान-ब्यूरो' खोले जाते हैं और अनुसन्धान-अधिकारों की देख-रेख में अनुसन्धानकर्ता कार्य करते हैं। इस प्रकार के अनुसन्धान का अपना महत्त्व है। किन्तु अनुसन्धान केवल अनुसन्धानकर्ताओं तक ही सीमित नहीं रहना चाहिए। इसके अन्तर्गत प्राप्त होने वाले परिणाम अथवा निष्कर्ष विद्यालयों तक पहुँचने चाहिए। जब तक ऐसा नहीं होता, शिक्षा में यान्त्रिकता आ जाती है। यह यान्त्रिकता प्रजातंत्रात्मक राष्ट्र के विद्यालयों की प्रगति के लिए अत्यन्त घातक है। मौलिक-अनुसन्धान तथा व्यवहृत-अनुसन्धान कुछ थोड़े से व्यावसायिक अनुसन्धानकर्ताओं (Professional researches) की पूँजी मात्र रह जाते हैं। इस प्रकार के अनुसन्धानों के परिणाम पत्रिकाओं तथा शोध-प्रबन्धों तक सीमित रहते हैं। फलस्वरूप अनुसन्धानों का अभीष्ट प्रभाव विद्यालयों की क्रियाओं अथवा कार्य-पद्धति पर नहीं पड़ पाता। इसीलिए 'क्रियात्मक-अनुसन्धान' का नारा बुलन्द किया जा रहा है।

शिक्षा में क्रियात्मक अनुसन्धान से तात्पर्य है :—

१. विद्यालय की दैनिक समस्याओं का विधिवत् अध्ययन हो।
२. अध्यापक, प्रधानाचार्य, विद्यालय के प्रबन्धक तथा निरीक्षक स्वयं अनुसन्धान में लगें।
३. दैनिक समस्याओं का अध्ययन विद्यालय में सुधार एवं प्रगति लाने के उद्देश्य से किया जाय।
४. सभी अभ्यासकर्त्ता (जैसे—अध्यापक, प्रधानाचार्य एवं निरीक्षक आदि) एक वैज्ञानिक दृष्टि अपनायें तथा शैक्षणिक परिस्थितियों में अपनी रुचियों, वैयक्तिक पक्षपातों तथा पूर्वाग्रहों पर पर्याप्त निरोध रखें।
५. विद्यालय की कार्य-पद्धति में प्रजातन्त्रात्मक मूल्यों को पर्याप्त स्थान मिले। किसी व्यक्ति विशेष को अनावश्यक एकतन्त्र—बौद्धिक अथवा सामाजिक क्षेत्र में—न प्राप्त हो।
६. अध्यापकों तथा प्रधानाचार्यों को अपने कर्तव्यों एवं उत्तरदायित्वों के प्रति चेतनता आवे। ताकि वे शैक्षणिक समस्याओं के प्रति संवेदनशील (Sensitive) बन सकें और उनका समुचित समाधान प्राप्त कर सकें।
७. अभ्यासकर्ता (अध्यापक, प्रधानाचार्य, निरीक्षक एवं व्यवस्थापक) अपने निर्णयों तथा कार्यों में सुधार एवं संशोधन वस्तुनिष्ठ दृष्टि से ला सकें।

क्रियात्मक-अनुसन्धान शिक्षा के क्षेत्र में विद्यालयों की गति-विधि को सुधारने तथा उसे एक नई दिशा प्रदान करने के निमित्त क्रान्तिकारी कदम है। आशा है, हमारे विद्यालयों के अध्यापक, प्रधानाचार्य, प्रबन्धक तथा निरीक्षक वर्ग इसका हार्दिक स्वागत करेंगे और इस प्रकार प्रजातन्त्र की सुरक्षा के प्रति अमूल्य सहयोग देंगे। भारतीय-विद्यालयों में क्रियात्मक-अनुसन्धान देश के भावी विकास एवं प्रगति का मंगलमय प्रतीक है।

## सारांश

क्रियात्मक-अनुसन्धान को एक नवीन आन्दोलन के रूप में समझना चाहिए। इसके द्वारा विद्यालयों एवं उनमें कार्य करने वाले अध्यापकों, प्रधानाचार्यों, प्रबन्धकों तथा निरीक्षकों की कार्य-पद्धति में सुधार लाना अभीष्ट होता है।

अनुसन्धान एक विधिवत् सम्पादित क्रिया है जिसके अन्तर्गत किसी समस्या का अध्ययन अत्यन्त सावधानीपूर्वक किया जाता है और कुछ सामान्य सत्यो की स्थापना की जाती है। शिक्षा में अनुसन्धान से तात्पर्य है—शिक्षा सम्बन्धी समस्याओं का विधिवत् अध्ययन। शिक्षा मे क्रियात्मक-अनुसन्धान मुख्य रूप से विद्यालयों की गति-विधि एवं क्रिया-कलापो में अपेक्षित विकास एवं सुधार लाने के निमित्त एक नई हलचल के रूप मे उपस्थित हुआ है। इसके द्वारा विद्यालयो के अभ्यासकर्ताओं-अध्यापकों, निरीक्षकों, प्रधानाचार्यों तथा प्रबन्धकों की कार्य-प्रणाली को उन्नतिशील बनाया जाता है।

# २

# शिक्षा में क्रियात्मक-अनुसन्धान तथा परम्परागत अनुसन्धान में अन्तर

> **"Placing an exaggerated value on what may happen as a consequence of publishing traditional research studies of educational problems is one of the occupational diseases of pedagogues who are strongly disposed to over-estimate the extent to which reading will change behaviour."**
>
> *Stephen M. Corey*

\+ + +

> **"When a person defines the problem, hypothesizes actions that may help him cope with it, engages in these actions, studies the consequences, and generalizes from them, he will more frequently internalize the experience than when all this is done for him by somebody else, and he reads about it."**
>
> —*Ibid*

गत अध्याय से यह स्पष्ट है कि क्रियात्मक-अनुसन्धान मौलिक-अनुसन्धान से भिन्न है। मौलिक-अनुसन्धान को प्रायः परम्परागत-अनुसन्धान की संज्ञा दी जाती है। प्रस्तुत अध्याय में क्रियात्मक-अनुसन्धान तथा परम्परागत अनुसन्धान के भेद को कुछ विस्तार के साथ विवेचित किया गया है।

परम्परागत अनुसन्धान का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। इसके अन्तर्गत सामान्य सत्यों एवं सिद्धान्तों की स्थापना को परम उद्देश्य माना जाता है। अनुसन्धान-

कर्ता वे व्यक्ति होते हैं जिनका विद्यालय से प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं होता। अनुसन्धानकर्ताओं को शोध-कार्य की समाप्ति पर प्रायः उपाधि प्राप्त होती है। हमारे विश्वविद्यालयों के शिक्षा-विभागों तथा शिक्षक-प्रशिक्षण महाविद्यालयों में इस प्रकार के अनुसन्धान की बड़ी धूम है। एम० एड० (मास्टर ऑफ एडूकेशन) अथवा एम० ए० (शिक्षा) की परीक्षाओं में आंशिक रूप से शोध-कार्य अनिवार्य है। इसके अतिरिक्त शिक्षा में डाक्टर ऑफ एडूकेशन, डाक्टर ऑफ फिलॉसफी अथवा डाक्टर ऑफ लेटरस् की उपाधि के लिए शोध-ग्रन्थ तैयार किये जाते हैं। ये सभी शोध परम्परागत-अनुसन्धान की श्रेणी में आते हैं। क्रियात्मक-अनुसन्धान का क्षेत्र विद्यालयों तथा उनकी कार्य-पद्धति तक सीमित है। इसमें अनुसन्धानकर्ता-अध्यापक, प्रधानाचार्य, निरीक्षक तथा प्रबन्धक स्वयं होते हैं।

कुछ लोगों की यह धारणा है कि अनुसन्धान केवल विशेषज्ञों के वश की बात है। शिक्षक, प्रधानाध्यापक तथा विद्यालय-निरीक्षक तो अनुसन्धान के उपभोक्ता मात्र हैं। वे अनुसन्धान के उत्पादक नहीं हो सकते। उनमें अनुसन्धान के लिए अपेक्षित तकनीकी कुशलता का अभाव होता है। कहना न होगा कि आजकल के इस वैज्ञानिक युग में इस प्रकार की धारणा सर्वथा भ्रान्त एवं मिथ्या है। अनुसन्धान के विशेषज्ञों की आवश्यकता तो है किन्तु बड़े पैमाने पर अनुसन्धान के परिणामों को शिक्षा में सम्प्रान्त करने के लिए केवल विशेषज्ञों से काम नहीं चल सकता। प्रजातंत्रात्मक राष्ट्र की शासन-व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के लिए कुशल नागरिकों की आवश्यकता है और यह कार्य पुराने ढंग के रूढ़िवादी विद्यालयों से सम्भव नहीं है। आज के विद्यालयों में समाज की बदलती हुई आवश्यकताओं को पूरा करने की क्षमता होनी चाहिए। इसके लिए विद्यालय के कर्णधारों—प्रधानाचार्य, शिक्षक-वर्ग तथा व्यवस्थापकों को अनुसन्धान की ओर ले जाना होगा। उनमें अनुसन्धान के लिए अपेक्षित वैज्ञानिक दृष्टि प्रदान करनी होगी। आज परम्परागत अनुसन्धान से विद्यालय की नित्य नूतन आवश्यकताओं को संतुष्ट नहीं किया जा सकता। इसीलिए क्रियात्मक-अनुसन्धान की लहर तीव्र हो उठी है।

परम्परागत-अनुसन्धान तथा क्रियात्मक-अनुसन्धान में कोई विरोध नहीं है। दोनों एक दूसरे के पूरक के रूप में भी चल सकते हैं। हाँ, इतना अवश्य है कि परम्परागत-अनुसन्धान शिक्षा के अभ्यासकर्ताओं—अध्यापक, प्रधानाचार्य तथा निरीक्षकों एवं प्रबन्धकों—और अनुसन्धानकर्ताओं के बीच कोई शृंखला नहीं स्थापित कर पाता। इसका फल यह होता है कि शिक्षा के

क्षेत्र में होने वाले अनुसन्धान शिक्षा-संस्थाओं के लिए लाभदायी नहीं हो पाते। क्रियात्मक-अनुसन्धान इस तरह शिक्षकों तथा अनुसन्धानकर्ताओं के बीच बढ़ती हुई दूरी को कम करने का अद्वितीय प्रयास है।

परम्परागत एवं क्रियात्मक-अनुसन्धान में मुख्य अन्तर निम्नांकित दृष्टियों से है :—

१. उद्देश्य की दृष्टि से।
२. समस्या एवं उसके महत्व की दृष्टि से।
३. मूल्यांकन हेतु प्रयुक्त होने वाले मानदण्ड की दृष्टि से।
४. अनुसन्धान के लिए आधार-भूत न्यादर्श (Sample) की दृष्टि से।
५. सामान्यीकरण की दृष्टि से।
६. अनुसन्धान की रूप-रेखा (Design) का अनुसरण करने की दृष्टि से।
७. कार्यकर्ताओं की दृष्टि से।

अब हम इन्हीं को आगे स्पष्ट करेंगे।

(१) उद्देश्य की दृष्टि से—परम्परागत-अनुसन्धान का उद्देश्य चरम सत्यों की खोज है। शिक्षण-पद्धतियों, सीखने की विधियों तथा अन्य शैक्षणिक समस्याओं से सम्बन्धित नये सत्यो का अन्वेषण परम्परागत-अनुसन्धान अथवा मौलिक-अनुसन्धान द्वारा होता है। क्रियात्मक-अनुसन्धान का उद्देश्य विद्यालय की गतिविधि में सुधार एवं प्रगति लाना है; शिक्षकों, प्रधानाचार्यों, निरीक्षकों तथा प्रबन्धकों के निर्णयों तथा कार्य-पद्धतियों में संशोधन एवं प्रभावशालीनता लाना है। परम्परागत-अनुसन्धान का विद्यालयों से परोक्ष सम्बन्ध है जबकि क्रियात्मक-अनुसन्धान विद्यालय के लिए विद्यालय के अभ्यासकर्ताओं द्वारा सम्पादित व्यापार है। परम्परागत-अनुसन्धान में शिक्षा-विषयक नये सिद्धान्तो, नियमों, तथ्यों अथवा सत्यों की उपलब्धि होती है जबकि क्रियात्मक-अनुसन्धान मे विद्यालय की क्रियाओं एवं कार्य-प्रणाली मे विकास एवं विस्तार लाने के लिए प्रयोग किये जाते हैं। परम्परागत-अनुसन्धान का उद्देश्य शिक्षा के क्षेत्र में नवीन ज्ञान की खोज करना है। क्रियात्मक-अनुसन्धान व्यवहार पक्ष पर बल देता है और इसका एक मात्र उद्देश्य विद्यालय तथा विद्यालय से सम्बन्धित व्यक्तियों के निर्णयों एवं कार्य शैली में सुधार लाना है।

(२) समस्या एवं उसके महत्व की दृष्टि से—परम्परागत-अनुसन्धान की समस्या का क्षेत्र व्यापक होता है। यह समस्या सामान्य महत्व की होती है। किसी विद्यालय विशेष की समस्या न होकर शिक्षा-क्षेत्र की व्यापक समस्या होती है। क्रियात्मक-अनुसन्धान मे समस्या का क्षेत्र संकुचित होता है। यह

समस्या केवल विद्यालय विशेष की होती है। इस प्रकार समस्या का महत्व केवल एक विद्यालय के लिए है। इस पर होने वाला अनुसन्धान उस विद्यालय पर ही सीमित होता है, अध्यापक अथवा प्रधानाचार्य स्वयं अनुसन्धानकर्ता होते हैं। परम्परागत अनुसन्धानकर्ता समस्या का चुनाव सामान्य शैक्षणिक परिस्थितियों को ध्यान में रखकर करता है जबकि क्रियात्मक-अनुसन्धान में परिस्थिति विशेष को दृष्टिगत रखकर शोध प्रारम्भ किया जाता है। अध्यापक अथवा प्रधानाचार्य विद्यालय की प्रगति को सामने रखते हुए समस्या का चयन करते हैं। वे समस्या के समाधान हेतु सचेष्ट होते हैं। परम्परागत-अनुसन्धान में समस्या का अध्ययन नये तथ्यों अथवा सत्यों की खोज करने के उद्देश्य से किया जाता है।

(३) मूल्यांकन हेतु प्रयुक्त होने वाले मानदण्ड की दृष्टि से—परम्परागत-अनुसन्धान का मूल्यांकन करते समय यह देखा जाता है कि शोध द्वारा प्राप्त परिणाम ज्ञान क्षेत्र का विस्तार किस हद तक करने में समर्थ हैं। यदि उनके द्वारा ज्ञान के नये कपाट नहीं खुलते तो उनका कुछ भी महत्त्व नहीं है। इसीलिए परम्परागत-अनुसन्धान को मौलिक-अनुसन्धान का नाम दिया गया है। इस प्रकार के प्रत्येक अनुसन्धान की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि शोध द्वारा पहुँचे हुए निष्कर्ष शिक्षा के क्षेत्र में नये तथ्यों एवं सत्यों पर प्रकाश डालें। क्रियात्मक-अनुसन्धान की सफलता का मानदण्ड विद्यालय की प्रतिदिन की कार्य-प्रणाली में सुधार एवं प्रगति का दृष्टिगोचर होना है। यदि विद्यालय यन्त्रवत् कार्य शैली को अपनाता है, जिस तरह की कार्य-प्रणाली अनुसन्धान के पूर्व थी, यदि उसके स्वरूप में कोई परिवर्तन नहीं आता तो क्रियात्मक-अनुसन्धान असफल समझा जायेगा। विद्यालय की गतिविधि में सुधार होने के साथ साथ उसके शिक्षकों, प्रधानाचार्य तथा प्रबन्धक के सोचने तथा कार्य करने के तरीकों में भी परिवर्तन आना चाहिए। क्रियात्मक-अनुसन्धान की यह महती विशेषता है।

(४) अनुसन्धान के लिए आधार-भूत न्यादर्श (Sample) की दृष्टि से—प्रत्येक अनुसन्धान का आधार जनसंख्या (Population) अथवा न्यादर्श (Sample) है। अनुसन्धान में जनसंख्या का व्यापक अर्थ होता है। इससे किसी भी वृहद् समुदाय का बोध होता है। शर्त यह है कि वह वृहद समुदाय अनुसन्धान के लिए चुनी हुई समस्या से घनिष्ठ रूप में सम्बन्धित हो। उदाहरणार्थ आगरा जिले की ७वीं कक्षा के छात्र किसी अनुसन्धान के लिए जनसंख्या कहे जा सकते हैं। इसके लिए यह आवश्यक है कि अनुसन्धान के लिए चुनी हुई समस्या का इन छात्रों से सम्बन्ध होना चाहिए। यदि अनुसन्धान का विषय है—"आगरा जिले के ७वीं कक्षा के छात्रों की अंग्रेजी तथा हिन्दी में योग्यता"—

तो आगरा जिले की ७वीं कक्षा के समस्त छात्र अनुसन्धान की जनसंख्या (Population) होंगे। किन्तु व्यावहारिक एवं आर्थिक कठिनाइयों के कारण सम्पूर्ण जनसंख्या को अनुसन्धान का विषय बनाना मुश्किल होता है। मितव्ययता की दृष्टि से अनुसन्धानकर्ताओं ने न्यादर्श लेने (Sampling) की विधि का उपयोग किया है। इसमें इस बात की सावधानी बरती जाती है कि न्यादर्श (Sample) पूरी जनसंख्या (Population) का प्रतिनिधि हो। यदि न्यादर्श (Sample) सम्पूर्ण जनसंख्या का प्रतिनिधित्व नहीं करता तो उस पर किया गया शोध विश्वसनीय एवं वैध न होगा।

परम्परागत-अनुसन्धान में जनसंख्या एवं न्यादर्श का अत्यधिक महत्व है। यदि न्यादर्श (Sample) जनसंख्या अथवा वृहद समुदाय के समस्त गुणों को प्रतिबिम्बित नहीं करता तो उस पर अनुसन्धान के परिणामों का सामान्यीकरण दोष-पूर्ण हो जाएगा। इसीलिए इस प्रकार के अनुसन्धानों में न्यादर्श का चुनाव अनेक वैज्ञानिक तरीकों से किया जाता है और इस बात के लिए सतर्क रहना पड़ता है कि न्यादर्श जनसंख्या के प्रतिनिधित्व की क्षमता रखे और उसमें किसी प्रकार का दोष न हो। क्रियात्मक-अनुसन्धान में जनसंख्या (Population) एवं न्यादर्श (Sample) का प्रश्न ही नहीं उठता। जो कुछ भी विद्यालय की सीमा में है उसे अनुसन्धान का विषय बनाया जा सकता है। फलस्वरूप विद्यालय के छात्र अथवा अध्यापक अनुसन्धान की जनसंख्या बन जाते हैं। उदाहरणार्थ 'प्रधानाचार्य अपने अध्यापकों में सहयोग का भाव विकसित करने के लिए' क्रियात्मक अनुसन्धान की योजना रख सकता है। इसमें अनुसन्धान की जनसंख्या उसके विद्यालय के शिक्षक माने जाएँगे। इसे ही हम न्यादर्श भी कह सकते हैं। इसी प्रकार कोई अध्यापक अपनी ८ वीं कक्षा के छात्रों में अंग्रेजी तथा हिन्दी के उच्चारणों को शुद्ध करने के लिए क्रियात्मक-अनुसन्धान की योजना तैयार कर सकता है। इस अनुसन्धान में उस अध्यापक की ८ वीं कक्षा के समस्त छात्र जनसंख्या अथवा न्यादर्श कहलाएँगे। स्मरणीय है कि परम्परागत अनुसन्धान में जनसंख्या अथवा न्यादर्श का आकार वृहद होता है जबकि क्रियात्मक-अनुसन्धान में जनसंख्या अथवा न्यादर्श का आकार छोटा होता है।

(२) सामान्यीकरण की दृष्टि से—*सामान्यीकरण (Generalization)* से तात्पर्य है सामान्य नियम बनाना अथवा सामान्य निष्कर्ष निर्गमित करना। परम्परागत-अनुसन्धान में सामान्यीकरण का बहुत महत्व होता है। इसमें प्रत्येक शोधकर्ता किसी न किसी प्रकार का सामान्यीकरण अवश्य निर्गमित करता है। वस्तुतः परम्परागत अनुसन्धान का यह चरम लक्ष्य है। न्यादर्श पर किये गये अध्ययन को पूरी जनसंख्या पर लागू किया जाता है। अनुसन्धान की सफ-

लता का यह सूचक है। किन्तु न्यादर्श के आधार पर पूरी जनसंख्या के बारे में सामान्यीकरण तभी सम्भव है जबकि न्यादर्श उस जनसंख्या का सच्चा प्रतिनिधि हो। परम्परागत-अनुसन्धान मे सामान्यीकरण अत्यन्तावश्यक है परन्तु उस सामान्यीकरण की विश्वसनीयता एवं वैधता इस बात पर आश्रित है कि न्यादर्श सम्पूर्ण जनसंख्या के गुणों को अपने द्वारा प्रकट करे। सामान्यीकरण की प्रक्रिया को अधोलिखित प्रकार से प्रदर्शित किया जा सकता है :—
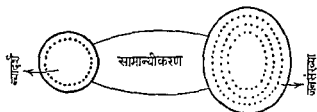
प्रत्येक अनुसन्धानकर्ता को इस बात के लिए सचेष्ट रहना पड़ता है कि सामान्यीकरण सही, विश्वसनीय तथा वैध हो। इसके लिए उसे न्यादर्श (Sample) के चुनाव मे सतर्कता बरतनी पड़ती है ताकि पूरी जनसंख्या का प्रतिनिधित्व उसके द्वारा हो सके।

क्रियात्मक-अनुसन्धान में इस प्रकार के सामान्यीकरण की आवश्यकता नहीं होती। जैसा कि पहले कहा जा चुका है—क्रियात्मक-अनुसन्धान का उद्देश्य कार्य-प्रणाली में संतोषप्रद सुधार अथवा प्रगति लाना है, न कि कुछ सामान्य नियमों का निर्धारण। स्टीफेन एम० कोरी ने यह बताया है कि यदि क्रियात्मक-अनुसन्धान में किसी तरह के सामान्यीकरण के लिए स्थान है तो वह निम्नांकित मान्यता पर आधारित होगा—

मान्यता—"जिस विद्यालय मे क्रियात्मक-अनुसन्धान हो रहा है उसमें अग्रिम वर्षों के छात्र अथवा अध्यापक उसी तरह के होंगे जैसा कि अनुसन्धान के समय उपलब्ध हैं।" उदाहरणार्थ : एक अध्यापक अंग्रेजी तथा हिन्दी के उच्चारणों को शुद्ध करने के लिए अपने विद्यालय की ८ वीं कक्षा के छात्रों को अनुसन्धान का विषय बनाता है। यहाँ अनुसन्धान के उपरान्त जो भी 'तरीके' वह प्रभावशाली घोषित करता है, वे उसके विद्यालय के उन्हीं छात्रों पर लागू किये जा सकते हैं। किन्तु यदि अध्यापक यह मान ले कि उस

विद्यालय में आगामी ४ वर्षों—सन् १९९६, १९९७, १९९८ तथा १९९९ में इसी प्रकार के छात्र आयेंगे तो वह अपने निष्कर्षों को सामान्यीकृत बना सकता है और यह कह सकता है कि आगामी वर्षों में आने वाले छात्रों पर भी उनके उच्चारण को शुद्ध करने हेतु वही तरीके अपनाये जा सकते हैं जो प्रस्तुत अनुसन्धान में अपनाये गये हैं। इस प्रकार के सामान्यीकरण को स्टीफेन एम० कोरी ने लम्बात्मक सामान्यीकरण (Vertical generalization) का नाम दिया है तथा परम्परागत-अनुसन्धान के अन्तर्गत प्राप्त होने वाले सामान्यीकरण को पार्श्वीय सामान्यीकरण (Lateral generalization) कहा है। इन सामान्यीकरण के ढंगों को इस प्रकार अभिव्यक्त किया जा सकता है—
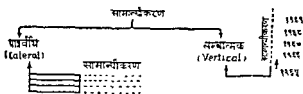
लम्बात्मक सामान्यीकरण में विस्तार (Extension) की दिशा भविष्य की ओर आकृष्ट होती है जबकि पार्श्वीय सामान्यीकरण में विस्तार की दिशा वर्तमान की ओर होती है। एक में वृहद् समुदाय (Population) की कल्पना भविष्य के सन्दर्भ में की जाती है तो दूसरे में वृहद् समुदाय की कल्पना तत्कालीन समूहों के रूप में की जाती है। परम्परागत-अनुसन्धान में शोध का विषय—"उत्तर प्रदेश की नवीं कक्षा के छात्रों में भावात्मक एकता" होने पर अनुसन्धानकर्ता अध्ययन हेतु एक प्रतिनिधि न्यादर्श चुनेगा और अपने प्राप्त निष्कर्षों को छात्रों की पूरी जनसंख्या पर लागू करेगा। इस तरह के सामान्यीकरण को पार्श्वीय (Lateral) सामान्यीकरण कहा जाएगा। क्रियात्मक-अनुसन्धान में सामान्यीकरण भावी छात्रों की जनसंख्या पर आधारित होता है और सामान्यीकरण किसी विद्यालय विशेष से सम्बद्ध होता है। अतः इसे लम्बात्मक (Vertical) सामान्यीकरण कहेंगे।

(६) *अनुसन्धान की रूपरेखा (Design) का अनुसरण करने की दृष्टि से*—प्रत्येक अनुसन्धान में इस बात की आवश्यकता होती है कि शोध-कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व उसकी रूपरेखा (Design) तैयार कर ली जाए जिससे अनुसन्धान की कार्य-प्रणाली के सम्बन्ध में कोई संशय न रहे। इस रूपरेखा को कार्य की

योजना (Plan of action or Line of action) अथवा अनुसन्धान की संरचना (Design of research) आदि नामों से पुकारा जा सकता है। परम्परागत-अनुसन्धान में इस प्रकार की रूपरेखा का सर्वाधिक महत्व है। अनुसन्धानकर्ता को इस रूपरेखा का अनुसरण कठोरतापूर्वक करना पड़ता है। अनुसन्धान प्रारम्भ करने से पूर्व शोध का संक्षिप्त-विवरण ( Synopsis ) प्रस्तुत करना पड़ता है। इस संक्षिप्त विवरण में शोध की रूपरेखा (Design) बहुत सोच-विचार कर दी जाती है। अनुसन्धान के निर्देशक अनुसन्धानकर्ता से यह अपेक्षा करते हैं कि उस प्रस्तुत रूपरेखा का अनुसरण ठीक प्रकार किया जाए। क्रियात्मक-अनुसन्धान में शोध की कार्य-पद्धति में हेर-फेर किया जा सकता है, अतः शोध की रूपरेखा का अनुसरण लचीला होता है। सुविधा के लिए अनुसन्धान-कार्य की योजना निर्मित कर ली जाती है किन्तु उसका पालन कठोरतापूर्वक नहीं होता।[1] स्टीफेन एम॰ कोरी के अनुसार क्रियात्मक-अनुसन्धान की प्रारम्भिक रूपरेखा अनुल्लंघनीय नहीं होती। समस्या की परिभाषा, उपकल्पना, एवं उसकी परीक्षण-विधि आदि में परिवर्तन होता रहता है। अनुसन्धान जैसे-जैसे आगे बढ़ता है, परिस्थितियों के अनुसार उसकी रूपरेखा में परिवर्तन लाना आवश्यक हो जाता है। यदि प्रारम्भिक रूपरेखा का अनुसरण कठोरतापूर्वक किया गया तो आगे चलकर अनुसन्धान में असङ्गति आ सकती है। कहने का तात्पर्य यह है कि क्रियात्मक-अनुसन्धान की रूपरेखा वास्तविक परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तनशील होती है।

(७) कार्यकर्ताओं की दृष्टि से—परम्परागत-अनुसन्धान में कार्यकर्ता प्रायः वे व्यक्ति होते हैं जिनका विद्यालयों से प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं होता है। वे किसी उपाधि अथवा प्रतिष्ठा प्राप्त करने की प्रेरणा से अनुसन्धान करते हैं। अधिक-

---

1 "The initial design of the action research cannot be inviolable. The definition of the problem, the hypothesis to be tested, and the methods to be employed in testing the hypotheses undergo modification as interim results are validated or invalidated in practice and new hypotheses and methods are suggested by the developing situation. The exact pattern of enquiry is not known definitely and in advance. + + + If an initial design is treated with too much respect, researcher may not be sufficiently sensitive to the developing irrelevance of this design to the ongoing action situation."

—*Stephen M. Corey.*

तर अनुसन्धानकर्ता, अनुसन्धान-अधिकारियों के नीचे कार्य करते हैं। इसके अतिरिक्त शिक्षक-प्रशिक्षण महाविद्यालयों में एम०एड० अथवा एम०ए० (शिक्षा) के छात्र, विश्वविद्यालयों में भी इसी कोटि के छात्र अथवा पी-एच० डी० एवं डी० लिट० के स्नातक अनुसन्धानकर्ता होते हैं। इन लोगों का विद्यालयों से सीधा सम्बन्ध नहीं होता। क्रियात्मक-अनुसन्धान में कार्यकर्ता वे व्यक्ति होते हैं जिनका विद्यालय से प्रत्यक्ष सम्बन्ध होता है। वे विद्यालय की कार्य-प्रणाली में सुधार एवं विकास लाने की प्रेरणा से अनुसन्धान-कार्य में संलग्न होते हैं। इस प्रकार क्रियात्मक-अनुसन्धान के अन्तर्गत शोधकर्ता अध्यापक, प्रधानाचार्य, प्रबन्धक तथा निरीक्षक कोई भी हो सकता है। यह शोध-कार्य व्यक्तिगत अथवा सामूहिक दोनों रूपों में किया जा सकता है।

क्रियात्मक तथा परम्परागत-अनुसन्धान दोनों ही शिक्षा के लिए महत्वपूर्ण हैं। इन दोनों में विधि की दृष्टि से कोई विशेष अन्तर नहीं है। दोनों ही वैज्ञानिक चिन्तन पर आधारित होते हैं। दोनो प्रकार के अनुसन्धानों में किसी समस्या का समाधान अभीष्ट होता है। वस्तुतः जॉन डिवी तथा केली द्वारा प्रतिपादित अनुसन्धान की पद्धति दोनों प्रकार के अनुसन्धानों में परिलक्षित होती है। उनके द्वारा बताए हुए अधोलिखित सोपान दोनों तरह के अनुसन्धानों में विद्यमान हैं :—

अनुसन्धान अथवा वैज्ञानिक पद्धति के अन्तर्गत सोपान :—

१—समस्या का प्रत्यक्षीकरण एवं उसका सीमाङ्कन (Perception and definition of the problem)

२—उपकल्पना का निर्माण (Formulation of hypothesis)

३—उपकल्पना का परीक्षण (Testing of hypothesis)

४—सामान्यीकरण एवं निष्कर्ष प्रतिपादन (Formulation of generalization and conclusions)

इन चार सोपानो को प्रत्येक अनुसन्धान में पाया जा सकता है। वस्तुतः परम्परागत-अनुसन्धान एवं क्रियात्मक-अनुसन्धान में इन मौलिक सोपानों की दृष्टि से कोई अन्तर नहीं है। जॉन डब्ल्यू० वेस्ट ने ठीक ही कहा है कि क्रियात्मक एवं मौलिक अथवा परम्परागत-अनुसन्धान में कोई अन्तर्द्वन्द नहीं है। उनके अनुसार दोनों ही अनुसन्धान में उच्च कोटि की वस्तु-निष्ठता (Objectivity) अपेक्षित है तथा दोनों की विधि एक जैसी होती है। मौलिक अथवा

परम्परागत-अनुसन्धान व्यावसायिक दक्षता लाने के लिए परमावश्यक है। कोई भी व्यवसाय बिना मौलिक-अनुसन्धान के वास्तविक पेशे का रूप धारण कर सकता है।[1]

कहने का तात्पर्य यह है कि क्रियात्मक-अनुसन्धान का प्रचार करते समय मौलिक-अनुसन्धान के महत्व को भुला देना अनुचित है। शिक्षा-विज्ञान की प्रगति मौलिक-अनुसन्धान के अभाव में शिथिल हो जाएगी और शिक्षा एक गतिशील (Dynamic) क्रिया न बनकर रूढ़ियों की सीमा में आबद्ध हो जाएगी। दोनों प्रकार के अनुसन्धानों को साथ-साथ पल्लवित एवं पुष्पित करना चाहिए। तभी शिक्षा रूपी वृक्ष में सुन्दर फल लगेंगे और शिक्षा के विकास एवं विस्तार की दृष्टि से उसमें एक अनुपम शक्तिदायिनी सामर्थ्य होगी।

## सारांश

क्रियात्मक-अनुसन्धान तथा परम्परागत अनुसन्धान में जो अन्तर है उसे आगे की तालिका द्वारा प्रकट किया गया है। प्रस्तुत अध्याय में इन्हीं अन्तरों की व्याख्या की गई है।

---

1 "Is there a conflict between fundamental research and action research ? Actually there is none. The difference is in emphasis, not in method or spirit. Each type is committed to the high standards of scientific objectivity and scholarship. The graduate student should understand and appreciate fundamental research as a part of his professional training, and should understand that sound educational theory is built on fundamental research. No vocation can be a profession unless its great body of knowledge is based upon sound theory which, in turn, comes from fundamental research. Teachers should be familiar with the findings of fundamental research particularly in their areas of specialization. Without this understanding they are merely mechanics or craftsmen, and have no right to be considered professional practioners."

—*John W. Best.*

| अन्तर कैसे ? | क्रियात्मक-अनुसन्धान | परम्परागत-अनुसन्धान |
| --- | --- | --- |
| (अ) उद्देश्य | | |
| | १—विद्यालयों की कार्य-पद्धति में सुधार एवं प्रगति लाना। | १—नये सत्यों एवं तथ्यों की स्थापना करना। |
| | २—विद्यालय के अभ्यासकर्ताओं जैसे अध्यापकों, प्रधानाचार्यों निरीक्षकों एवं प्रबन्धकों में वैज्ञानिक चिन्तन का भाव जाग्रत करना। | २—शिक्षा के क्षेत्र में नये सिद्धान्तों एवं प्रत्ययों के प्रतिपादन द्वारा ज्ञान-वृद्धि करना। |
| (ब) अनुसन्धान की समस्या एवं उसका महत्व | | |
| | ३—अनुसन्धान की समस्या विद्यालय विशेष से सम्बन्धित होती है। | ३—अनुसन्धान की समस्या शिक्षा के क्षेत्र में सामान्य परिस्थितियों से उत्पन्न होती है। |
| | ४—समस्या का क्षेत्र संकुचित होता है। | ४—समस्या का क्षेत्र व्यापक होता है। |
| | ५—समस्या का महत्व विद्यालय में सुधार अथवा परिवर्तन लाने की दृष्टि से होता है। | ५—समस्या का महत्व शिक्षा विषयक नये सत्यों एवं तथ्यों को प्रकाशित करने की दृष्टि से होता है। |
| | ६—समस्या का स्वरूप व्यवहार में आने वाली कठिनाइयों के अधिक निकट होता है। | ६—समस्या का सैद्धान्तिक (Theoretical) कठिनाइयों से अधिक सम्बन्ध होता है। |
| (स) मूल्यांकन हेतु प्रयुक्त होने वाला मानदण्ड | | |
| | ७—इस प्रकार के अनुसन्धान की सफलता का मानदण्ड विद्यालय की कार्य-पद्धति में परिवर्तन होता है। | ७—नये ज्ञान अथवा सत्य की प्राप्ति इस प्रकार के अनुसन्धान की सत्य-सिद्धता का सबसे बड़ा प्रमाण होता है। |

| | |
|---|---|
| ८—साथ ही अभ्यासकर्ताओं को कार्य-प्रणाली में परिवर्तन आना भी इसकी सफलता का द्योतक समझा जाता है। | ८—अनुसन्धानकर्ता की सफलता उसकी उपाधि अथवा मान-पत्रों के रूप में आँकी जाती है। |

(ब) अनुसन्धान के लिए आधार-भूत न्यादर्श (Sample)

| | |
|---|---|
| ९—न्यादर्श अथवा जनसंख्या अत्यन्त छोटे आकार के होते हैं। | ९—जनसंख्या से न्यादर्श का चुनाव किया जाता है और दोनों का आकार अपेक्षाकृत् वृहद् होता है। |
| १०—न्यादर्श के चुनाव की कोई समस्या नहीं होती। | १०—न्यादर्श का चुनाव सतर्कतापूर्वक किया जाता है ताकि पूरी जनसंख्या का सच्चा प्रतिनिधि हो। |

(ध) सामान्यीकरण

| | |
|---|---|
| ११—सामान्यीकरण की विशेष आवश्यकता नहीं होती। | ११—सामान्यीकरण अनुसन्धान का प्राण है। बिना इसके अनुसन्धान महत्वहीन होगा |
| १२—सामान्यीकरण यदि सम्भव है तो वह भविष्य की ओर झुका होता है। इस प्रकार के सामान्यीकरण को लम्बात्मक (Vertical) कहा जा सकता है। | १२—सामान्यीकरण का स्वरूप वर्तमान परिस्थितियों से सम्बन्धित होता है। इसे पार्श्वीय - सामान्यीकरण (Lateral generalization) की संज्ञा दी जाती है। |

(र) अनुसन्धान की रूपरेखा का अनुसरण

| | |
|---|---|
| १३—अनुसन्धान की रूपरेखा का अनुसरण लचीला (Flexible) होता है। | १३—अनुसन्धान की रूपरेखा का अनुसरण कठोर (Rigid) होता है। |
| १४—अनुसन्धान की रूपरेखा परिवर्तनशील होती [illegible] | १४—अनुसन्धान की रूपरेखा में परिवर्तन [illegible] |

| | |
|---|---|
| १५—अनुसन्धान की रूपरेखा प्रस्तुत करने में कोई तकनीकी ज्ञान की विशेष आवश्यकता नही होती। | १५—अनुसन्धान की रूपरेखा प्रस्तुत करने में विशेष तकनीकी ज्ञान अपेक्षित होता है। |

(ख) कार्यकर्ता

| | |
|---|---|
| १६—अनुसन्धानकर्ता विद्यालय के अध्यापक, प्रधानाचार्य, प्रबन्धक तथा निरीक्षक स्वयं होते हैं। | १६—अनुसन्धानकर्ता शिक्षा-विषय के स्नातक, प्रशिक्षण महाविद्यालयों के प्राध्यापक अथवा अनुसन्धान अधिकारी होते हैं। |
| १७—अनुसन्धानकर्ताओं का विद्यालय से प्रत्यक्ष सम्बन्ध होता है। | १७—अनुसन्धानकर्ताओं का विद्यालय से परोक्ष सम्बन्ध होता है। |
| १८—अनुसन्धानकर्ता का लक्ष्य अपने तथा विद्यालय की कार्य-पद्धति में सुधार एवं प्रगति लाना होता है। | १८—अनुसन्धानकर्ता का उद्देश्य शिक्षा के क्षेत्र में नये सिद्धान्तो एवं सत्यों की खोज करना होता है। |

वैज्ञानिक पद्धति की दृष्टि से क्रियात्मक तथा परम्परागत-अनुसन्धान समान हैं। वैज्ञानिक पद्धति के जो सोपान हैं वे दोनों प्रकार के अनुसन्धानों में समान रूप से लागू होते हैं।

## ३

# क्रियात्मक-अनुसन्धान की ऐतिहासिक पृष्ठ-भूमि

"The method of scientific inquiry to reach better judgments about school practices was closely related to the early history of psychology."

—*Stephen M. Corey*

"While certain kinds of problems can be solved only by highly trained research specialists, other problems of equal importance can be solved only as teachers, supervisors and principals become researchers. This represents a highly important extension of the role of research in education and it requires some important developments in research procedures."

—*Hollis L. Caswell.*

क्रियात्मक-अनुसन्धान प्रजातन्त्रात्मक-युग की उपज है। शिक्षा में इस प्रकार के अनुसन्धानों का सूत्रपात अमेरिका में हुआ है। आज से लगभग दो दशक पूर्व 'क्रियात्मक-अनुसन्धान' का आन्दोलन ज़ोर पकड़ने लगा। इस आन्दोलन को गति प्रदान करने में टीचर्स कालेज कोलम्बिया विश्वविद्यालय के होरेसमन लिंकन इन्स्टिट्यूट ऑफ स्कूल एक्सपेरिमेन्टेशन (Horace Mann-Lincoln Institute of School Experimentation) का योगदान प्रशंसनीय है। आन्दोलन का नेतृत्व वहीं के स्टीफेन एम० कोरी (Stephen M. Corey) ने किया। अब क्रियात्मक-अनुसन्धान की चर्चा हमारे देश में भी प्रारम्भ होगई है।

विद्यालयों की कार्य-विधि में वांछित सुधार लाने के लिए क्रियात्मक-अनुसन्धान एक अमोघ अस्त्र है। आशा है शिक्षा के क्षेत्र में प्रशासन की बागडोर सम्हालने वाले लोग इस अस्त्र का प्रयोग करेंगे और इस प्रकार राष्ट्र की प्रगति का मार्ग प्रशस्त करेंगे। इस अध्याय में क्रियात्मक-अनुसन्धान की ऐतिहासिक पृष्ठ-भूमि का सिंहावलोकन किया जायगा।

शिक्षा में परीक्षण एवं अनुसन्धान का इतिहास कोई अति प्राचीन घटना नहीं है। बीसवीं शदी के प्रारम्भ से ही मनोवैज्ञानिकों में नए ढङ्ग से अध्ययन करने की प्रवृत्ति उदय हो चुकी थी। इस सम्बन्ध में जर्मनी के मनोवैज्ञानिकों-जिनमें वुण्ट, एब्बाइगर, कॉफका तथा कोहलर आदि हैं—का नाम आदर के साथ लिया जा सकता है। १६ वीं शदी के अन्त में मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की दृष्टि से जर्मनी एक प्रशिक्षण केन्द्र बन गया था। लीपज़िग में वुण्ट ने प्रथम प्रयोगशाला १८७६ ई० में स्थापित किया और वहाँ प्रशिक्षण प्राप्त करने योरोप के अनेक देशों से मनोवैज्ञानिक आने लगे। अमेरिका के मनोवैज्ञानिकों ने भी इस प्रकार के प्रशिक्षण से लाभ उठाया। उस समय अमेरिका में परीक्षण एवं प्रयोग को प्रोत्साहित किया गया। फलस्वरूप शिक्षा में अनुसन्धान हेतु कदम उठाये गए। सन् १९२०-३० के बीच शैक्षणिक-अनुसन्धानों का बाहुल्य सा हो गया। उन्हीं दिनों विद्यालयों के अध्यापकों तथा अन्य सम्बन्धित अधिकारियों को अनुसन्धान की ओर आकर्षित किया गया। उन्हें गोष्ठियों तथा विचार-सभाओं में आमन्त्रित कर विद्यालयों में अनुसन्धान की आवश्यकता पर बल दिया गया।

सन् १९२६ ई० में बकिंघम (Buckingham) ने एक ग्रन्थ लिखा जिसे 'रिसर्च फार टीचर्स' (Research for Teachers) के नाम से प्रकाशित किया गया। उक्त ग्रन्थ* में अधोलिखित उद्देश्य सामने रखे गये—

(१) अध्यापकों को यह बताना कि वह किस प्रकार परीक्षणों द्वारा प्राप्त फलों को चरितार्थ कर सकता है।

---

* To show the teacher some of the things he can use in his work—things which have been developed not merely by ... to principles, but primarily by methods of experi-

(२) अध्यापकों में यह विश्वास पैदा करना कि उनके पास अनुसन्धान हेतु अवसर विद्यमान हैं और वे उनका प्रयोग न केवल अपने शिक्षण में सुधार लाने के लिए वरन् अपनी व्यक्तिगत प्रतिष्ठा को बढ़ाने के लिए भी कर सकते हैं।*

स्टीफेन एम० कोरी के मतानुसार इस ग्रन्थ में बकिंघम यह मानकर चलता है कि अध्यापक अनुसन्धान सम्बन्धी विधियों एवं तरीकों को आसानी से व्यवहार-रूप दे सकता है। इसीलिए बकिंघम ने अपने ग्रंथ में अनुसन्धान की विविध विधियों, सांख्यिकी रीतियों, छात्रों के वर्गीकरण के तरीकों आदि के बारे में विस्तारपूर्वक व्याख्या प्रस्तुत किया है। अध्यापकों के लिए अनुसन्धान की आवश्यकता पर बल देते हुए उन्होंने लिखा है कि यद्यपि इस प्रकार के अनुसन्धान से शिक्षा के क्षेत्र में कोई विशेष ज्ञान-वृद्धि न हो, फिर भी अध्यापकों पर जो इसका असर पड़ेगा उस दृष्टि से यह सर्वथा न्याय-संगत है।[1]

कहने का आशय यह है कि 'क्रियात्मक-अनुसन्धान' का आधुनिक स्वरूप अभी बीज रूप में था। उस समय विद्यालय की कार्य-पद्धति में सुधार लाने की दृष्टि से अनुसन्धान के बारे में नहीं सोचा गया। विद्यालय के लिए जिस प्रकार के अनुसन्धान को उपयुक्त समझा गया उसके पीछे निम्नाङ्कित उद्देश्य थे—

१. शिक्षा सम्बन्धी पूर्व स्थापित 'सत्यों' अथवा 'सिद्धान्तों' के कोष में वृद्धि करना।
२. परम्परागत अनुसन्धानकर्ताओं को अनुसन्धान विषयक-आवश्यक आँकड़ों तथा अध्ययन-सामग्री एकत्र करने में सहायता प्रदान करना।
३. अध्यापकों में अनुसन्धान के लिए उपयुक्त दृष्टि पैदा करना।

---

* To show that the teacher has opportunities for research, which, if seized, will not only powerfully and rapidly develop the technique of teaching, but will also react to vitalize and dignify the work of the individual teacher.

—*Buckingham*

1 "Teacher research would be desirable, even if no account were taken of the results as contributions to knowledge. The spirit of research among teachers would be justified merely in the reaction upon the teachers themselves."

—*Buckingham.*

४. विद्यालय-सम्बन्धी समस्याओं का वैज्ञानिक ढंग से हल प्राप्त करने में अध्यापकों को प्रशिक्षित करना।

इस प्रकार यह विदित है कि उस समय अनुसन्धान का लक्ष्य विद्यालय में सुधार एवं प्रगति लाना नहीं माना जाता था। क्रियात्मक-अनुसन्धान की विकासावस्था का यह प्रथम चरण था। कहना न होगा कि इस तरह की विचारधाराएँ क्रियात्मक-अनुसन्धान का अग्रदूत बनकर आयीं। इन धाराओं ने क्रियात्मक-अनुसन्धान का मार्ग प्रशस्त किया।

गुड, बार तथा स्केट्स[1] ने अपने ग्रन्थ की भूमिका में यह स्पष्ट किया कि विद्यालयों में अनुसन्धान का महत्व अध्यापकों को प्रशिक्षण देने की दृष्टि से अधिक है। यहाँ इन लेखकों ने अनुसन्धान का प्रत्यक्ष सम्बन्ध विद्यालयों की कार्य-प्रणाली से नहीं जोड़ा। वे अनुसन्धान द्वारा अध्यापकों एवं विद्यालयों के अधिकारियों के मनोभावों में परिवर्तन करना लक्ष्य मानते थे, किन्तु विद्यालय में अनुसन्धान का प्रत्यक्ष रूप नहीं निश्चित कर पाये।

यदि सन् १९२०-३० ई० के पहले की स्थिति पर दृष्टिपात किया जाय तो यह मालूम होगा कि जैसे-जैसे मनोवैज्ञानिक परीक्षण तथा वैज्ञानिक तरीके जोर पकड़ते गये वैसे-वैसे शिक्षा के क्षेत्र में नये प्रकार के प्रयोग प्रारम्भ होने लगे। उस समय शिक्षा की समस्याओं को वैज्ञानिक दृष्टि से समझने का तात्पर्य था:-

१. शैक्षणिक समस्याओं का वस्तुगत (Objective) अध्ययन।
२. शैक्षणिक निर्णयों की वैधता का आधार ठोस साक्षियों को मानना।
३. छात्रों की उपलब्धियों का मापन करना।
४. नई पद्धतियों एवं प्रणालियों की उपयोगिता का पता प्रयोगों द्वारा करना।

*क्रियात्मक-अनुसन्धान इसी प्रकार की वैज्ञानिक पद्धति से उत्पन्न हुआ है।*

---

1 "Although some field workers will make significant contributions to the store of educational knowledge as active participants in the production of research, the primary outcomes for the majority of field participants in educational research will be found in the training value of the problem-solving approach with an increased understanding of the educational process."

—*Good, Barr and Scates.*

### 'क्रियात्मक-अनुसन्धान' शब्द की उत्पत्ति कैसे ?

द्वितीय विश्व-युद्ध के समय से ही क्रियात्मक अनुसन्धान (Action research) शब्द का प्रयोग होने लगा। इसका श्रेय कॉलियर (Collier) तथा लेविन (Lewin) को है। कॉलियर[1] सन् १९३३ तथा ४५ ई० के बीच भारतीय मामलों का कमिश्नर था। उसकी यह धारणा थी कि जब तक प्रशासन के अधिकारी तथा सामान्य व्यक्ति अनुसन्धान-कार्य मे सक्रिय भाग नहीं लेंगे तब तक किसी प्रकार के अपेक्षित सुधार की कामना करना हवा में पुल बाँधना है। ऐसा इसलिए है कि जितने भी सुधार लाने हैं वे उन अधिकारियों एवं व्यक्तियों की इच्छा के विरुद्ध कार्यान्वित नहीं किये जा सकते। कॉलियर ने सामाजिक व्यवस्था पर बल दिया और सर्व प्रथम क्रियात्मक-अनुसन्धान (Action research) शब्द का प्रयोग किया।

लेविन तथा उनके शिष्यों ने 'मानवीय-सम्बन्धों' को अच्छा बनाने के सम्बन्ध में कतिपय अनुसन्धान किया जिसे क्रियात्मक-अनुसन्धान का आधुनिक स्वरूप कहा जा सकता है। उन्होंने अनुसन्धान का उद्देश्य मानवीय-सम्बन्धों में सुधार लाना रखा और उसका महत्व व्यावहारिक दृष्टि से अधिक माना गया।

'क्रियात्मक अनुसन्धान' शब्द की उत्पत्ति के सम्बन्ध में अन्य उल्लेखनीय नाम है राइटस्टोन (Wrightstone) का जिन्होंने पाठ्यक्रम-ब्यूरो के कार्यों का वर्णन करते समय "रिसर्च-एक्शन" (Research-action) शब्द का प्रयोग किया। यहाँ महत्वपूर्ण बात यह है कि मुख्य रूप से पाठ्यक्रम के क्षेत्र में ही क्रियात्मक-अनुसन्धान का विकास हुआ। शिक्षा के क्षेत्र मे ताबा, ब्रेडी तथा रॉबिन्सन(Taba, Brady and Robinson)ने क्रियात्मक-अनुसन्धान को अधिक बल प्रदान किया है। उन्होंने समस्या-समाधान (Problem solving) की पद्धति को प्रमुखता दी जो कि क्रियात्मक-अनुसन्धान के निकट है। स्मिथ तथा रॉल्फ टाइलर के अनुसन्धान भी क्रियात्मक-अनुसन्धान की कोटि मे आते हैं।

---

1 Collier used the expression *ction research* and was convinced that "since the findings of research must be carried into effect by the administrator and the layman, and must be criticized by them through their experience, the administrator and the layman must themselves participate creatively in the research impelled as it is from their own area of need."

—*Quoted from Stephen M. Corey's Book* "Action Research to Improve School Practices."

## क्रियात्मक-अनुसन्धान को बल प्रदान करने के कारण-भूत तत्व

यदि ऐतिहासिक दृष्टि से देखा जाय तो क्रियात्मक-अनुसन्धान को बल प्रदान करने में कुछ महत्वपूर्ण तत्व रहे हैं। प्रथम महत्वपूर्ण कारण है, प्रजातंत्रात्मक-शासन की माँग। प्रजातंत्र के लिए आधारभूत आवश्यकता है नये प्रकार के विद्यालयों की। कारण यह है कि प्रजातंत्रात्मक मूल्यों का अधिकाधिक संचार विद्यालयों के माध्यम से ही सम्भव है। विद्यालय प्रजातंत्र की रक्षा के लिए पुष्ट साधन हैं। अतः विद्यालयों की कार्य-प्रणाली में अपेक्षित सुधार एवं प्रगति होनी चाहिए। क्रियात्मक अनुसन्धान इस माँग को पूरा करने के लिए एक नवीन क्रान्ति के रूप में उपस्थित हुआ।

क्रियात्मक-अनुसन्धान के आविर्भाव में दूसरा महत्वपूर्ण कारण था वैज्ञानिक चेतना का चरम विकास। आज के युग में यदि वैज्ञानिक चमत्कारों द्वारा उत्पन्न परिस्थितियों का सामना करने के लिए जीवन शैली में यथेष्ट परिवर्तन नहीं लाया गया तो इससे बढ़कर मनुष्य के लिए और कोई विडम्बना नहीं हो सकती। आज हम बैलगाड़ी की चाल से जीवन नहीं व्यतीत कर सकते। जहाँ एक ओर हम चन्द्रलोक में जाने की सुन्दर कल्पना साकार कर रहे हैं वहीं दूसरी ओर कच्छप की गति से अपना जीवन-यापन करने की सोचें तो यह उपहास मात्र होगा। हमारे सिद्धान्त तथा व्यवहार पक्ष में अधिक दूरी नहीं होनी चाहिए। दोनों में ताल-मेल आवश्यक है। शिक्षा के लिए यह बात अत्यन्त आवश्यक है। शिक्षा जीवन की एक प्रक्रिया है। अस्तु शिक्षा के सिद्धान्त तथा व्यवहार में विशेष अन्तर दिखाई पड़ना मंगलकारी न होगा। क्रियात्मक-अनुसन्धान इसी प्रकार की धारणा को लेकर उत्पन्न हुआ। शिक्षा के क्षेत्र में विद्यालयों तथा उनके कार्यकर्ताओं की गतिविधियों में भी सुधार आना चाहिए। तभी वैज्ञानिक-क्रान्ति से उत्पन्न नूतन आवश्यकताओं की संतुष्टि हो सकती है।

क्रियात्मक-अनुसन्धान के मूल में तीसरा महत्वपूर्ण कारण है अनुसन्धान विशेषज्ञों की शिक्षा में अभीष्ट प्रगति न आने विषयक निराशा। जब शोध के विशेषज्ञों ने यह देखा कि इतनी प्रचुर मात्रा में अनुसन्धान-कार्य होने पर भी शिक्षा के क्षेत्र में इच्छित सुधार नहीं हो रहा है, तब उन्होंने इसके कारणों पर विचार करना प्रारम्भ किया। समय-समय पर मौलिक-अनुसन्धान के अन्तर्गत प्रतिपादित नियमों एवं सिद्धान्तों को कार्य रूप में परिणत करने के लिए रचनात्मक सुझाव दिये गए तथा इस सम्बन्ध में भी अनुसन्धान किया गया कि कार्यान्वयन कैसे सम्भव बनाया जाए। इन सबका परिणाम यह हुआ कि क्रियात्मक-

अनुसन्धान एक स्वतन्त्र शाखा के रूप में प्रस्फुटित हुआ और आज इसके अन्तर्गत विद्यालयों की कार्य-विधि को अधिकाधिक प्रभावशाली बनाने का प्रयत्न किया जाता है।

इधर मनोवैज्ञानिकों ने यह सिद्ध कर दिया कि जब तक कोई व्यक्ति स्वयं किसी कार्य को सम्पादित नहीं करता अथवा जब तक उसकी किसी आवश्यकता विशेष को जाग्रत नहीं किया जाता, तब तक उसकी कार्य-विधियों में सुधार नहीं लाया जा सकता। हम दूसरों की समस्याओं का समाधान अपने अनुसार प्राप्त करें और उस समाधान को दूसरो पर थोपने का प्रयत्न करें---यह सर्वथा अमनोवैज्ञानिक है। शिक्षा-सम्बन्धी जितने भी अनुसन्धान हो रहे थे वे ऐसे व्यक्तियों द्वारा पूरे किये जाते थे जिनका विद्यालय से प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं होता था। ऐसी दशा में विद्यालय मे सुधार लाने सम्बन्धी सुझाव शोध-ग्रन्थों के पृष्ठों को ही सुशोभित कर पाते थे। वे विद्यालय तक नही पहुँच पाते थे क्योकि अध्यापक अथवा प्रधानाचार्य की आस्था एवं विश्वास को जीतने में असमर्थ थे। इस तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए हम कह सकते हैं कि क्रियात्मक-अनुसन्धान, मौलिक अथवा तथाकथित परम्परागत-अनुसन्धान की प्रतिक्रिया के रूप में अवतरित हुआ है। स्टीफेन एम० कोरी ने स्पष्ट रूप से यह घोषित किया कि परम्परागत-अनुसन्धान में उनकी आस्था हिल चुकी है। उनके मतानुसार जब तक सहस्रों विद्यालयों तथा कक्षा गृहो मे अध्यापकों एवं प्रधानाचार्यों द्वारा स्वयं अनुसन्धान-कार्य नहीं सम्पादित होते तब तक विद्यालयो से अपेक्षित प्रगति की अभिलाषा करना व्यर्थ है। सुधारो तथा परिवर्तनो को लागू करने के लिए यह आवश्यक है कि अनुसन्धानकर्ता स्वयं उन्हे अपने व्यवहारो द्वारा घटाने का प्रयास करें।[1]

---

1 "I have lost much of the faith I once had in the consequences of asking only the professional educational investigator to study the shcools and to recommend what they should do. Incorporating these recommendations into the behaviour patterns of practitioners involves some problems that so far have been insoluble. × × × Most of the study of what should be kept in the schools and what should go and what should be added must be done in hundreds of thousads of class rooms and thousands of American communities The studies must be undertaken by those who may have to change the way they do things as a result of the studies."

—*Stephen M. Corey.*

अन्त में, यह कहा जा सकता है कि क्रियात्मक-अनुसन्धान का विकास सामाजिक, वैज्ञानिक एवं मनोवैज्ञानिक परिवर्तनों के संदर्भ में हुआ। इसका आधुनिक स्वरूप प्रजातंत्रात्मक शासन-पद्धति अपनाने वाले राष्ट्रों के विचारों के अनुकूल है।

## सारांश

*शिक्षा में वैज्ञानिक दृष्टि से समस्याओं का अध्ययन बीसवीं सदी के आरम्भ की घटना है। सन् १९२६ ई० के आस-पास शिक्षा में किये जाने वाले अनुसन्धानों को अध्यापकों तथा विद्यालयों की दृष्टि से अधिकाधिक उपयोगी बनाने के लिए प्रयत्न शुरू हो गये। द्वितीय विश्व-युद्ध के समय 'क्रियात्मक-अनुसन्धान' शब्द का प्रयोग प्रचलन में आ गया और तब से यह नये आन्दोलन के रूप में जोर पकड़ने लगा। इस आन्दोलन को गति प्रदान करने में अमेरिका के स्टीफेन एम० कोरी का नाम प्रतिष्ठा के साथ लिया जा सकता है। 'क्रियात्मक-अनुसन्धान' के मूल में प्रजातंत्र का विकास, वैज्ञानिक क्रान्ति, एवं मनोवैज्ञानिक तथ्यों को कारण-भूत तत्व माना जा सकता है। वस्तुतः प्रजातंत्र की रक्षा करने के लिए यह सबसे अर्वाचीन तरीका है।*

## ४

# भारतीय विद्यालयों में क्रियात्मक-अनुसन्धान का महत्व

"If classroom teachers are to make an active research contribution, it will probably be in the area of action research. Sudies will be made for the purpose of improving local school practices. Many educational observers see in action resarech one of the most promising avenues for teacher growth, professional improvement, and the development of a better curriculum." —*John W. Best.*

"Our schools cannot keep up with the life they are supposed to sustain and improve unless teachers, pupils, supervisors, administrators and school patrons continuously examine what they are doing. Singly and in groups, they must use their imaginations creatively and constructively to identify the practices that must be changed to meet the needs and demands of modern life, courageously try out those practices that give better promise, and methodically and systematically gather evidence to test their worth."

—*Stephen M. Corey.*

क्रियात्मक-अनुसन्धान का महत्व क्यों है ? हमारे विद्यालयों में इस प्रकार के अनुसन्धान की क्यों आवश्यकता है ? आदि प्रश्न ऐसे हैं जिनका उत्तर वर्त-

मान परिस्थितियों के सन्दर्भ में देना ही उपयुक्त होगा। अपने देश को स्वाधीन हुए लगभग १८ वर्ष हो चुके। इस अवधि में जो कुछ विकास हम ला सके हैं उसका मूल्यांकन वैज्ञानिक दृष्टि से करना चाहिए। यदि राष्ट्र के मस्तक को ऊँचा उठाना है और अपने देश की स्वाधीनता को कायम रखना है तो इस प्रकार की वैज्ञानिक दृष्टि का महत्व भली प्रकार समझना होगा। हमारे विद्यालयों में अध्यापकों, प्रधानाचार्यों तथा निरीक्षकों एवं प्रबन्धकों को अपने में ऐसी दृष्टि उत्पन्न करनी होगी जिससे विद्यालय की कार्य-प्रणालियाँ जर्जरता एवं यान्त्रिकता का शिकार न बनें। प्रजातंत्र के वास्तविक गुणों की दीक्षा का पवित्र संकल्प हमारे विद्यालय ही पूरा कर सकते हैं। प्रतिवर्ष करोड़ों की संख्या में विद्यालयों से निकलने वाले छात्र ही देश के भावी नागरिक हैं। इनकी शिक्षा प्रजातांत्रिक मूल्यों की स्फूर्तिदायिनी शक्ति पर आधारित होनी चाहिए। विद्यालय की प्रत्येक क्रिया में प्रजातंत्र के आधार-भूत मूल्यों का समावेश होना परमावश्यक है। विद्यालय की कार्य-पद्धति में कठोरता (Rigidity) का अभाव होना चाहिए। विद्यालयों के अध्यापक, प्रधानाचार्य तथा प्रबन्धक अपनी क्रियाओं का मूल्याङ्कन स्वयं करें तथा उनमें अपेक्षित सुधार लाने की चेष्टा करें। जिस विद्यालय में इस प्रकार का वातावरण नहीं है, जहाँ अध्यापकों एवं प्रधानाचार्य को अपनी कार्य-पद्धति में सुधार लाने की स्वतन्त्रता नहीं है, वह प्रजातंत्र के विकास की दृष्टि से सर्वथा हानिकारक है। क्रियात्मक-अनुसन्धान द्वारा प्रजातंत्र की सुरक्षा निश्चित है क्योंकि इसके अन्तर्गत विद्यालय में सबको अपनी क्रियाओं में विकास एवं सुधार लाने के लिए समान अधिकार प्राप्त होता है। इसके द्वारा कार्य-प्रणाली में अपेक्षित सुधार लाया जा सकता है।

प्रजातंत्रात्मक राष्ट्र की सबसे बड़ी विशेषता यह होती है कि नागरिकों को अपने अधिकार का प्रयोग करने की स्वतन्त्रता प्राप्त होती है। वह सामाजिक, आर्थिक एवं बौद्धिक क्षेत्रों में समान अधिकार प्राप्त करने का दावेदार होता है। उसकी क्रियाओं में (जो सामाजिक अथवा राष्ट्रीय हित की दृष्टि से की जाती हैं) कोई भी बाधा नहीं उत्पन्न कर सकता। उसे अपनी क्रियाओं में सुधार एवं विस्तार लाते समय कोई बाधक नहीं बन सकता। हमारे विद्यालयों में प्रजातंत्र के इस रूप को चरितार्थ करना होगा। परस्पर सहयोग एवं संगठन के साथ कार्य करने के लिए प्रत्येक अध्यापक, प्रधानाचार्य, प्रबन्धक तथा निरीक्षक को कटिबद्ध होना चाहिए। उन्हें अपनी कार्य-प्रणालियों को वैज्ञानिक दृष्टि से परखना आना चाहिए। वे अपने मूल्यांकन में वस्तुनिष्ठ एवं निष्पक्षपाती बनें। निरन्तर इस बात की चेष्टा करें कि विद्यालय में वे जो कुछ करें वह शिक्षा के उद्देश्यों को सन्तुष्ट करने में सहायक हो। तभी देश का भविष्य उज्ज्वल बन

सकता है। बापू के स्वप्न सत्य सिद्ध हो सकते हैं। राष्ट्र की प्राचीन गरिमा पुनः स्थापित हो सकती है। इस दृष्टि से 'क्रियात्मक-अनुसन्धान' का महत्व कम नहीं है। प्रत्येक विद्यालय इस प्रकार के अनुसन्धानों द्वारा अपनी लक्ष्य सिद्धि को सुगम बना सकता है।

क्रियात्मक-अनुसन्धान का महत्व अन्य दृष्टियों से भी प्रदर्शित किया जा सकता है। स्वाधीनता के उपरान्त अपने देश का पुनर्जन्म हुआ। नये राष्ट्र की नई समस्याएँ भी साथ साथ पैदा हुईं। शिक्षा-क्षेत्र मे विद्यालयो का पुनर्गठन प्रारम्भ हुआ। शिक्षा के उद्देश्य पुनः निर्मित किये गये। पाठ्यक्रमो में सुधार के लिए कदम उठाए गये। पाठ्य-पुस्तकों के नये स्वरूप सामने आये। शिक्षक-प्रशिक्षण महाविद्यालयो द्वारा दी जाने वाली ट्रेनिंग मे भी संशोधन लाया गया। और अब भी इन सभो दशाओं में प्रयत्न जारी हैं। इसका परिणाम यह हुआ है कि हम सुधार एवं विस्तार लाने की चेष्टा मे सहगामी समस्याओ के प्रति उतना चैतन्य नहीं रह पाये हैं। विद्यालयों मे शिक्षण-प्रणाली, पाठ्यक्रमों का अनुसरण, अनुशासन तथा पुस्तकालयो के प्रयोग विषयक अनेकानेक समस्याएँ एक भयंकर होड़ के साथ बेरोकटोक बढ़ती चली जा रही हैं। यदि इन समस्याओं के प्रति हम सजग नहीं हुए तो शिक्षा के उद्देश्यो पर पानी फिर जायेगा। फिर तो पतन के गर्त में पहुँचते देर न लगेगी। इससे बढ़कर उपहास का विषय क्या होगा। 'क्रियात्मक-अनुसन्धान' विद्यालयों की बढ़ती हुई समस्याओ का सरल हल प्राप्त करने की दिशा में अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध होगा। इसके अतिरिक्त विद्यालय की कार्य-प्रणाली में अपेक्षित विकास लाने के प्रति भी यह सहायक होगा।

इस प्रकार भारतीय-विद्यालयों में प्रगति एवं सुधार लाने की दृष्टि से 'क्रियात्मक-अनुसन्धान' एक ठोस कदम है। इसके द्वारा जो कुछ भी सुधार अथवा परिवर्तन लाये जाएँगे वे पर्याप्त स्पष्ट एवं ठोस होगे। विद्यालय की प्रत्येक समस्या जो विद्यालय की गतिविधि में बाधक सिद्ध हो सकती है, उसका समाधान ढूँढ़ा जा सकता है। आजकल जो ऊहापोह की स्थिति हमारे विद्यालयों में उपस्थित हो गई है, उसका निराकरण सम्भव हो सकता है। विद्यालयों में अध्यापकों द्वारा प्रधानाचार्य की निंदा, अथवा प्रधानाचार्य द्वारा अध्यापकों का मीन-मेख निकालना, अध्यापकों में परस्पर असहयोग, छात्र द्वारा शिक्षकों की आलोचना अथवा शिक्षको द्वारा छात्रों की भर्त्संना आदि की जो प्रवृत्ति प्रचण्ड रूप धारण करती चली [illegible] का लोप 'क्रियात्मक-अनुसन्धान' के अवलम्बन से ही सम्भव

आज सबसे बड़ी आवश्यकता है हमारे विद्यालयों में कार्य करने वाले अध्यापक-बन्धुओं, प्रधानाचार्यों एवं निरीक्षकों में वैज्ञानिक-दृष्टिकोण लाने की। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से हमारा तात्पर्य है—एक ऐसी दृष्टि से जिसमें व्यक्तिगत पक्षपातों, रुचियों एवं झुकावों पर पर्याप्त प्रतिबन्ध हो तथा वस्तु-निष्ठता (Objectivity) हो। इससे एक दूसरे पर दोषारोपण करने की भावना प्रबल न हो पायेगी। *परस्पर मेल एवं संगठन का भाव उत्पन्न होगा।* 'क्रियात्मक-अनुसन्धान' हमारे शिक्षकों, प्रधानाचार्यों तथा प्रबन्धकों एवं निरीक्षकों में इस वैज्ञानिक दृष्टिकोण को पैदा कर सकता है। इसके अवलम्बन से विद्यालय की समस्याओं तथा व्यक्तिगत समस्याओं को वस्तुनिष्ठ ढंग से विश्लेषित करने एवं समझने की परम्परा का शुभारम्भ होगा। क्रियात्मक-अनुसन्धान देश के विद्यालयों में बड़े पैमाने पर सुधार लाने का अद्भुत तरीका है। इसका श्रीगणेश जितनी शीघ्रता के साथ हो उतना ही अच्छा है।

शिक्षा की स्थिति पर जो क्षोभ प्रकट किया जा रहा है, जो निराशा व्यक्त की जा रही है उसके मूल में विद्यालयों की कार्य-प्रणाली का उपयुक्त न होना ही मुख्य कारण है। इस सम्बन्ध में किसी व्यक्ति विशेष अथवा संस्था विशेष की आलोचना करना ठीक नहीं है। इस प्रकार के छिद्रान्वेषण की प्रवृत्ति से आपसी तनाव बढ़ते हैं। भावात्मक एकता (Emotional integration) में निर्बलता आती है। समाज में विघटनकारी तत्वों का प्रभुत्व स्थापित हो जाता है। *'क्रियात्मक-अनुसन्धान' द्वारा शिक्षा की वर्तमान स्थिति को सुधारा जा सकता* है। इतना निश्चित है कि विद्यालयों में 'क्रियात्मक-अनुसन्धान' का आरम्भ होते ही एक नई चेतना प्रस्फुटित होगी और शिक्षा-जगत में प्रगति सूर्य का अरुणोदय होगा जिसकी प्रथम किरण मात्र अनेक प्रधानाचार्यों, अध्यापकों, प्रबन्धकों तथा विद्यालय-निरीक्षकों को चैतन्य बना देगी।

अनेक प्रगतिशील राष्ट्रों का इतिहास इस बात का पुष्ट प्रमाण है कि अनुसन्धान के बिना कार्य-पद्धतियों को विकासशील बनाये रखना असम्भव को सम्भव बनाना है। अमेरिका, रूस तथा फ्रांस आदि राष्ट्रों की उन्नति पराकाष्ठा पर है। आज इन राष्ट्रों की दुन्दुभी सर्वत्र कर्णगोचर हो रही है। सामाजिक, आर्थिक, वैज्ञानिक एवं शैक्षणिक क्षेत्रों में ये राष्ट्र अग्रणी माने जाते हैं। ऐसा क्यों है ? इतिहास के पृष्ठ बताते हैं कि जब कभी कोई राष्ट्र उन्नति करता है तो उसकी जड़ में वहाँ के लोगों की चेतनता एवं कार्यशीलता मुख्य होती है। अनुसन्धान इस प्रकार की चेतनता एवं कार्यशीलता को विकसित करने का सबल माध्यम है। यदि हमें भारत को एक विकासशील राष्ट्र की कोटि में लाना है

तो जीवन के विविध क्षेत्रों में अनुसन्धान-कार्य को प्रोत्साहित करना होगा। शिक्षा के क्षेत्र में विशेष प्रकार के अनुसन्धानों को गति प्रदान करना होगा। इनमें 'क्रियात्मक-अनुसन्धान' को सर्वोच्च स्थान प्राप्त होगा क्योंकि इस प्रकार के अनुसन्धानों का विद्यालयों की गतिविधि एवं उनमे कार्य करने वाले व्यक्तियों से प्रत्यक्ष सम्बन्ध होता है।

क्रियात्मक-अनुसन्धान विद्यालयों के लिए एक अन्य दृष्टि से भी अत्यधिक महत्वपूर्ण है। इसमे अनुसन्धानकर्ता अध्यापक, प्रधानाचार्य, निरीक्षक अथवा प्रबन्धक स्वयं होते हैं। अतः अनुसन्धान के परिणामो को कार्य रूप मे परिणत करने की समस्या नही खड़ी हो पाती। अनुसन्धान कार्य का जो फल होता है वह विद्यालय की क्रियाओं से अविभाज्य रूप में आबद्ध होता है। शिक्षक, शिक्षार्थी, प्रधानाचार्य तथा निरीक्षक पर इसका प्रभाव तत्काल पड़ता है जिससे विद्यालय की कार्य-प्रणाली को सुधारने के लिए अलग से प्रयास करने की आवश्यकता नहीं होती। परम्परागत-अनुसन्धान मे तो शोधकर्ता विद्यालयो की कार्य-पद्धति से प्रत्यक्ष सम्बन्ध नही रख पाता किन्तु क्रियात्मक-अनुसन्धान की यह विशेषता है कि विद्यालयों मे अनुसन्धान-कार्य कोई अन्य व्यक्ति नही अपितु विद्यालय के लोग ही करते हैं।

आधुनिक मनोविज्ञान यह बताता है कि किसी कार्य को करने से हम अधिक सीखते हैं अपेक्षाकृत उसके बारे मे किसी से सुनने से। कारण यह है कि कार्य करने से हमारे व्यवहार पक्षों में प्रत्यक्ष परिवर्तन होता है। कार्य की पद्धति का स्पष्ट बोध हो जाता है। परम्परागत अनुसन्धान के परिणामों को न लागू करने में यह सबसे बड़ा कारण है क्योंकि अध्यापक अथवा प्रधानाचार्य जिनके लिए सुझाव इन अनुसन्धानों में दिये जाते हैं, वे स्वयं उन परिणाम को नहीं प्राप्त करते। यहाँ तो परिणाम अथवा फल शोधकर्ता जोकि इतर व्यक्ति होता है प्राप्त करता है और उन परिणामों को कार्य-रूप में लागू करने के लिए शिक्षकों, प्रधानाचार्यों, प्रबन्धकों तथा निरीक्षकों के प्रति सुझाव दे देता है। हम देखते हैं कि इस प्रकार के परम्परागत-अनुसन्धानों की संख्या बढ़ती चली जा रही है किन्तु शिक्षा में अपेक्षित सुधार दृष्टिगोचर नहीं हो रहे हैं। क्रियात्मक-अनुसन्धान इस दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण हैं। इसके अन्तर्गत शोधकर्ता का प्रमुख उद्देश्य अपनी क्रियाओं मे सुधार अथवा प्रगति लाना होता है। यहाँ अनुसंधान के उत्पादक तथा उपभोक्ता दोनो ही, अध्यापक, प्रधानाचार्य, प्रबन्धक अथवा निरीक्षक स्वयं होते हैं। फलस्वरूप अनुसन्धान के परिणामों को लागू करने का प्रश्न ही नहीं उठता। यह कार्य तो स्वाभाविक रूप में स्वतः हो जाता है।

हॉपकिन्स क्रियात्मक-अनुसन्धान को सीखने का ढंग मानता है। स्टीफेन एम० कोरी ने इसे 'एक सीखने का तरीका' (A way to learn) कहकर पुकारा है। उन्होंने एक पृथक अध्याय मे यह बताया है किस प्रकार क्रियात्मक-अनुसन्धान द्वारा कई बातो के बारे मे जानकारी प्रासंगिक रूप से ही प्राप्त हो जाती हैं। उन्होंने मुख्य रूप से एक गोष्ठी का उल्लेख किया है जो होरेसमन लिंकन इंस्टीट्यूट आफ स्कूल एक्सपेरिमेण्टेशन-टीचर्स कालेज, कोलम्बिया विश्व-विद्यालय के तत्वावधान मे आयोजित की गई थी। इस गोष्ठी के प्रमुख उद्देश्य दो थे। क्रियात्मक-अनुसन्धान के तरीकों के बारे में विशेष रूप से सीखना तथा मानवीय सम्बन्धों में अभिवृद्धि लाने के लिए नई बातो की जानकारी प्राप्त करना। इस गोष्ठी में 'एक पंथ दो काज' की कहावत चरितार्थ हुई। गोष्ठी का परिणाम सतोषप्रद रहा। इस सम्बन्ध मे यह कहना असंगत न होगा कि लेखक ने अपने एक अन्य वयोवृद्ध एव अनुभवी सहयोगी के साथ 'क्रियात्मक अनुसन्धान' विषय पर हाल ही मे एक गोष्ठी का आयोजन किया जिसमे बलवन्त राजपूत प्रशिक्षण महा विद्यालय के बी० टी०, एल० टी० तथा एम० एड० के छात्रों ने भाग लिया। गोष्ठी लगभग दो दिनों तक चली। सभी छात्र आठ वर्गों मे विभक्त थे और प्रत्येक वर्ग ने अपने समूह-नेता के संरक्षण में अधोलिखित विषयो पर विचार-विमर्श किया—

१. शिक्षा मे क्रियात्मक-अनुसन्धान के लिए उपयुक्त समस्याएँ।
२. वे समस्याएँ जिनका समाधान शिक्षक स्वयं प्राप्त कर सकता है।
३. समस्याओं की वास्तविकता के सम्बन्ध में साक्षियाँ।
४. किन्हीं दो या तीन समस्याओं के कारण मूल-तत्वों की परीक्षा।
५. समस्या के उन कारण-मूल तत्वों का पृथक्करण जो अध्यापक के आधीन है।
६. समस्या का समाधान प्राप्त करने के निमित्त क्रियात्मक-उपकल्पना (Action-hypothesis) का निर्माण करना।
७. क्रियात्मक-उपकल्पना की सत्यता की जाँच करने के लिए योजना।
८. योजना के कार्यान्वयन से प्राप्त परिणामों का मूल्यांकन करना। मूल्यांकन हेतु मानदण्डों (Evaluative Criteria) का निश्चयकरण।
९. अनुसन्धान द्वारा प्राप्त निष्कर्ष।

उपर्युक्त विषयों पर अत्यन्त रुचि एवं उत्साह के साथ सभी वर्गों के छात्रों ने विचारों का आदान-प्रदान किया। लेखक तथा विद्यालय के अन्य अध्यापक इन वर्गों में विचार-विमर्श होते समय घूम-घूम कर पर्यवेक्षण करते

रहे तथा यदा-कदा विचार-विमर्श को गति भी प्रदान करते रहे। लेखक की यह धारणा है कि इस गोष्ठी द्वारा उसे बहुत सी नई बातें ज्ञात हुईं। वह छात्रों की कठिनाइयों को भली प्रकार समझने में सफल रहा। उसे यह भी पता चला कि छात्र अपने चिन्तन की प्रारम्भिक अवस्था में किस प्रकार इधर-उधर बहक जाते हैं और विषयान्तर वार्ता करने लग जाते हैं। कई वर्गों में उसे यह प्रतीत हुआ कि समस्या का उल्लेख बड़े व्यापक रूप में किया गया था तथा उसमें बहुत से शब्द ऐसे थे जिनसे अनेक अर्थ निकाले जा सकते थे। इस प्रकार की अन्य कई त्रुटियाँ पकड़ में आईं और उन्हें यथा-स्थान उचित उदाहरणों द्वारा सुधारा गया। इस गोष्ठी को हम क्रियात्मक-अनुसन्धान की भूमिका कह सकते हैं।

लेखक इस गोष्ठी से अत्यन्त प्रेरणान्वित हुआ और प्रस्तुत ग्रन्थ को लिखने की मूल-प्रेरणा उसे यहीं से प्राप्त हुई। हम कह सकते हैं कि क्रियात्मक-अनुसन्धान को अच्छी तरह से समझने के लिए यह आवश्यक है कि इसे प्रयोग में स्वयं लाया जाए।

क्रियात्मक-अनुसन्धान का महत्व निम्नांकित दृष्टियों से विशेष है—

१. विद्यालयों की कार्य-पद्धति में यथेष्ठ सुधार किंवा परिवर्तन लाने के लिए।
२. जनसंत्रात्मक मूल्यों की सुरक्षा हेतु।
३. वैज्ञानिक आविष्कारों के कारण उत्पन्न नई परिस्थितियों का सामना करने के लिए।
४. विद्यालयों में यान्त्रिकता एवं रूढ़िवादिता का वातावरण समाप्त करने के निमित्त।
५. शिक्षकों, प्रधानाचार्यों, प्रबन्धकों तथा निरीक्षकों में वैज्ञानिक अथवा वस्तुनिष्ठ दृष्टि से अपनी कार्य-प्रणालियों का मूल्यांकन करने एवं उनमें तदनुकूल परिवर्तन लाने के प्रति समर्थ बनाना।
६. छात्रों की बहुमुखी प्रगति हेतु विद्यालय की क्रियाओं का प्रभावोत्पादक रीति से आयोजन करने के लिए।
७. विद्यालय की अनेकानेक समस्याओं यथा शिक्षण-विधि की समस्या, अनुशासन की समस्या, पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं को प्रभावोत्पादक बनाने की समस्या, विविध विषयों के पढ़ने में अपेक्षित रुचि उत्पन्न करने की समस्या, विद्यालय के पुस्तकालय का सदुपयोग न कर सकने की समस्या, कुछ विशेष अवसरों पर छात्रों ... अनुपस्थिति की समस्या

तथा कक्षा से भाग जाने की समस्या आदि का सहज समाधान प्राप्त करने हेतु।

८. विद्यालय के *अध्यापकों तथा प्रधानाचार्यों को नित्य अपने अनुभवों* को सुगठित करने एवं उनसे लाभ उठाने में समर्थ बनाने की दृष्टि से।

६. विद्यालय समाज का लघु रूप है। अतः सामाजिक परिवर्तनों को विद्यालय के पाठ्यक्रम तथा अन्य क्रियाओं द्वारा प्रतिबिम्बित करना चाहिए। इस दृष्टि से क्रियात्मक-अनुसन्धान अत्यन्त महत्व-पूर्ण है।

१०. शिक्षकों को परस्पर सहयोग एवं सहानुभूति के साथ कार्य करने का अभ्यासी बनाने के लिए।

११. छात्रों की उपलब्धियों का स्तर बढ़ाने के निमित्त।

इन सभी एकादश बातों का ध्यान में रखते हुए क्रियात्मक-अनुसन्धान का महत्व स्पष्ट हो जाता है। भारतीय विद्यालयों के लिए क्रियात्मक-अनुसन्धान एक महती आवश्यकता है। यदि पाठक क्रियात्मक-अनुसन्धान की विधि स्वयं अपनावें तो उन्हें आत्म-विकास की दृष्टि से भी महान् लाभ होगा। आशा है हमारे राष्ट्र के शिक्षा-अधिकारी क्रियात्मक-अनुसन्धान के आन्दोलन को शीघ्रातिशीघ्र एक व्यापक रूप देंगे और इसके प्रचार एवं प्रसार हेतु ठोस कदम उठाएँगे।

## सारांश

क्रियात्मक-अनुसन्धान प्रजातंत्रात्मक राष्ट्र की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए एक महत्वपूर्ण तरीका है। इसके द्वारा शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति सरलतापूर्वक की जा सकती है। यह विद्यालयों को कार्य-पद्धति में विकास एवं विस्तार लाने के लिए सक्षम है। शिक्षकों, प्रधानाचार्यों, निरीक्षकों *तथा प्रबन्धकों के कार्यों तथा निर्णयों में सुधार लाने के निमित्त* यह अनूठा प्रयास है। इससे विद्यालय का स्तर ऊँचा उठता है तथा उसमें शिक्षा के लिए उपयुक्त वातावरण बना रहता है। यदि विद्यालयों को जीवित रहना है, यदि उन्हें रूढ़ियों एवं परम्पराओं के वृत्तों से बाहर निकालना है, तो क्रियात्मक-अनुसन्धान का अनुसरण करना ही होगा। हॉपकिन्स ने ठीक ही कहा है कि *क्रियात्मक-अनुसन्धान का महत्व नये सत्यों को प्रकाश में लाने की दृष्टि से* नहीं वरन् एक सीखने के तरीके के रूप में अधिक है।

# ५

# क्रियात्मक-अनुसन्धान की प्रणाली

"Action-research is conducted in the heat of combat."

—*Stephen M. Corey.*

"Almost everyone occasionally tries out some new ideas that seem to him, at least, to have greater promise. And some sort of evidence is sought on which an estimate of the worth of these new practices, and the desirability of continuing or modifying them, can be based. This is the essence of action research. It is not that some teachers experiment and others do not. Some teachers experiment more consciously and more carefully than others, and it is this careful and conscious experimentation that the administrator will want to encourage."

—*Stephen M. Corey.*

क्रियात्मक-अनुसन्धान दैनिक क्रियाओं में वैज्ञानिक ढंग से सुधार लाने की एक विधि है। हम क्रियात्मक-अनुसन्धान की जानकारी के बिना भी अपनी क्रियाओं में सुधार लाने का प्रयत्न करते हैं, किन्तु इस प्रकार के प्रयत्न वैज्ञानिक नहीं कहे जा सकते। प्रश्न यह है कि हमें अपने प्रयत्नों को वैज्ञानिक क्यों बनाना चाहिए? क्या बिना वैज्ञानिक प्रयत्नों के जीवन नहीं चल सकता? उत्तर में यह कहा जा सकता है कि [illegible] के अभाव में भी जीवन चल सकता है और हम [illegible] सकते हैं, पर यह बहुत कठिन होगा [illegible] के विकास को दृष्टि-

गत रखते हुए क्या इस प्रकार की जीवन-शैली को उचित एवं मितव्ययी माना जा सकता है ? कहने का आशय यह है कि आज जीवन इतना जटिल बन गया है कि इसे समझने तथा गतिशील बनाये रखने के लिए साधारण तरीकों से काम नहीं चल सकता। हम अटकल लगाकर जीवन के गन्तव्य तक आसानी से नहीं पहुँच सकते। राकेट तथा परमाणु-युग की सभ्यता के शिखर पर पहुँचा हुआ मानव आज आखेट-युग की तीरन्दाजी से काम नहीं चला सकता। विद्यालयों में क्रियात्मक-अनुसन्धान इस नये युग की देन है।

क्रियात्मक-अनुसन्धान तथा सामान्य-बुद्धि द्वारा किसी समस्या के समाधान प्राप्त करने की प्रणाली में कोई विशेष अन्तर नहीं है। अध्याय २ में हम यह कह चुके हैं कि वस्तुतः प्रणाली अथवा विधि की दृष्टि से क्रियात्मक तथा परम्परागत अनुसन्धान में भी कोई भेद नहीं है। किसी समस्या के समाधान प्राप्त करने की दिशा में प्रारम्भिक बिन्दु है—समस्या को ठीक प्रकार से समझना। जब तक समस्या का स्वरूप हस्तामलकवत नहीं होता—समाधान प्राप्त करने की चेष्टा में निश्चितता नहीं आ सकती। इसे हम एक साधारण उदाहरण से स्पष्ट कर सकते हैं। शिकारी अपने शिकार की दिशा में तब तक निश्चित नहीं होता जब तक कि उसे यह ज्ञात नहीं होता कि शिकार किधर है ? किस तरह की है ? आदि। एक कुशल व्यक्ति अथवा कुशल अनुसन्धानकर्ता सर्वप्रथम समस्या के स्वरूप को स्पष्ट रूप से पहचानता है और तदुपरान्त उसका सूक्ष्म निमूइम सीमांकन (Delimitation) करता है ताकि समाधान प्राप्त करने में सरलता हो। जब हम साधारण ढंग से किसी समस्या का समाधान प्राप्त करते हैं तो यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक पग पर हम अपने व्यक्तिगत पक्षपातों को पहचानते हों, अपनी न्यूनताओं पर दृष्टि रखते हों। लेकिन वैज्ञानिक ढंग से समस्या का समाधान ढूँढने में सबसे बड़ी विशेषता यह है कि शोधकर्ता अपनी व्यक्तिगत रुचियों अथवा पक्षपातों पर उँगली रखता है तथा अपनी अक्षमताओं को सभी प्रकार विज्ञापित करता है। साधारण व्यक्ति अपनी कमजोरियों को छिपाने की कोशिश करता है किन्तु इसके विपरीत अनुसन्धानकर्ता अपनी सीमाओं को स्पष्ट रूप से बता देता है।

क्रियात्मक-अनुसन्धान की प्रणाली अधोलिखित सोपानों के रूप में समझी जा सकती है—

सोपान १—समस्या को पहचानना।
(Step 1) (Identification of the Problem)
सोपान २—समस्या का परिभाषीकरण एवं सीमांकन।
Step 2) (Defining and delimiting the problem)

सोपान ३—समस्या के कारणो का विश्लेषण ।

(Step 3) (Analysing the causes relevant to the problem)

सोपान ४—समस्या के समाधान हेतु क्रियात्मक-उपकल्पना का निर्माण करना ।

(Step 4) (Formulation of action-hypothesis for obtaining a solution of the problem)

सोपान ५—क्रियात्मक-उपकल्पना की परीक्षा हेतु उपयुक्त रूप-रेखा तैयार करना ।

(Step 5) (Developing a suitable design for evaluation of action-hypothesis)

सोपान ६—क्रियात्मक-उपकल्पना के सम्बन्ध मे अन्तिम निर्णय तथा उसका आधार ।

(Stap 6) (Final decision about action-hypothesis and its basis)

अब हम इन सोपानो को उदाहरण द्वारा स्पष्ट करेंगे ।

### सोपान १—समस्या को पहचानना :

क्रियात्मक-अनुसन्धान का प्रारम्भ समस्या के क्षेत्र (Problem area) को पहचानने से होता है । जब तक समस्या की अनुभूति नही होगी तब तक अनुसन्धान का प्रारम्भ नही हो सकता । विद्यालय मे अधिकतर अध्यापक अथवा प्रधानाचार्य ऐसे होते हैं जिन्हे अपनी समस्या का बोध होता ही नही है । वे समस्या के प्रति अन्धे (Problem-blind) होते हैं । ऐसी दशा कतिपय नव-शिक्षुओं में भी उनके प्रारम्भिक जीवन में आया करती है । उन्हें समस्या दिखाई नही पड़ती । प्राय: अध्यापकों की गोष्ठियों का संचालन करते समय लेखक को यह ज्ञात हुआ । अध्यापकों से पूछने पर कि वे शिक्षण अथवा विद्यालय से सम्बन्धित कुछ समस्याओं का उल्लेख करें—कुछ अध्यापक ऐसे भी मिले जिन्हे किसी प्रकार की समस्या नहीं दिखाई पडती । इन अध्यापको मे से कुछ तो अनुभवी किन्तु अधिकतर नव सिखुए होते हैं । ऐसे अध्यापकों को विशेष प्रकार के प्रशिक्षण की आवश्यकता है । उन्हें सर्व प्रथम अपनी समस्याओं के प्रति सम्वेदनशील (Sensitive) बनाना होगा तथा अपनी कठिनाइयो को समझने के लिए चिन्तनशील बनने की प्रेरणा देनी होगी । तभी क्रियात्मक-अनुसन्धान की भूमिका प्रस्तुत की जा सकती है ।

समस्याओं को पहचानना टेढ़ी खीर है। हम नित्य अपने कार्यों में यन्त्रवत् आगे बढ़ते चले जाते हैं। जब तक हमारे स्वार्थों पर आघात पहुँचाने वाली कोई बाधा उपस्थित नहीं होती, हम अपनी परिस्थितियों के प्रति चैतन्य नहीं होते। शिक्षण की परिस्थिति में इस प्रकार की बाधाओं को वही शिक्षक अथवा प्रधानाचार्य समझ सकता है जो अपने व्यवसाय के प्रति निष्ठावान् हैं। जो अपने विद्यालय तथा राष्ट्र के हितों को अपना हित मानकर कार्य करते हैं।

समस्या को पहचानने के लिए अध्यापकों, प्रधानाचार्यों, प्रबन्धकों तथा विद्यालय-निरीक्षकों में एक वस्तुनिष्ठ दृष्टि (Objective attitude) पैदा करनी होगी। उन्हें अपनी परिस्थितियों का मूल्याङ्कन आत्मनिष्ठ (Subjective) ढंग से नहीं करना चाहिए। किसी भी समस्या को समझने के लिए उन्हें एक निष्पक्ष भाव अपनाना होगा। ऐसा देखा जाता है कि जब तक हम किसी कार्य को पूर्ण आसक्ति के साथ करते हैं तो अपनी कमियाँ अथवा दोष स्वयं नहीं दिखाई पड़ते। वहीं अन्य व्यक्ति हमारी न्यूनताओं की ओर संकेत कर देता है। कहने का अभिप्राय यह है कि समस्याओं को पहचानने के लिए हमें अन्य व्यक्तियों की आलोचनाओं को सुनने का साहस करना होगा। सम्भव है कि इन आलोचनाओं पर निष्पक्ष भाव से विचार करने पर अपनी वास्तविक सीमाओं के प्रति सही निर्देश प्राप्त हो। इसके लिए अध्यापकों को चाहिए कि वे अपनी आलोचनाओं को स्वस्थ दृष्टिकोण से समझने का अभ्यास करें। उन्हें अपने दृष्टिकोण में व्यापकता एवं उदारता का समावेश करना होगा।

समस्याओं को पहचानने की क्षमता उन्हीं व्यक्तियों में आ सकती है जो जिज्ञासु होते हैं तथा निरन्तर विकास की ओर बढ़ने के लिए सचेष्ट होते हैं। यदि अध्यापक, प्रधानाचार्य, प्रबन्धक तथा विद्यालय-निरीक्षक अपने क्षेत्र में अपने ज्ञान को सुसज्जित रखने का प्रयास करें, सदैव कुछ न कुछ विशेष जानकारी प्राप्त करते रहें तो इसमें लेशमात्र भी सन्देह नहीं किया जा सकता कि वे अपनी समस्याओं को समझने एवं पहचानने में समर्थ होंगे।

## सोपान २—समस्या का परिभाषीकरण एवं सीमांकन

समस्या को व्यापक रूप में पहचान लेने पर दूसरा महत्वपूर्ण कार्य यह होता है कि उसे विश्लेषित किया जाय तथा उसका मुख्य रूप निश्चित किया जा य। इससे समस्या का समाधान प्राप्त करने में सरलता होती है, समस्या का मुख्य बिन्दु निश्चित हो जाता है जिससे समस्या का अध्ययन विधिवत हो सकता क्रिया को समस्या का परिभाषीकरण एवं सीमांकन के नाम से अभि- गया है। परिभाषीकरण इसलिए आवश्यक है कि समस्या का उल्लेख

करते समय उसके अन्तर्गत कुछ ऐसे शब्द नहीं जिनके कई अर्थ निकलते हों। सीमांकन से तात्पर्य है समस्या का क्षेत्र (Scope) बताना। इससे समस्या की व्यापकता का लोप हो जाता है। समस्या अत्यन्त व्यापक (Too wide) न बन कर अत्यन्त विशिष्ट (Too specific) बन जाती है जिससे उसका अध्ययन सूक्ष्मता एवं सावधानी के साथ किया जा सकता है। जब समस्या का क्षेत्र व्यापक होता है तो उसके अध्ययन में अनेक कठिनाइयाँ उपस्थित होती हैं। अनुसन्धानकर्ता को किसी प्रकार की स्पष्टता नही होती और अनुसन्धान मे अनेक त्रुटियाँ आ जाती हैं जिससे अनुसन्धान-कार्य का महत्व घट जाता है।

समस्या को परिभाषित करने के लिए बड़े सजग चिन्तन की आवश्यकता होती है। समस्या के प्रत्येक रूप की मीमांसा सावधानी के साथ करनी पडती है। समस्या का अंग प्रत्यंग इस प्रकार विश्लेषित होता है कि सन्देह के लिए कोई स्थान नहीं रहता। समस्या की परिभाषा में समस्या के लिए प्रयुक्त अनेक महत्वपूर्ण शब्दों को भली प्रकार स्पष्ट किया जाता है तथा उनके अर्थ निश्चित कर दिये जाते हैं। नीचे कुछ 'समस्याओं' का उल्लेख किया जा रहा है जिन्हें कुछ विद्यालयों ने 'क्रियात्मक-अनुसन्धान' के लिए चुना है—

*१. छात्रों की वर्तनी (Spelling) सम्बन्धी अशुद्धता से उनकी निष्पत्ति (Achievement) पर बड़ा बुरा प्रभाव पडता है।
*२. जूनियर हाईस्कूल के छात्र वाचन में कुशल नहीं हैं।
*३. विद्यालय में अवकाश के समय छात्र पुस्तकालय एवं वाचनालय का प्रयोग ठीक से नहीं करते।
४. छात्र अपने गृह-कार्यों को ठीक से नहीं कर पाते।
*५. व्याकरण पढ़ाते समय छात्रों मे एक अरुचि का भाव दिखाई पड़ता है।
६. विद्यालय के अन्तिम घण्टों में छात्र प्रायः भाग जाते हैं।
७. विज्ञान तथा अंग्रेजी के अध्यापक अपना समय प्राइवेट ट्यूशन में अधिक लगाते हैं जिससे विद्यालय की शिक्षा पर प्रभाव पड़ता है।
८. अध्यापकों तथा विद्यार्थियों में समय की पाबन्दी का भाव कैसे उत्पन्न किया जाय।

ये समस्याएँ व्यापक रूप मे प्रस्तुत की गई हैं। इनसे समस्या के क्षेत्र (Problem area) मात्र का बोध होता है। इन्हें अनुसन्धान के लिए उपयुक्त

---

* इन समस्याओं पर अनुसन्धान-कार्य प्रारम्भ हो चुका है।

बनाने के निमित्त भली प्रकार से परिभाषित एवं सीमांकित करना होगा। जिन समस्याओं पर अनुसन्धान किया जा रहा है उन्हें इस प्रकार परिभाषित तथा सीमांकित किया गया है :—

(१) समस्या का क्षेत्र— (Problem area) — छात्रों की वर्तनी सम्बन्धी अशुद्धता।

समस्या का सीमांकित रूप— (Delimited form of the problem) — कक्षा ९ तथा १० के छात्रों की अंग्रेजी में वर्तनी-सम्बन्धी अशुद्धियाँ एवं उनमें सुधार लाना।

(२) समस्या का क्षेत्र— (Problem area) — जूनियर हाई स्कूल के छात्रों का वाचन में कुशल न होना।

समस्या का सीमांकित रूप— (Delimieitd form of the problem) — जूनियर हाई स्कूल की छठवीं तथा सातवीं कक्षा के छात्रों का हिन्दी में वाचन (सस्वर) करते समय उच्चारण एवं इण्टोनेशन का शुद्ध न होना तथा पर्याप्त गति का अभाव।

(३) समस्या का क्षेत्र— (Problem-area) — विद्यालय में अवकाश के समय छात्रों द्वारा पुस्तकालय एवं वाचनालय का यथेष्ट प्रयोग न होना।

समस्या का सीमांकित रूप— (Delimited form of the problem) — विद्यालय मे उच्च-कक्षाओं (१० वीं तथा १२ वीं) के छात्रों द्वारा उनके अवकाश के कालांशों में विद्यालय के पुस्तकालय तथा वाचनालय का यथेष्ठ प्रयोग[1] न किया जाना।

(४) समस्या का क्षेत्र— (Problem area) — अंग्रेजी में व्याकरण पढ़ाते समय ९ वीं कक्षा के छात्रों का रुचि न प्रदर्शित करना।

सयस्या का सीमांकित रूप— (Delimited form of the problem) — अंग्रेजी में व्याकरण (Sentence analysis and narration) पढ़ाते समय नवीं कक्षा के छात्र रुचि नहीं दिखाते।[2]

---

1. यथेष्ठ प्रयोग का अर्थ है— छात्रों द्वारा सप्ताह में कम से कम एक पुस्तक (१०० पृष्ठों की) पढ़ना।
2. रुचि न दिखाने का अर्थ है—ध्यान न देना, इधर-उधर के प्रश्न करना आदि।

इन समस्याओं को जब तक इस रूप में परिभाषित एवं सीमांकित नहीं किया गया था, अनुसन्धान की योजना बनाना बहुत कठिन प्रतीत हो रहा था। जिन अध्यापकों तथा प्रधानाचार्यों के साथ लेखक इन समस्याओं के सम्बन्ध में विचार कर रहा था, वे समस्या का यह रूप प्रस्तुत होने पर प्रसन्नता का अनुभव कर रहे थे।

शेष समस्याओं का परिभाषीकरण एवं सीमांकन इस तरह किया जा सकता है।

| | |
|---|---|
| (१) समस्या का क्षेत्र— (Problem area) | छात्रों द्वारा अपने गृह-कार्यों का विधिवत् न किया जाना। |
| समस्या का सीमांकित रूप— (Delimited form of the problem) | जूनियर कक्षाओं (६, ७ तथा ८) के छात्रों द्वारा भाषा, गणित तथा सामाजिक-अध्ययन के विषयों में अध्यापकों द्वारा दिये गये गृह-कार्यों को ठीक समय से पूरा न किया जाना तथा उन्हें लापरवाही के साथ हल करना। |
| (२) समस्या का क्षेत्र— (Problem area) | विद्यालय के अन्तिम घण्टों में छात्रों का भाग जाना। |
| समस्या का सीमांकित रूप— (Delimited form of the problem) | विद्यालय के अन्तिम घण्टों (अवकाश के बाद) में ७ वीं० ६ वीं तथा ११ वीं कक्षा के छात्रों का सप्ताह के अन्तिम दिनों (शुक्रवार तथा शनिवार) में विद्यालय से प्रायः बिना बताये चले जाने की समस्या। |
| (३) समस्या का क्षेत्र— (Problem area) | विज्ञान तथा अंग्रेजी के अध्यापकों द्वारा प्राइवेट ट्यूशनों में अधिक समय देना तथा विद्यालय के कार्यों को भली प्रकार न करना। |
| समस्या का सीमांकित रूप— (Delimited form of the problem) | विज्ञान तथा अंग्रेजी के अध्यापकों द्वारा सत्र के ५ महीनों (नवम्बर से मार्चतक) में प्राइवेट ट्यूशन अधिक (एक अध्यापक का २ से अधिक ट्यूशन) करना और इस कारण विद्यालय के कार्यों में ढीलापन[1] दिखाना। |

1. ढीलापन का अर्थ—पाठ्यक्रम ठीक से समाप्त न करना, विद्यालय में समय से न आना, कक्षाओं को बिना पढ़ाये छोड़ देना आदि।

यह समस्या एक प्रधानाचार्य द्वारा बताई गई है।

(४) समस्या का क्षेत्र— (Problem area) अध्यापकों तथा विद्यार्थियों में समय से आने की प्रवृत्ति।

समस्या का सीमांकित रूप— (Delimited form of the problem) (१) अध्यापकों (जो विद्यालय के नि रहते हैं) का समय[1] से विद्यालय पहुँचना।

(२) छात्रों (जो विद्यालय के निकट अथ दूर रहते हैं) का समय से विद्यालय उपस्थित न होना।

ऊपर की प्रक्रिया से यह स्पष्ट होता है कि समस्याओं को पहचान ले ही पर्याप्त नहीं है। समस्या का क्षेत्र स्पष्ट हो जाने पर उसे सूक्ष्मातिसूक्ष्म रू में निश्चित किया जाता है। ऐसा करना इसलिए आवश्यक है ताकि समस्य का मुख्य-विन्दु अध्ययन का विषय बन सके।

समस्या के प्रमुख विन्दु को निर्धारित करने की प्रक्रिया को समस्या क सीमाङ्कन (*Delimiting or pin-pointing the problem*) कहा जाता है इससे समस्या को हल करने की दिशा में महत्वपूर्ण संकेत प्राप्त होते हैं समस्या के कारण भूत तत्वों (Causative factors) का पता सरलतापूर्व लगाया जा सकता है। तात्पर्य यह है कि समस्या के सीमाङ्कन द्वारा शोध-का में एक निश्चित दिशा प्राप्त होती है। समस्या को पहचानने तथा उसे सीमाङ्कि एवं परिमापित करने की इस प्रक्रिया को पाठकों की बोधगम्यता के लिए चित्रा त्मक रूप में प्रदर्शित किया जा रहा है :—
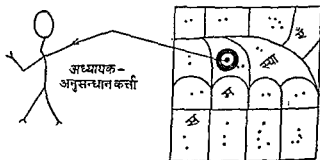
1. समय से न पहुँचने का अर्थ—५ मिनट से अधिक विलम्ब करना।

समस्याओं के भुण्ड में से किसी एक क्षेत्र (Area) पर सोचते-सोचते अनुसन्धानकर्ता को अपनी समस्या-विशेष का निश्चय होता है। तब वह उस समस्या-विशेष के क्षेत्र में काट-छाँट प्रारम्भ कर देता है और अन्त में उसका सीमाङ्कन करने में सफल होता है। चित्र में यह दिखाया गया है कि अनुसन्धानकर्ता किस प्रकार समस्या का सीमाङ्कन करने हेतु एक बिन्दु से प्रारम्भ करता है और समस्या के अन्तर्तम अथवा मूल रूप तक पहुँच जाता है। यह प्रक्रिया बहुत ही अमूल्य है। केवल समझने की सुविधा हेतु इस चित्र का प्रयोग करना चाहिए। इस समस्या के विश्लेषण एवं सीमांकन करने की अमूर्त प्रक्रिया (Abstract process) का यथावत् प्रदर्शन नहीं समझना चाहिए।

सोपान ३—समस्या के कारणों का विश्लेषण

समस्या का विशिष्ट रूप निश्चित हो जाने पर अनुसन्धानकर्ता अब यह विचार करता है कि वे कौन से सम्भव कारण हैं जिनसे समस्या का सम्बन्ध हो सकता है। समस्या-विशेष के कारणों का पता लगाने के लिए वह अनेक प्रकार की साक्षियाँ (Evidences) एकत्र करता है। इस तरह समस्या के कारणों की विस्तृत सूची तैयार करता है और उनकी साक्षियों का उल्लेख भी कर देता है जिससे उसको यह विश्वास हो जाता है कि समस्या के लिए अमुक कारण काल्पनिक नहीं अपितु वास्तविक हैं।

पहले हम जिन समस्याओं का सीमांकन कर चुके हैं उन्हीं के विश्लेषण का दर्शन पाठकों के समझने की सुविधा हेतु आगे किया जा रहा है।

## समस्या के कारणों का विश्लेषण

| समस्या का विशिष्ट रूप (Specific form of the problem) | कारण (Causes) | साक्षियाँ (Evidences) |
|---|---|---|
| (1) कक्षा ९ तथा १० के छात्रों की अंग्रेजी में वर्तन सम्बन्धी अशुद्धियाँ एवं उनमें सुधार लाना। | (क) लिखित कार्य में लापरवाही करना। | छात्रों के लिखित-कार्य की पुस्तिकाओं का निरीक्षण करके यह पता लगाया गया। |
| | (ख) निम्न कोटि की पहचान शक्ति (शब्दों की)। | शब्दों की पहचान-शक्ति (Word recognition) सम्बन्धी परीक्षा देकर यह निश्चित किया गया। |

| | | |
|---|---|---|
| | (ग) मातृभाषा के लेख में भी वर्तनी सम्बन्धी अशुद्धियों का होना। | मातृभाषा के लेखों में छात्रों की वर्तनी सम्बन्धी अशु-द्धियों की आवृत्ति निकाल कर तुलना की गई। |
| | (घ) अध्यापकों द्वारा वर्तनी की अशुद्धियों के लिए दण्डित न किया जाना। | अध्यापकों के मतों का संग्रह किया गया उनसे यह पूछा गया कि क्या वे छात्रों को वर्तनी सम्बन्धी भूलों के लिए दण्डित करते हैं ? यदि हाँ तो किस रूप में ? |
| (२) जूनियर हाई स्कूल की ६वीं तथा ७वीं कक्षा के छात्रों का हिन्दी में वाचन (सस्वर) करते समय उच्चारण एवं अनुतान का शुद्ध न होना तथा पर्याप्त गति का अभाव। | (क) प्रारम्भिक कक्षाओं में उच्चारण तथा अनुतान की अवहेलना। | प्रारम्भिक कक्षाओं अध्यापकों के शिक्षण निरीक्षण करने से यह हुआ। |
| | (ख) वाचन सम्बन्धी गलत आदतों का बनना। | छात्रों में वाचन क समय गलत आसनों एवं पुस पकड़ने के ढंगों का पा जाना। |
| | (ग) पाठ्य-पुस्तकों का छात्रों के स्तर के अनुकूल न होना। | पाठ्य-पुस्तकों के श एवं वाक्य-साँचों का मूल ङ्कन करने पर यह पता चल |
| | (घ) छात्रों की सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियाँ। | छात्रों की सामाजि एवं आर्थिक परिस्थिति विषयक सूचना एकत्र क पर यह मालूम हुआ। |
| | (ङ) उच्चारण एवं अनुतान पर बल न दिया जाना। | अध्यापकों के म |
| (३) विद्यालय में उच्च-कक्षाओं (१०वीं तथा १२वीं) के छात्रों द्वारा | (क) १० वीं तथा १२ वीं कक्षा के छात्रों द्वारा वार्षिक परीक्षा की तैयारी में अधिक समय देना। | अध्यापकों द्वारा छ की पढ़ाई के सम्बन विशेष जानकारी प्राप्त |

| | | |
|---|---|---|
| उनके अवकाश के कालांशों में विद्यालय के पुस्तकालय तथा वाचनालय का यथेष्ट प्रयोग न किया जाना। | (ख) विद्यालय के पुस्तकालय तथा वाचनालय में पर्याप्त स्थान का न होना। | अवकाश के कालांशों मे पुस्तकालय तथा वाचनालय में पढ़ने वाले छात्रों की संख्या तथा अवशेष स्थान का पता लगा कर। |
| | (ग) अवकाश के कालांशों के पूर्व तथा बाद के कालांशों में अधिक कठिन विषयों का पढ़ाया जाना। | समय-तालिका से ऐसे विषयो का पता लगाना तथा उन विषयों के अध्यापकों से पूछ-ताछ करना। |
| | (घ) पुस्तकालय में उपयुक्त पुस्तकों ( छात्रो की रुचियों के अनुकूल) का अभाव होना। | पुस्तकालय की पुस्तकों का छात्रों की रुचि विषयक प्रश्नावली में प्राप्त उत्तरों से मिलान करने पर। |
| (४) अंग्रेजी में व्याकरण(Sentence analysis and Narration) पढ़ाते समय नवीं कक्षा के छात्र रुचि नहीं दिखाते। | (क) छात्रो को वाक्य साँचों (Sentence-sructures) का ज्ञान न होना। | एक वस्तुनिष्ठ परीक्षा द्वारा (जिसमे केवल वाक्य-साँचों की परीक्षा अभीष्ट है) यह पता लगाया गया। |
| | (ख) अध्यापक द्वारा प्रयुक्त विधि का ठीक न होना। | अध्यापक अपनी विधियों में स्वयं परिवर्तन लाकर यह देखेगा। |
| | (ग) छात्रों की पाठ्य-पुस्तकों में आये हुए वाक्यों के साथ व्याकरण की शिक्षा का समन्वय न हो सकना। | पाठ्य-पुस्तकों में आये हुए वाक्यों का विश्लेषण कर। |
| | (घ) छात्रों मे व्याकरण के प्रति सामान्यतः रुचि का अभाव। | व्याकरण के प्रति छात्रों की सामान्य-रुचि विषयक प्रश्नावली (Questionnaire) से यह पता लगाया जा सकता है। |

समस्या के कारणों का विश्लेषण करते समय निम्नांकित बातों पर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिए—

(१) तर्कसंगति (Logical-relevance)—जिस कारण का उल्लेख किया जा रहा हो वह समस्या की दृष्टि से संगत हो। इसके लिए तर्क-वितर्क द्वारा पता लगाना चाहिए।

(२) परीक्षणीय (Testable)—जो कारण समस्या के साथ जोड़ा जा रहा हो उसकी परीक्षा सम्भव हो। इसके लिए अनुभव-जन्य साक्षियों (Empirical evidences) की आवश्यकता होती है।

(३) विशिष्टता (Specificity)—कारणों का उल्लेख सदैव खास रूप में करना चाहिए। उनका स्वरूप व्यापक न होकर विशिष्ट होना चाहिए।

(४) वास्तविकता (Authenticity)—समस्या के कारणों की वास्तविकता का निश्चय कई तरह की साक्षियों द्वारा करना चाहिए। कारणों (Causes) की वास्तविकता समस्या ( Problem ) की वास्तविकता पर आधारित होती है।

(५) नियन्त्रण (Control)—समस्या के कारणों का विश्लेषण करते समय इस बात पर भी विचार करना चाहिए कि समस्या का अमुक कारण किससे अधिक सम्बन्धित है अर्थात् उसका सम्बन्ध बालक के घर से है, विद्यालय से है, अध्यापक से है, प्रशासनिक क्षेत्र से है—जिसमें प्रधानाचार्य, प्रबन्धक एवं निरीक्षक आ सकते हैं।

समस्या के कारणों का विश्लेषण इस उद्देश्य से किया जाता है कि उसके समाधान के प्रति निश्चित कदम उठाया जा सके। यह तो सभी परिस्थितियों में सत्य है। जब तक समस्या-विशेष के कारणों का वास्तविक पता नहीं लग जाता तब तक उसका हल ढूँढ़ना असम्भव होता है। इसे हम रोग की उपमा से स्पष्ट कर सकते हैं। जब तक किसी रोग के कारणों का परीक्षण (Diagnosis) ठीक प्रकार से नहीं हो जाता, उपचार हेतु उठाए हुए कदम केवल अटकल मात्र होते हैं जिनका कोई विशेष महत्व नहीं है। शोधकर्ता को भी अपनी समस्या का समाधान खोजते समय सर्व प्रथम उस समस्या के कारणों को भली प्रकार विश्लेषित कर लेना चाहिए। समस्या के कारणों का पता ...र ही समस्या के समाधान हेतु सफल क्रियात्मक-उपकल्पनाओं (Action-...otheses) का निर्माण किया जा सकता है।

## सोपान ४—क्रियात्मक-उपकल्पना का निर्माण

क्रियात्मक-अनुसन्धान की प्रक्रिया में उपकल्पनाओं (Hypotheses) का महत्वपूर्ण स्थान है। इन उपकल्पनाओं द्वारा समस्या के समाधान के प्रति सोचा जाता है तथा निश्चित दिशा की ओर कदम उठाये जाते हैं। इसीलिए इन्हें क्रियात्मक-उपकल्पना ( Action-hypothesis ) के नाम से पुकारा जाता है।

उपकल्पना[1] का अर्थ है—समस्या के प्रति ऐसे कथन से जिसके द्वारा समस्या का समाधान प्रतिध्वनित होता है। ऐसे कथनो को हमेशा प्रयोगात्मक समाधान (Tentative solution) के रूप में ही मानना चाहिए। क्रियात्मक-अनुसन्धान मे इस प्रकार के प्रयोगात्मक समाधान (जिन्हे हम उपकल्पना कहेंगे) किसी क्रिया (Action) विशेष का संकेत करते हैं और उस क्रिया द्वारा लक्ष्य ( Goal ) विशेष की प्राप्ति होती है जिसे समस्या का समाधान कहा जा सकता है।

क्रियात्मक-उपकल्पना का स्वरूप समझाने के लिए पूर्व वर्णित समस्याओं [ जिनका सीमांकन तथा विश्लेषण कारणों की दृष्टि से हो चुका है ] को लिया जा रहा है।

समस्या का विशिष्ट रूप—कक्षा ९ तथा १० के छात्रों की अंग्रेजी में वर्तनी सम्बन्धी अशुद्धियों में सुधार लाना।

क्रियात्मक-उपकल्पना—

(१) यदि अंग्रेजी में दिये जाने वाले समस्त लिखित कार्यों को विधिवत कराया जाय तथा उनका निरीक्षण भी हो तो छात्रों की वर्तनी सम्बन्धी अशुद्धियाँ कम होगी।

(२) यदि अध्यापक अंग्रेजी में वर्तनी सम्बन्धी अशुद्धियों के लिए दण्डित करे ( अंकों में कटौती द्वारा, लाल रोशनाई का प्रयोग कर, भूलों को सभी छात्रों के सामने बता कर ) तो वर्तनी की अशुद्धियाँ कम होगी।

इन दोनो उपकल्पनाओं को दो भागों मे विभाजित किया जा सकता है—

(१) क्रियात्मक-पक्ष (Action aspect) तथा

(२) लक्ष्य-पक्ष (Goal aspect)

---

1 उपकल्पना (Hypothesis)–A hypothesis is a tentative statement about the solution of the problem; it's a brilliant guess, a tentative explanation about the problem.

प्रथम उपकल्पना में क्रियात्मक पक्ष है—

"अंग्रेजी में दिये जाने वाले समस्त लिखित कार्यों को विधिवत् कराना तथा उनका निरीक्षण करना"

तथा लक्ष्य-पक्ष है—

*"छात्रों की वर्तनी सम्बन्धी अशुद्धियों में कमी होना।"*

द्वितीय उपकल्पना में क्रियात्मक पक्ष है —

"अध्यापक द्वारा अंग्रेजी में वर्तनी सम्बन्धी भूलों के लिए दण्डित करना।"

तथा लक्ष्य-पक्ष है—

"छात्रों में वर्तनी सम्बन्धी अशुद्धियों का कम होना।"

इन *उदाहरणों से यह स्पष्ट है कि क्रियात्मक-उपकल्पना में समस्या के* समाधान के प्रति एक दिशा तथा कार्य-पद्धति का बोध होता है। क्या करना है? तथा उसका परिणाम क्या होगा? यह ज्ञात होता है। कुछ अन्य समस्याओं के लिए भी क्रियात्मक-उपकल्पनाएँ प्रस्तुत की जा रही हैं, पाठक स्वयं यह विश्लेषित करें कि उनमें कार्य एवं लक्ष्य-पक्ष का समावेश किस प्रकार किया गया है।

समस्या का विशिष्ट रूप—जूनियर हाई स्कूल की ६वीं तथा ७वीं कक्षा के छात्रों का हिन्दी में सस्वर वाचन करते समय उच्चारण तथा अनुतान (Intonation) का शुद्ध न होना तथा पर्याप्त गति (Speed) का अभाव।

क्रियात्मक-उपकल्पना—

(१) *यदि छात्रों को गद्य एवं पद्य पाठों में उच्चारण एवं अनुतान की दृष्टि* से सप्ताह में ३ दिन १५ मिनट तक विशेष अभ्यास कराया जाय तो उनके *सस्वर-वाचन एवं अनुतान की अशुद्धियाँ न होंगी।*

(२) यदि छात्रों की वाचन सम्बन्धी गलत आदतों जैसे—जल्दी-जल्दी पढ़ना, शब्दों का बिना समझे पढ़ना, सिर हिलाकर पढ़ना आदि—को रोका *जाय तो वाचन की गति, उच्चारण एवं अनुतान की दृष्टि से पर्याप्त लाभ* होगा।

समस्या का विशिष्ट रूप—विद्यालय में उच्च कक्षाओं (१०वीं तथा १२वीं) के छात्रों द्वारा उनके *अवकाश के कालांशों में विद्यालय के* पुस्तकालय *तथा* वाचनालय का यथेष्ठ प्रयोग न किया जाना।

क्रियात्मक-उपकल्पना—

(१) यदि अवकाश के कालांशों के पूर्व तथा बाद के कालांशों में अधिक कठिन विषय न पढ़ाये जायँ तो छात्र *विद्यालय के* पुस्तकालय तथा वाचनालय — यथेष्ट प्रयोग करेंगे।

(२) यदि पुस्तकालय मे पुस्तकों की व्यवस्था छात्रों की विशिष्ट रुचियो एवं आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर की जाय तो छात्र पुस्तकालय का प्रयोग यथेष्ठ रूप में करेंगे।

समस्या का विशिष्ट रूप—अंग्रेजी में व्याकरण (Sentence-analysis and narration) पढ़ाते समय नवीं कक्षा के छात्र रुचि नहीं दिखाते।

क्रियात्मक-उपकल्पना—

(१) यदि छात्रों को सर्वप्रथम आधारीय वाक्य-साँचों का ज्ञान कराया जाय तो व्याकरण के वाक्य-विग्रह आदि पाठों मे रुचि प्रदर्शित करेंगे।

(२) यदि अध्यापक इन पाठो के पढ़ाते में कुछ चित्रात्मक सहायक सामग्रियों का प्रयोग करें तो छात्रों की रुचि आकर्षित होगी।

(३) यदि छात्रों की पाठ्य पुस्तको मे आये वाक्यों द्वारा ऐसे पाठों का समन्वय किया जाय तो छात्र रुचि लेंगे।

क्रियात्मक-उपकल्पनाओं का निर्माण करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि उनमें लक्ष्य (Goal) तथा कार्य-प्रणाली (Action-procedure) के प्रति स्पष्ट संकेत हो। साथ ही यह भी देखना चाहिए कि जिस कार्य-प्रणाली का उल्लेख किया जाय वह अनुसन्धानकर्ता के सामर्थ्य एवं अधिकार के भीतर हो। कभी-कभी क्रियात्मक-उपकल्पनाओ के कार्यान्वियन मे केवल एक व्यक्ति-अध्यापक अथवा प्रधानाचार्य—पर्याप्त नहीं होता। ऐसी दशा मे इन क्रियात्मक-उपकल्पनाओ का कार्यान्वियन सामूहिक ढंग से करना उचित होगा। इसके लिए विद्यालय मे संगठन एव परस्पर सहयोग की आवश्यकता होती है।

## सोपान ५—क्रियात्मक-उपकल्पना की परीक्षा हेतु उपयुक्त रूपरेखा (Design) तैयार करना

शोध-क्रिया के चार सोपानो तक अनुसन्धानकर्ता समस्या का विश्लेषण एवं उसके समाधान हेतु क्रियात्मक-उपकल्पना का निर्माण करता है। अब वह इस बात की चेष्टा करता है कि क्रियात्मक-उपकल्पना की यथार्थता एवं प्रभावशीलता की परीक्षा हो सके। क्रियात्मक-अनुसन्धान के लिए इस प्रकार की परीक्षा का विशेष महत्व है। वस्तुतः इसी परीक्षा के आधार पर अनुसन्धान करने वाला अध्यापक, प्रधानाचार्य अथवा विद्यालय से सम्बन्धित अन्य व्यक्ति अपने निर्णयो तथा कार्य-पद्धतियों में सुधार व परिवर्तन लाता है। नये निर्णयों एवं क्रियाओं का प्रारम्भ इसी परीक्षा पर निर्भर करता है।

क्रियात्मक-उपकल्पना की परीक्षा हेतु एक उपयुक्त रूपरेखा (Design) निर्मित करनी पड़ती है जिससे विद्यालय के अन्य कार्यक्रमों में किसी प्रकार का

व्यतिक्रम डाले बिना ही अनुसन्धान-कार्य सम्पन्न हो सके। साथ ही इस प्रकार रूपरेखा तैयार कर लेने से क्रियात्मक-उपकल्पना की सत्यता का पता लगाने में अशुद्धियों के लिए कम स्थान रहता है। यह 'रूपरेखा' सम्पूर्ण कार्य को वैज्ञानिक बना देती है। इसके आधार पर अनुसन्धानकर्ता कुछ निश्चित परिणामों पर पहुँचता है और अपनी कार्य-विधियों में होने वाली भूलों को पहचानने में सफल होता है।

उदाहरण के लिए पूर्व उल्लिखित उपकल्पनाओं में से एक की परीक्षा हेतु जो रूपरेखा तैयार की गई, उसे आगे दिया जा रहा है।

क्रियात्मक-उपकल्पना—यदि अंग्रेजी में दिये जाने वाले समस्त लिखित कार्यों को विधिवत् कराया जाय तथा उनका निरीक्षण भी हो तो छात्रों की वर्तनी सम्बन्धी अशुद्धियाँ कम होंगी।

इस उपकल्पना की यथार्थता का पता लगाने के लिए जो रूपरेखा (Design) निर्मित की गई, वह इस प्रकार है—

## क्रियात्मक-उपकल्पना के कार्यान्वयन हेतु रूपरेखा

| क्रियाएँ जो प्रारम्भ करनी हैं | विधि | उपेक्षित साधन | समय |
|---|---|---|---|
| १. अंग्रेजी में दिये जाने वाले लिखित कार्यों की सूची बनाना। | अध्यापक अपने अन्य सहयोगियों की सहायता से यह कार्य करेगा | पाठ्य-पुस्तकें, दो पाठ्यक्रम तथा अन्य सम्बन्धित पुस्तकें | सप्ताह |
| २. लिखित कार्यों की मात्रा निश्चित करना। | समय-सारिणी को देखकर अध्यापक स्वयं यह निश्चित करेगा कि कितने लिखित कार्य इस सत्र में सुविधापूर्वक दिये जा सकते हैं। | समय-सारिणी | " |
| ३. लिखित कार्यों को स्तरित करना। | अन्य सहयोगियों एवं विषय के विशेषज्ञों की सम्मति लेकर | कोई विशेष साधन की आवश्यकता नहीं है। | " |
| ४. लिखित कार्यों को प्रति सप्ताह निश्चित तिथि के भीतर देखना | अध्यापक अपने अन्य सहयोगियों के साथ यह कार्य करेगा। आवश्य- | कोई विशेष साधन की आवश्यकता नहीं है। | एक सप्ताह |

| | | | |
|---|---|---|---|
| तथा उन्हें छात्रों को लौटा देना। | कता पड़ने पर कुछ कुशल छात्रों की सहायता भी ले सकता है। | | |
| ५. लिखित कार्यों के निरीक्षण में उपयुक्त सुझावों को स्थान देना। | अध्यापक अपने अन्य सहयोगियों के साथ यह कार्य करेगा। | कोई विशेष साधन की आवश्यकता नहीं है। | एक सत्र |

इस प्रकार की रूपरेखा प्रस्तुत करते समय यह विशेष ध्यान रखना होगा कि जितना भी समय अथवा साधन क्रियात्मक-उपकल्पना की परीक्षा हेतु आवश्यक है उसका स्पष्ट एवं निश्चित विवरण देना चाहिए। इसके बिना 'रूपरेखा' धुँधली पड़ जाती है और अनुसन्धान-कार्य प्रारम्भ करने मे अनेक कठिनाइयाँ उपस्थित होती हैं। 'रूपरेखा' का अन्तिम रूप निश्चित करते समय कई अनुभवी व्यक्तियो की सम्मति प्राप्त कर लेनी चाहिए।

क्रियात्मक-अनुसन्धान मे इस प्रकार की 'रूपरेखा' का अनुसरण कठोरतापूर्वक नहीं किया जा सकता। समय-समय पर कुछ परिवर्तन लाये जा सकते हैं। कारण यह है कि विद्यालय की परिस्थितियो पर पूर्ण नियन्त्रण नही रखा जा सकता और इसलिए कोई भी योजना कठोरतापूर्वक कार्यान्वित नही हो सकती। किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि 'रूपरेखा' का अनुसरण उसी रूप में सम्भव नही है। रूपरेखा मे परिस्थितियो के अनुसार परिवर्तन लाना तो आवश्यक होता ही है किन्तु उसका व्यापक रूप नहीं बदलता। उसके भीतर की कुछ क्रियाओं मे ही परिवर्तन होता है। इससे उसका सम्पूर्ण रूप नहीं परिवर्तित होता।

स्पष्ट है कि रूपरेखा के अन्तर्गत 'क्रियात्मक-उपकल्पना' के कार्यान्वयन की विधि का उल्लेख किया जाता है। विद्यालय की परिस्थितियों में अमुक उपकल्पना को किस प्रकार लागू किया जा सकता है, इसका स्पष्ट विवरण 'रूपरेखा' के भीतर होता है। इसके अभाव मे अनुसन्धान की क्रियाएँ गतिहीन एवं निरुद्देश्य बन जाती हैं। अनुसन्धानकर्ता भूल एवं प्रयास (Trial and error) की पद्धति अपनाने लग जाता है। अनुसन्धान-कार्य के लिए अपेक्षित सावधानी एवं सुदक्षता नहीं आ पाती। अतः प्रत्येक क्रियात्मक-अनुसन्धान के लिए इस प्रकार की रूप-रेखाओं का निर्माण करना अत्यन्त आवश्यक है।

## सोपान ६—क्रियात्मक-उपकल्पना के सम्बन्ध में अन्तिम निर्णय तथा उसका आधार

क्रियात्मक-उपकल्पना की सत्यता विषयक परीक्षा के सम्बन्ध में क्या परिणाम प्राप्त हुए तथा उनका मूल्यांकन किस प्रकार हो ? आदि प्रश्न अनुसन्धान के अन्तिम चरण में पूछे जाते हैं। इससे अनुसन्धानकर्ता को स्पष्ट जानकारी प्राप्त हो जाती है कि उसके अनुसन्धान का क्या फल है। इसके आधार पर अनुसन्धानकर्ता क्रियात्मक-उपकल्पना की यथार्थता के सम्बन्ध में अन्तिम निर्णय लेता है। यदि क्रियात्मक-उपकल्पना सत्य चरितार्थ होती है तो वह अपनी व्यावहारिक परिस्थितियों में तदनुकूल आचरण करता है। इस प्रकार वह प्रतिवर्ष नई विधियों एवं क्रियाओं का शोध करता है जो उसके विद्यालय की कार्य-प्रणाली को समुन्नत बनाने में सहायक होती हैं। क्रियात्मक-अनुसन्धान का यह अन्तिम सोपान है किन्तु अनुसन्धान-कार्य यहीं पर रुक नहीं जाता। एक के बाद दूसरा और क्रमशः—यह प्रक्रिया चलती रहती है। इसीलिए स्टीफेन एम॰ कोरी ने क्रियात्मक-अनुसन्धान की प्रक्रिया को चक्रवत्[1] कहा है। अभिप्राय यह है कि क्रियात्मक-अनुसन्धान कभी समाप्त नहीं होता। एक क्रिया के बाद दूसरी क्रिया और उसके बाद तीसरी आदि इस क्रम से नई-नई क्रियाओं की प्रभावशालीनता की जाँच हेतु अनुसन्धान निरन्तर चलता रहता है।

क्रियात्मक-उपकल्पना के सम्बन्ध मे अन्तिम निर्णय लेने से तात्पर्य यह है कि अनुसन्धानकर्ता यह निश्चय कर ले कि जिस लक्ष्य को दृष्टिगत रख कर उपकल्पना के अन्तर्गत क्रियाएं सम्पादित की जाती हैं, वह लक्ष्य सिद्ध होता है अथवा नहीं। हम पहले कह चुके हैं कि प्रत्येक क्रियात्मक उपकल्पना के दो पक्ष होते हैं :—लक्ष्य-पक्ष तथा क्रिया-पक्ष। क्रियात्मक-उपकल्पना में जिन क्रियाओं के प्रति निर्देश होता है उनके द्वारा यदि लक्ष्य-विशेष की प्राप्ति होती है तो 'क्रियात्मक-उपकल्पना' को वास्तविक अथवा सत्य घोषित किया जाएगा। यदि लक्ष्य-विशेष की प्राप्ति नहीं होती है तो उसे असत्य अथवा अनुपयोगी माना जाता है।

अब प्रश्न यह है कि इस प्रकार का निर्णय कैसे लिया जाए ? जिस समस्या के बारे में हम 'रूपरेखा' के अन्तर्गत उल्लेख कर चुके हैं, उसके द्वारा ही हम इसे स्पष्ट कर रहे हैं।

---

1 "Action research is cyclical." —*Stephen M. Corey.*

| समस्या का विशिष्ट रूप | क्रियात्मक-उपकल्पना | क्रियात्मक-उपकल्पना की परीक्षा-विधि | क्रियात्मक-उपकल्पना की परीक्षा से सम्बन्धित | |
|---|---|---|---|---|
| | | | साक्षियाँ | अन्तिम-निर्णय |
| कक्षा ९ तथा १० के छात्रों की अंग्रेजी में वर्तनी सम्बन्धी अशुद्धियाँ एवं उनमें सुधार लाना। | यदि अंग्रेजी में दिये जाने वाले समस्त लिखित कार्यों को विधिवत् कराया जाय तथा उनका निरीक्षण भी हो तो छात्रों की वर्तनी सम्बन्धी अशुद्धियाँ कम होंगी। | लिखित कार्यों की मात्रा निश्चित कर तथा उन्हें स्तरित कर अध्यापक अपने अन्य सहयोगियों के साथ लिखित कार्यों का निरीक्षण प्रति सप्ताह निश्चित तिथि के भीतर करेगा तथा सुधार हेतु सुझाव देगा। | (१) छात्रों के लिखित कार्य में वर्तनी की दृष्टि से सुधार—छात्रों की अभ्यास-पुस्तिकाओं द्वारा। (२) वस्तुनिष्ठ (Objective type) परख जिसके द्वारा वर्तनी की योग्यता का पता चलेगा—उसका प्रयोग कर। | यदि छात्रों में पहले की अपेक्षा कम अशुद्धियाँ होती हैं तो इस क्रियात्मक-उपकल्पना को 'सत्य' माना जायगा। |

विचार-पूर्वक देखने पर यह पता चलेगा कि क्रियात्मक-उपकल्पना के सम्बन्ध में अन्तिम निर्णय लेने के लिए यह आवश्यक है कि उसकी परीक्षा-विधि द्वारा प्राप्त परिणामों को ही आधार बनाया जाय। इन्हें हम साक्षियाँ (Evidences) भी कह सकते हैं। इनके द्वारा ही क्रियात्मक-उपकल्पना को सत्य अथवा असत्य घोषित किया जाएगा। ये साक्षियाँ कुछ विशेष प्रकार से प्राप्त की जाती हैं ताकि उनका स्वरूप आत्मनिष्ठ (*Subjective*) न हो। प्राय: इन साक्षियों को परखों (Tests), सम्मति पत्रकों (Opinionnaires), प्रश्नावलियों (Questionnaires) तथा पर्यवेक्षण (Observation) द्वारा स्थापित किया जाता है। परखों, सम्मति-पत्रकों तथा प्रश्नावलियों आदि को पर्याप्त सावधानी के साथ प्रयोग में लाना चाहिए। यदि इनमें कोई दोष रहा तो साक्षियाँ भी दोष-पूर्ण बन जाएँगी। इसीलिए *मूल्याङ्कन विधियों का पर्याप्त विश्वसनीय (Reliable)* तथा वैध (Valid) बनाने का प्रयास किया जाता है।

क्रियात्मक-अनुसन्धान के इन षष्ठ सोपानों को एक कड़ी के रूप में परस्पर सम्बद्ध मानना चाहिए। इन्हें पृथक्-पृथक् समझना भूल है। यदि एक सोपान दूसरे से सम्बन्धित नहीं होता तो अनुसन्धान में भयंकर भूलें हो सकती हैं। श्री *ताबा (Taba)** ने *क्रियात्मक-अनुसन्धान के लिए* केवल ५ सोपानों का उल्लेख किया है। उनके सभी ५ सोपान इन षष्ठ सोपानों में सम्मिलित हैं। आगे के कतिपय अध्यायों में हम यह विस्तारपूर्वक विचार करेंगे कि क्रियात्मक अनुसन्धान के अन्तर्गत समस्याओं के चुनाव, उपकल्पनाओं के निर्माण तथा उनकी जाँच की विधियों में किस तरह सतर्कता बरतनी चाहिए।

---

*1. *Identify the problem as the researcher or staff sees it to* discover what concerns, interests, and problems exist.

2. Analyze the problem by a preliminary investigation to correct misinterpretations *in the initial view of the problem*.

3. Conduct a reanalysis of the problem in light of the findings from the exploratory studies.

4. Project action plans on the experimental design that is expected to bring about the desired result.

5. Test out the plan and evaluate its effectiveness.
—*Hilda Taba*, "Research for Curriculum Development," yearbook of the Association for supervision and curriculum Development, pp.62-63, National Education Association, Washington, 1947.

## सारांश

क्रियात्मक-अनुसन्धान की प्रणाली (Procedure) को समझने के लिए यह आवश्यक है कि पाठक स्वयं अपनी कुछ समस्याओं तथा उनके समाधान प्राप्ति के तरीकों का मूल्याङ्कन करें और इस प्रणाली के अन्तर्गत वर्णित सोपानों से उनकी तुलना करें। क्रियात्मक-अनुसन्धान मे एक वैज्ञानिक विधि का अनुसरण किया जाता है। अतः इसके सोपानो तथा वैज्ञानिक विधि के सोपानों में विशेष अन्तर नहीं है।

इस अध्याय में क्रियात्मक-अनुसन्धान की प्रणाली को अधोलिखित सोपानों द्वारा स्पष्ट किया गया है :—

सोपान १—समस्या के क्षेत्र को भली प्रकार पहचानना तथा उसके प्रति विचारोन्मुख होना।

सोपान २—समस्या-विशेष को परखना तथा उसके स्वरूप एवं क्षेत्र को परिभाषित एवं सीमाङ्कित करना। इसके लिए समस्या-विशेष का सूक्ष्मातिसूक्ष्म विश्लेषण किया जाता है।

सोपान ३—समस्या का स्वरूप-विशेष निश्चित हो जाने पर उसके कारण-भूत तत्वों का विश्लेषण किया जाता है। इन कारणों के लिए उपयुक्त साक्षियाँ भी एकत्र की जाती हैं ताकि अनुसन्धानकर्ता को यह विश्वास हो जाय कि अमुक कारण वास्तविक है न कि काल्पनिक।

सोपान ४—समस्या के कारणों को विश्लेषित कर लेने पर 'क्रियात्मक-उपकल्पना' का निर्माण किया जाता है। ये उपकल्पनाएँ प्रायः समस्या के विश्लेषित कारणों से उत्पन्न होती हैं। इनमे समस्या के समाधान के प्रति दिशा का संकेत होता है। प्रत्येक क्रियात्मक-उपकल्पना को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम भाग मे कार्य-प्रणाली (Procedure) का तथा द्वितीय भाग मे उसके परिणाम अथवा लक्ष्य (Goal) का उल्लेख होता है।

सोपान ५—इस सोपान के अन्तर्गत क्रियात्मक-उपकल्पना की सत्यता का मूल्यांकन करने के निमित्त एक उपयुक्त रूपरेखा (Design) निर्मित की जाती है जिसमें क्रियाओं, उनकी सम्पादन-विधियों तथा उनके सम्पादनार्थ अपेक्षित साधन एवं समय का स्पष्ट एवं निश्चित विवरण दिया जाता है।

सोपान ६—क्रियात्मक-अनुसन्धान का यह अन्तिम सोपान है। इसके द्वारा क्रियात्मक-उपकल्पना की सत्यता अथवा असत्यता के सम्बन्ध में अन्तिम

निर्णय लिया जाता है। अनुसन्धानकर्ता इसके पश्चात् अपनी कार्य-प्रणालियों में अपेक्षित परिवर्तन लाने के लिए उन्मुख होता है। यह अन्तिम निर्णय कुछ विशिष्ट साक्षियों पर आधारित होता है। ये साक्षियाँ पर्याप्त वस्तुनिष्ठ (Objective) होती हैं।

क्रियात्मक-अनुसन्धान की प्रक्रिया में कभी विराम नहीं आता। अनुसन्धानकर्ता जो कुछ भी निर्णय लेता है उसकी सत्यता सतत परीक्षणीय होती है। वह एक निर्णय लेकर वहीं रुक नहीं जाता वरन् आगे के लिए भी सचेष्ट रहता है और इस दृष्टि से अपने निर्णयों का मूल्यांकन सदा वैज्ञानिक विधि के अवलम्बन द्वारा करता रहता है।

# ६

# क्रियात्मक-अनुसन्धान की समस्याओं का चयन तथा उनका मूल्यांकन

**"Many of the problems observed in the classroom, the school, or the community lend themselves to careful investigation. Perhaps they are of greater importance than those more remote from the teacher's experience. Teachers will discover acres of diamonds in their own backyards, and the possessor of the inquisitive and imaginative mind may translate one of these problems into a worthwhile and practicable research project."**

—*John W. Best.*

शिक्षा में क्रियात्मक-अनुसन्धान के लिए पर्याप्त क्षेत्र है। विशेषतौर से विद्यालयों की कार्य-प्रणाली में सुधार एवं प्रगति लाने के लिए क्रियात्मक-अनुसन्धान परमावश्यक है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, प्रत्येक अनुसन्धान-कार्य का प्रारम्भ किसी समस्या-विशेष से होता है। जब तक अनुसन्धानकर्ता समस्या का प्रत्यक्षीकरण भली प्रकार नही करता, अनुसन्धान की भूमिका नहीं प्रस्तुत हो सकती। हमारे विद्यालयो मे क्रियात्मक-अनुसन्धान की दृष्टि से अनेक समस्याएँ अध्ययन का विषय बनाई जा सकती हैं और उनके समाधान द्वारा विद्यालय की कार्य-पद्धति मे सुधार किंवा विकास हेतु मार्ग प्रशस्त किया जा सकता है। विद्यालय के उर्वर प्रांगण मे क्रियात्मक-अनुसन्धान द्वारा अनेकानेक

सुधार-योजनाओं का श्रीगणेश सम्भव है जिनके बीज शीघ्र ही अंकुरित हो सकेंगे और निकट भविष्य में एक सुन्दर विकास-वृक्ष का रूप धारण कर लेंगे।

क्रियात्मक अनुसन्धान की समस्याओं का चयन विद्यालय तथा उसके कार्य-कर्ताओं की कार्य-प्रणाली को विकसित बनाने की दृष्टि से करना चाहिए। यदि अध्यापक अथवा प्रधानाचार्य अपने विद्यालय की समस्याओं को ढूँढ़ना प्रारम्भ करें तो उन्हें प्रत्येक पग पर समस्याओं के दर्शन होंगे। सम्पूर्ण विद्यालय समस्याओं का एक अद्भुत कोष प्रतीत होगा। समस्याओं को देखने के लिए एक विशेष दृष्टि अपनानी पड़ती है। इस दृष्टि को हम वैज्ञानिक अथवा वस्तुनिष्ठ दृष्टि की संज्ञा दे सकते हैं। जब तक हम तटस्थ भाव से अपनी परिस्थितियों का मूल्याङ्कन करना नहीं सीखते, तब तक हमें परिस्थितियों के बाधक तत्वों का पता नहीं लग पाता। इसके अतिरिक्त हमें अपनी परिस्थितियों के प्रति जागरूक रहना चाहिए। तभी हम समस्याओं को इङ्गित कर सकते हैं।

समस्याओं के पहचानने में व्यक्तिगत भिन्नता (Individual differences) का सिद्धान्त काम करता है। एक ही परिस्थिति में कुछ व्यक्तियों को समस्या दिखाई पड़ती है तो कुछ को नहीं। जिसे हम समस्या के रूप में देखते हैं उसे दूसरा व्यक्ति देख भी नहीं पाता। सभी अध्यापक विद्यालय के पुस्तकालय में नित्य जाते हैं किन्तु उनमें से कुछ ही ऐसे होते हैं जो पुस्तकालय का उचित उपयोग न होने से व्यग्रता का अनुभव करते हैं। कहने का आशय यह है कि समस्या के प्रति संवेदनशीलता (Sensitivity) किसी में कम होती है तथा किसी में अधिक। अस्तु, क्रियात्मक-अनुसन्धान में समस्या का चयन अध्यापकों, प्रधानाचार्यों, निरीक्षकों तथा प्रबन्धकों की व्यक्तिगत संवेदनशीलता पर निर्भर है।

## क्रियात्मक-अनुसन्धान में समस्याओं के स्रोत

शिक्षा में क्रियात्मक-अनुसन्धान की समस्त समस्याएँ विद्यालय की कार्य-

कार्य प्रणाली
परीक्षण २
पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं का आयोजन ३
विद्यालय का संगठन एवं प्रबन्ध ४
समस्याएँ
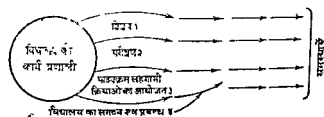
पद्धति से घनिष्ठ रूप में सम्बन्धित होती हैं। प्रत्येक समस्या का उद्गम विद्या-

लय की कार्य-प्रणाली में ढूँढ़ा जा सकता है।

विद्यालय की समस्याओं का मूल स्रोत विद्यालय की कार्य-प्रणाली को ही मानना समीचीन है। किन्तु स्पष्टता के लिए इस मूल स्रोत को (जैसाकि पूर्वपृष्ठ में प्रदर्शित किया गया है) चार रूपों में विवेचित किया जा सकता है—

(१) शिक्षण से सम्बन्धित समस्याएँ।
(२) परीक्षण से सम्बन्धित समस्याएँ।
(३) पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं के आयोजन से सम्बन्धित समस्याएँ। तथा
(४) विद्यालय के सङ्गठन एवं प्रबन्ध से सम्बन्धित समस्याएँ।

(१) शिक्षण से सम्बन्धित समस्याएँ--शिक्षण-क्रिया का अन्तिम लक्ष्य बालक के व्यवहारों मे परिवर्तन लाना होता है। यह व्यवहार-परिवर्तन बालक के आन्तरिक तथा बाह्य दोनों पक्षो में होते हैं। विद्यालय में पढ़ाये जाने वाले विषयों द्वारा इस प्रकार के व्यवहार-परिवर्तन अभीष्ट होते हैं। शिक्षक अपनी शिक्षण-विधि, सहायक-सामग्री तथा अन्य उपयोगी साधनों का प्रयोग इसलिए करता है ताकि बालक के व्यवहारो में अभीष्ट परिवर्तन आ सके। इस प्रकार शिक्षण-प्रक्रिया से सम्बन्धित अनेक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। ये समस्याएँ शिक्षक तथा शिक्षार्थी दोनों की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। इन समस्याओं को मुख्यतः निम्नांकित रूप मे वर्गीकृत किया जा सकता है—

(क) पाठ्य-वस्तु को समझने की समस्या।
(ख) उपयुक्त शिक्षण-विधि की समस्या।
(ग) शिक्षक-शिक्षार्थी सम्बन्ध विषयक समस्याएँ।
(घ) कक्षा में शिक्षण के लिए उपयुक्त वातावरण उत्पन्न करने की समस्या।
(ङ) छात्रों में परस्पर आदान-प्रदान (Inter Communication) की समस्या।
(च) गृह-कार्य तथा लिखित कार्य की समस्या।
(छ) वाचन (सस्वर तथा मौन) की समस्या।
(ज) वर्तनी की समस्या।
(झ) प्रभावोत्पादक अभिव्यक्ति (लिखित तथा मौखिक) की समस्या।
(ञ) शुद्ध उच्चारण की समस्या।
(ट) छात्रों की रुचि न लेने तथा अनवधान विषयक समस्याएँ।
(ठ) कक्षा में विलम्ब से आने की समस्या।

अनुभवी शिक्षक अपनी समस्याओं का वर्गीकरण पूर्व वर्णित किसी न किसी श्रेणी में अवश्य प्राप्त कर लेगा। समस्याओं को पहचाना जा सके, इसके लिए यह एक सुगम तरीका है। इन समस्याओं को अच्छी प्रकार परिभाषित एवं सीमाङ्कित करने के बाद ही अनुसन्धान-कार्य प्रारम्भ किया जा सकता है।

(२) परीक्षण से सम्बन्धित समस्याएँ—शिक्षण तथा परीक्षण दोनों ही विद्यालय की महत्वपूर्ण क्रियाएँ हैं। छात्रों की उपलब्धियों का मापन नितान्त आवश्यक है। इसके द्वारा छात्रों की प्रगति का अनुमान लगाया जाता है। विद्यालयों में परीक्षण से सम्बन्धित समस्याओं को समझने के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षक तथा प्रधानाचार्य शिक्षा के उद्देश्यों को न भूलें। वे परीक्षण को एक महत्वपूर्ण क्रिया के रूप में समझें।

आजकल शिक्षा में मूल्याङ्कन पर विशेष बल दिया जा रहा है। मूल्याङ्कन के अन्तर्गत शिक्षार्थी को ही केन्द्र मानकर परीक्षाएँ आयोजित की जाती हैं। अध्यापक को अपने दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक अथवा मासिक मूल्याङ्कन की *विधियों में पर्याप्त सुधार लाना चाहिए। परीक्षण से सम्बन्धित समस्याओं का* वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है—

(क) परीक्षण विधि की विश्वसनीयता (Reliability) एवं वैधता (Validity) की समस्या।
(ख) परीक्षण में प्रयुक्त होने वाले परखों (Tests) के निर्माण की समस्याएँ।
(ग) विविध परखों के प्रयोग की समस्याएँ।
(घ) परीक्षाओं द्वारा छात्रों की उपलब्धियों को बढ़ाने की समस्या।
(ङ) परीक्षाओं के प्रश्न-पत्रों में छात्रों को अधिक विकल्प (Alternatives or options) देने की समस्या।
(च) प्रश्न-पत्रों में निबन्धात्मक एवं वस्तुनिष्ठ परखों के समन्वय की समस्या।
(छ) निदानात्मक (Diagnostic) परखों का निर्माण एवं उनका प्रयोग कब तथा किस उद्देश्य से किया जाय। इससे सम्बन्धित समस्याएँ।
(ज) परीक्षण तथा शिक्षण में समन्वय लाने की समस्या।

परीक्षण से सम्बन्धित इन समस्याओं पर क्रियात्मक-अनुसन्धान की योजना अध्यापक एवं प्रधानाचार्य दोनों के सहयोग होने पर ही कार्यान्वित हो सकती है। इनमें से कुछ समस्याओं का अध्ययन अध्यापक स्वयं करेगा किन्तु प्रधानाचार्य की सम्मति अथवा सहयोग के बिना यह कदापि सम्भव नहीं हो सकता।

अनुसन्धान प्रारम्भ करने से पूर्व इन समस्याओं के स्वरूप को और विश्लेषित करना होगा।

**(३) पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं के आयोजन से सम्बन्धित समस्याएँ—** प्रत्येक विद्यालय में पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं का आयोजन किया जाता है। इन क्रियाओं से बालकों का सामाजिक, सांवेगिक एवं चारित्रिक विकास करना परम उद्देश्य होता है। बालकों में प्रजातांत्रिक गुणों यथा : परस्पर सहयोग एवं मैत्री भाव से किसी कार्य को करना, नेतृत्व-ग्रहण की क्षमता आदि का सञ्चार किया जाता है तथा उन्हें भावात्मक एकता (Emotional integration) की ओर आकर्षित किया जाता है। समाज की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए जिस प्रकार के सामाजिक सदस्यों की माँग है, उन्हें तैयार करने की जिम्मेवारी विद्यालयों तथा अन्य सामाजिक संस्थाओं पर होती है। इसी दृष्टि से विद्यालय के अन्तर्गत विविध क्रियाओं का आयोजन किया जाता है। पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाएँ विद्यालय में महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। इन क्रियाओं के आयोजन में पर्याप्त सावधानी बरतनी चाहिए क्योंकि विद्यालय में एक शैक्षणिक वातावरण का निर्माण पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं के सम्यक् सञ्चालन पर ही विशेष निर्भर करता है। विद्यालय समाज की क्रियाओं का लघु रूप में प्रतिनिधित्व करता है। पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाएँ समाज में बड़े पैमाने पर सम्पादित होने वाली क्रियाओं का उत्तरदायित्व ग्रहण करने हेतु छात्रों को सक्षम बनाती हैं तथा इनके द्वारा विद्यालय में एक सामूहिक जीवन (Corporate life) की स्थापना होती है।

क्रियात्मक-अनुसन्धान द्वारा पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं का संगठन अधिक प्रभावशाली ढंग से किया जा सकता है। इन क्रियाओं से विद्यालय की गतिविधियों में सामाजिक चेतना का प्राण फूँका जा सकता है। उन्हें विद्यालय तथा उसमें पढ़ने वाले छात्रों के लिए सर्वथा लाभदायक बनाया जा सकता है। इन क्रियाओं की व्यवस्था करते समय अध्यापक तथा प्रधानाचार्य कतिपय समस्याओं का सामना कर सकते हैं। ये समस्याएँ पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं को सार्थक बनाने में बाधक होती हैं। इस प्रकार की समस्याओं को निम्नांकित रूप में विभाजित किया जा सकता है—

(क) पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं में छात्रों द्वारा स्वयं रुचि न लेना।

(ख) इन क्रियाओं के संगठन में अनुशासन की समस्या।

(ग) विविध पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं यथा : वाद-विवाद प्रतियोगिता, अन्त्याक्षरी, प्रहसन तथा सांस्कृतिक कार्य-क्रम आदि का विद्यालय की परम्परा का निर्वाह करने के रूप में संगठन।

(घ) अध्यापकों द्वारा इन क्रियाओं में यथेष्ठ रुचि एवं उत्साह का प्रदर्शन न किये जाने की समस्या।

(ङ) विविध पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं का विधिवत् आयोजन न होना।

(च) पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं को विद्यालय का आडम्बर मात्र समझने की समस्या।

(छ) पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं के संगठन हेतु अपेक्षित साधनों का अभाव।

(ज) पाठ्य-क्रम तथा इन क्रियाओं में परस्पर समन्वय न लाने की समस्या।

इन समस्याओं का क्रियात्मक-अनुसन्धान के माध्यम से हल प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि अध्यापक एवं प्रधानाचार्य दोनों ही प्रयत्नशील हों। विशेष परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए समस्याओं का परिभाषीकरण एवं सीमांकन कर लेना सर्वथा उपयुक्त होगा।

(४) विद्यालय के संगठन व प्रबन्ध से सम्बन्धित समस्याएँ—प्रजातंत्र में विद्यालयों को एक गम्भीर उत्तरदायित्व का निर्वाह करना पड़ता है। विद्यालयों में संगठन एवं प्रबन्ध इस दृष्टि से किये जाने चाहिए कि अध्यापक वर्ग तथा छात्रों में अपने राष्ट्र के प्रति चेतनता आवे। इसके लिए यह आवश्यक है कि विद्यालय के संगठन एवं प्रबन्ध से सम्बन्धित समस्याओं का समाधान प्रजातांत्रिक तरीके से किया जाय। क्रियात्मक-अनुसन्धान इस प्रकार की समस्याओं के लिए सर्वोत्तम है। इस क्षेत्र में अधोलिखित प्रकार की समस्याओं का उल्लेख किया जा सकता है—

(क) विद्यालय में विविध क्रियाओं (जैसे-शिक्षण, पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाएँ, परीक्षण आदि) में समन्वय लाने की समस्या।

(ख) विद्यालय में एक शैक्षणिक वातावरण निर्मित करने की समस्या।

(ग) अध्यापकों में परस्पर सहयोग एवं संगठन के साथ कार्य करने के प्रति प्रेरणा प्रदान करना।

(घ) विद्यालय के अन्तर्गत अध्यापक संघ तथा छात्र संघ के कार्यों का समुचित पर्यवेक्षण।

(ङ) विद्यालय में अनुशासन की समस्या।

(च) विद्यालय के पुस्तकालय तथा वाचनालय में पर्याप्त सुविधाएँ प्रदान करने की समस्या।

(छ) कक्षा कक्षों को स्वच्छ एवं आकर्षक बनाए रखने की समस्या।

(ज) विविध विषयों (यथा : विज्ञान, भूगोल, इतिहास आदि) के कक्षा-गृहों में पर्याप्त साज-सज्जा का प्रबन्ध करना।
(झ) अध्यापकों तथा छात्रों में अन्तर्मानवीय सम्बन्धों की समस्याएँ।
(ञ) विद्यालय में भावात्मक-एकता की समस्या।
(ट) विद्यालय के स्तर को ऊँचा उठाने की समस्या।

विद्यालय के संगठन तथा प्रबन्ध से सम्बन्धित समस्याओं का समाधान शिक्षा की दृष्टि से बड़ा ही मूल्यवान् होगा। विद्यालयों में एक समुचित वातावरण का होना आज की एक विशेष आवश्यकता है। क्रियात्मक-अनुसन्धान द्वारा इस प्रकार का वातावरण सहज ही निर्मित किया जा सकता है। अध्यापकों तथा प्रधानाचार्यों को चाहिए कि विद्यालय के संगठन तथा प्रबन्ध से सम्बन्धित समस्याओं का चुनाव परस्पर विचार-विमर्श के आधार पर करें।

## क्रियात्मक-अनुसन्धान की समस्याओं का चयन

समस्याओं का चयन सरल कार्य नहीं है। जिस परिस्थिति में हम कार्य करते हैं उसे आलोचनात्मक दृष्टि से देखने पर ही समस्याओं का पता लग सकता है। हम लोगों में से कितने ही व्यक्ति समस्याओं को देखने में असमर्थ होते हैं। ऐसे लोगों को अनुसन्धान की भाषा में समस्यान्ध (Problem-blind) की संज्ञा दी जा सकती है। क्रियात्मक-अनुसन्धान में समस्याओं का चुनाव करने के लिए प्रथम आवश्यकता यह है कि अध्यापक अथवा प्रधानाचार्य अपने अधिकार क्षेत्र के भीतर उन कठिनाइयों के बारे में संवेदनशील बनें जिनसे उन्हें अपने कार्यों में बाधा पहुँचती है। तत्पश्चात् कतिपय कठिनाइयों की एक सूची स्वयं निर्मित करें। इन कठिनाइयों के स्वरूप का विश्लेषण करते हुए उन्हें अनुसन्धान के लिए उपयुक्त 'समस्या' की प्राप्ति होगी।

क्रियात्मक-अनुसन्धान में समस्या का चुनाव करते समय निम्नांकित बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिए—

१. समस्या का सम्बन्ध विद्यालय से हो। विद्यालय की कार्य-प्रणाली से उसका प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में सम्बन्ध अवश्य होना चाहिए।
२. समस्या का अध्ययन विद्यालय के अन्दर सम्भव हो क्योंकि विद्यालय के व्यक्ति ही समस्या का अध्ययन करते हैं।
३. समस्या का अस्तित्व वास्तविक रूप में हो अर्थात् समस्या काल्पनिक न हो।
४. समस्या अनुसन्धानकर्ता-विशेष के अधिकार क्षेत्र के भीतर हो

*अर्थात् समस्या का प्रत्यक्ष सम्बन्ध उस व्यक्ति से होना चाहिए जो उसे अनुसन्धान का विषय बना रहा है।*

५. समस्या के समाधान की वास्तविक आवश्यकता हो।
६. समस्या का क्षेत्र न तो अत्यन्त व्यापक (Too wide) हो और न अत्यन्त संकुचित (Too narrow) हो।
७. समस्या का वस्तुनिष्ठ विश्लेषण ( Objective analysis ) सम्भव हो।
८. समस्या का जिस परिस्थिति से सम्बन्ध हो उसका निश्चित पता हो।
९. समस्या का सम्बन्ध जिस व्यक्ति से हो वह स्वयं उसका प्रत्यक्षीकरण करे।

समस्याओं का चुनाव पर्याप्त सावधानीपूर्वक करना चाहिए। कभी-कभी व्यावहारिक परिस्थितियों में ऐसी समस्याएँ खड़ी हो जाती हैं जिनका समाधान प्राप्त करने के लिए किसी प्रकार के अनुसन्धान की आवश्यकता नहीं होती। *ऐसी समस्याएँ साधारण चिन्तन के आधार पर हल की जा सकती हैं।* अनुसन्धानकर्ता को इस प्रकार की समस्याओं से बचना चाहिए।

*क्रियात्मक-अनुसन्धान में समस्या का चुनाव कुछ विशेष तत्वों पर आधा*रित होता है। इन तत्वों (Factors) को हम इस प्रकार समझ सकते हैं—

(१) *अनुभूत आवश्यकता (Felt need)—सामान्य परिस्थिति में जब तक* हमें परिवर्तन एवं सुधार की आवश्यकता का अनुभव नहीं होता, समस्याओं को पहचानना कठिन होता है। अनुसन्धान के लिए समस्याओं का चुनाव करने के निमित्त यह एक आधारभूत तत्व है। इसे हम प्रेरणा (Motivation) भी कह सकते हैं। व्यक्ति किसी समस्या का चुनाव तब तक नहीं कर सकता जब तक कि वह प्रेरणान्वित न हो। यह प्रत्येक कार्य के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

(२) **परिस्थितियों का वस्तुनिष्ठ विश्लेषण** (Objective analysis of the situations)—जिस परिस्थिति में हम कार्य करते हैं, उसका तटस्थ रूप में विश्लेषण किये बिना अनुसन्धान हेतु समस्याओं का चयन नहीं किया जा सकता। जब हम किसी कार्य को करते समय व्यक्तिगत रूप में लिप्त होते हैं तो समस्याओं की पहचान नहीं हो पाती, किन्तु वस्तुनिष्ठ ढंग से उस कार्य-पद्धति का विश्लेषण करने पर अनेक समस्याएँ दृष्टिगोचर होने लगती हैं।

(३) **परिस्थितियों के प्रति आलोचनात्मक दृष्टि** (Critical attitude towards the situations)—परिस्थितियों का वस्तुनिष्ठ विश्लेषण करने के साथ-साथ यह भी आवश्यक है कि उनके प्रति आलोचनात्मक दृष्टि रखी जाय। स्वस्थ आलोचनाएँ अनुसन्धान के निमित्त कई समस्याओं को जन्म देती हैं।

(४) गोष्ठियाँ एवं विचार-विमर्श (Seminars and discussions)—अनुसन्धान के लिए समस्याओं का चयन करने के निमित्त गोष्ठियों की सहायता ली जा सकती है। अपनी समस्याओं को स्पष्ट रूप से समझने के लिए विचार-विमर्श पद्धति अत्यन्त प्रभावशाली सिद्ध होती है। अध्यापक, प्रधानाचार्य, प्रबन्धक एवं निरीक्षक शैक्षणिक गोष्ठियों एवं विचार-विमर्श सभाओं के माध्यम से क्रियात्मक-अनुसन्धान के लिए अनेक उपयुक्त समस्याओं का चुनाव सरलतापूर्वक कर सकते हैं। जब विद्यालय की परिस्थितियों के बारे में कई क्रियाशील मस्तिष्क एक साथ विचार करेंगे तो निश्चय ही उत्तम फल प्राप्त होंगे। विद्यालय की समस्याओं को पहचानने का सबसे सुगम ढंग विचार-विमर्श है। समूह में विचार करने से हमें एक दूसरे के चिन्तन का ज्ञान होता है। हम दूसरों के विचारों से अवगत होते हैं। हमें अपनी कूपमण्डूकता से ऊपर उठने का संकेत प्राप्त होता है। सामूहिक चिन्तन का सबसे बड़ा लाभ यह है कि हमें किसी परिस्थिति अथवा विषय विशेष पर एक साथ कई दृष्टिकोण उपलब्ध हो जाते हैं। अनुसन्धान के निमित्त समस्याओं का चुनाव गोष्ठियों तथा विचार-विमर्श सभाओं के अवलम्बन से करना अधिक विश्वसनीय एवं वैज्ञानिक भी है।

(५) विद्यालय की प्रक्रियाओं में अन्तर्दृष्टि (Insight into the school processes)—समस्या का चुनाव इस बात पर भी निर्भर करता है कि अभ्यासकर्ताओं (यथा—अध्यापक, प्रधानाचार्य अथवा निरीक्षक) में विद्यालय की प्रक्रियाओं के समझने में किस प्रकार की सूझ अथवा अन्तर्दृष्टि विद्यमान है। सूझ का सम्बन्ध हमारे अनुभवों से अधिक होता है। अनुभवों की दृष्टि से हम जितना समृद्ध बनते जाते हैं, हमारी अन्तर्दृष्टि भी उतनी ही पैनी होती रहती है। इसीलिए अनुभवी व्यक्ति नवसिखुओं की तुलना में समस्याओं को शीघ्रतापूर्वक इंगित कर देते हैं।

(६) शिक्षा के क्षेत्र में हुए अनुसन्धानों की जानकारी (Knowledge of the researches done in the field of Education)—क्रियात्मक अनुसन्धान की कतिपय समस्याओं का चुनाव शिक्षा के क्षेत्र में हुए अनुसन्धान-कार्यों के सम्पर्क में किया जा सकता है। सम्भव है शिक्षक किसी नई शिक्षण-विधि (जिस पर शोध-कार्य अन्यत्र हो चुका हो) का प्रयोग अपनी परिस्थितियों में करना चाहता हो, छात्रों को नये ढंग से भाषा सीखने के लिए प्रोत्साहित करना चाहता हो। यदि इन दिशाओं में क्रियात्मक-अनुसन्धान की समस्याएँ मौलिक-अनुसन्धानों द्वारा समर्थित हों तो इस प्रकार के प्रयोग अधिक मितव्ययी सिद्ध होंगे।

समस्याओं के चयन में सहायक इन षष्ठ तत्वों को सम्मिलित रूप में समझना चाहिए। इन्हें पृथक्-पृथक् कदापि नहीं मानना चाहिए। पाठकों की बोधगम्यता के लिए इसे हम निम्नांकित रूप में अभिव्यक्त कर सकते हैं—

क्रियात्मक-अनुसन्धान की समस्याओं का चयन=

१
४+५+६
१+२+३+

| १<br>अनुकूल आवश्यकताएँ + | २<br>वस्तुनिष्ठ विश्लेषण + | ३<br>आलोचनात्मक दृष्टि |
|---|---|---|
| ४<br>विचार-विमर्श + | ५<br>अन्तर्दृष्टि + | ६<br>शिक्षा के क्षेत्र में हुए अन्य अनुसन्धानों का ज्ञान |

गुड तथा स्केट्स ने अनुसन्धान की समस्याओं का चुनाव करने के लिए मापदण्डों की एक विस्तृत सूची प्रस्तुत की है जो इस प्रकार है—

१. समस्या की नवीनता एवं अनावश्यक आवृत्ति का न होना।
२. जिस क्षेत्र का प्रतिनिधित्व समस्या द्वारा हो रहा हो उसके लिए उसका महत्त्व तथा उसका कार्यान्वयन
३. रुचि, मानसिक उत्सुकता तथा इच्छा।
४. प्रशिक्षण एवं व्यक्तिगत योग्यताएँ।
५. प्रदत्त एवं विधियों का उपलब्ध होना।
६. विशेष उपकरण एवं कार्य के अनुकूल परिस्थितियाँ।
७ प्रवर्तिता एवं प्रशासनिक सहयोग।

---

*1. Novelty and avoidance of unnecessary duplication.
2. Importance for the field represented and implementation.
3. Interest, intellectual curiosity, and drive.
4. Training and personal qualifications.
5. Availability of data and method.
6. Special equipment and working conditions.
7. Sponsorship and administrative cooperation.

८. लागत एवं प्रतिफल।[8]

९. जोखिम, क्षति एवं असुविधाएँ।[9]

१०. समय[10]

अनुसन्धान की समस्याओं का चुनाव बड़े सोच-विचार कर किया जाता है। शोधकर्ता प्रत्येक पहलू से समस्या का मूल्याङ्कन करता है तत्पश्चात् उसे शोध का विषय बनाता है। क्रियात्मक-अनुसन्धान में समस्या का चुनाव परिस्थितियों के माध्यम से किया जाता है। प्रत्येक विद्यालय अपनी परिस्थितियों की दृष्टि से निराला (Unique) होता है। क्रियात्मक-अनुसन्धान की समस्याएँ विद्यालय की परिस्थितियों के अनुकूल होंगी। अतः प्रत्येक विद्यालय की समस्याओं में कुछ न कुछ निरालापन (Uniqueness) अवश्य होगा। आशय यह है कि क्रियात्मक-अनुसन्धान की समस्याओं में पर्याप्त भिन्नता होगी क्योंकि विद्यालय की परिस्थितियाँ भिन्न-भिन्न होती हैं।

## क्रियात्मक-अनुसन्धान की समस्याओं को परिभाषित एवं सीमांकित करना

समस्याओं का चुनाव हो जाने पर अनुसन्धानकर्ता उनके स्वरूपों का विशेष विश्लेषण करता है। किसी एक समस्या को लेकर वह उसके विशेष अंशों की परीक्षा अत्यन्त सूक्ष्मतापूर्वक करता है। समस्या विशेष का सांगोपांग विश्लेषण हो जाने पर उसके स्वरूप को परिभाषित एवं सीमांकित करता है।

परिभाषित करने से तात्पर्य है समस्या की स्थापना निश्चित रूप में करना। समस्या को भली प्रकार परिभाषित करने के लिए यह आवश्यक है कि उसके अन्तर्गत प्रयुक्त शब्दों तथा उनके अर्थों को बाँध दिया जाय। समस्या के स्वरूप को द्योतित करने के लिए जिन शब्दों का प्रयोग किया जाय उन्हें अनेकार्थी न बनने दिया जाय।

सीमांकित करने से अभिप्राय है समस्या के क्षेत्र को घेर देना ताकि उसके समाधान की ओर उन्मुख होने में सरलता हो। सीमांकन में समस्या की सीमाओं को आबद्ध किया जाता है। इससे समस्या के स्वरूप के बारे में विवाद के लिए कोई स्थान नहीं रह जाता।

क्रियात्मक-अनुसन्धान के लिए समस्याओं का परिभाषीकरण एवं सीमांकन अत्यन्त महत्वपूर्ण है। अनुसन्धान की सफलता का श्रेय समस्या के उचित

---

8. Costs and returns.
9. Hazards, penalties, and handicaps.
10. Time factor.

—*Carter V. Good and Douglas, E. Scates, "Methods of Research", p. 49.*

सीमांकन एवं परिमापीकरण पर विशेष रूप से होता है। आगे हम कतिपय उदाहरणों द्वारा यह स्पष्ट करेंगे कि क्रियात्मक-अनुसन्धान के क्षेत्र में अध्यापक अथवा प्रधानाचार्य अपनी समस्याओं को किस प्रकार परिभाषित एवं सीमांकित कर सकता है।

उदाहरण—क्रियात्मक-अनुसन्धान के लिए कुछ माध्यमिक विद्यालयों के प्रधानाचार्यों तथा अध्यापकों ने निम्नलिखित समस्याएँ बताईं—

समस्या—(१) छात्रों में अनुशासनहीनता की समस्या।

समस्या—(२) छात्रों की अंग्रेजी एवं हिन्दी का स्तर ठीक न होना।

समस्या—(३) अध्यापकों में परस्पर सहयोग की भावना का अभाव।

समस्या—(४) छात्रों में अध्ययनशीलता का ह्रास होना।

इन समस्याओं पर अनुसन्धान प्रारम्भ करने से पूर्व यह आवश्यक है कि इनके स्वरूप को भली प्रकार परिभाषित किया जाय तथा उनके क्षेत्र को भी सीमांकित कर लिया जाय ताकि किसी प्रकार का विवाद न हो। इन्हें परिभाषित करने के लिए अधोलिखित ढंग अपनाया जा सकता है—

*समस्या (१) 'अनुशासन' शब्द से यहाँ तात्पर्य है—*

(क) छात्रों का अपने से बड़ों के प्रति विनम्रतापूर्वक आचरण।

(ख) अपने सहपाठियों के साथ सहानुभूति एवं मित्रतापूर्ण व्यवहार।

(ग) विद्यालय की विशेष परिस्थितियों में अनुकूल आचरण करना।

(घ) विद्यालय के नियमों को भंग न करना।

*(ङ) कक्षा में शान्त वातावरण बनाये रखना।*

इस प्रकार 'अनुशासन' शब्द को परिभाषित करने पर अनुशासनहीनता की समस्याओं को विशिष्ट रूप से इंगित किया जा सकता है। अध्यापक इस प्रकार की समस्याओं की एक सूची तैयार करेगा तदुपरान्त यह निश्चय करेगा कि विद्यालय में इस प्रकार की कितनी समस्याएँ हैं। समस्या को इस प्रकार परिभाषित करने के पश्चात् अनुसन्धान के लिए वह समस्या का क्षेत्र सीमांकित करेगा। 'अनुशासनहीनता' वह केवल विद्यालय के नियमों को भंग करने तथा कक्षा में शान्त वातावरण न बनाये रखने के रूप में ही अध्ययन करेगा। साथ ही इस प्रकार की समस्याओं को सीनियर कक्षाओं (१० वीं तथा १२ वीं) तक ही सीमित रखेगा।

इस दृष्टि से उक्त समस्या का परिभाषित एवं सीमांकित रूप इस प्रकार होगा—

"विद्यालय की सीनियर कक्षाओं के छात्रों (१० वीं तथा १२ वीं) में विद्यालय के नियम भंग करने तथा कक्षा मे शान्ति न बनाये रखने की प्रवृत्ति का अध्ययन करना"

शेष तीन समस्याओ का परिभाषित एवं सीमांकित रूप इस प्रकार प्रस्तुत किया जा रहा है—

समस्या (२) छात्रों (सीनियर कक्षाओं) की अंग्रेजी एवं हिन्दी की अभिव्यक्ति (लिखित तथा मौखिक) अध्यापक द्वारा निर्धारित मापदण्ड के अनुकूल न होना।

अथवा

छात्रों ( जूनियर कक्षाओ ) की अंग्रेजी एवं हिन्दी के उच्चारणों में अनेक अशुद्धियाँ होना।

समस्या (३) पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओ के आयोजन में विद्यालय के अध्यापकों द्वारा परस्पर सहयोग न देना।

समस्या (४) विद्यालय के वाचनालय तथा पुस्तकालय में पढ़ने वाले छात्रों की संख्या प्रतिवर्ष न्यून होना।

इन समस्याओं को अन्य कई रूपों में परिभाषित एवं सीमांकित किया जा सकता है। अध्यापक अथवा प्रधानाचार्य अनुसन्धान प्रारम्भ करने से पहले *अपने विद्यालय की परिस्थितियों पर पूर्ण रूप से विचार कर इन समस्याओं* का यथानुकूल परिभाषीकरण एवं सीमांकन करेंगे।

परिभाषीकरण मे यह ध्यान देना चाहिए कि समस्या को अभिव्यक्त करते समय ऐसे शब्दों का प्रयोग न हो जिनसे अर्थ का स्पष्ट बोध न हो अथवा जिनके अर्थों को स्पष्ट न किया जा सके।

सीमांकन मे समस्या के क्षेत्र को बांधा जाता है जिससे उसका अध्ययन सुगम हो सके।

## क्रियात्मक-अनुसन्धान की समस्याओं का मूल्यांकन

समस्या का चुनाव, परिभाषीकरण एवं सीमांकन करने के साथ-साथ यह भी आवश्यक है कि उसका मूल्यांकन कई दृष्टियों से कर लिया जाय ताकि अनुसन्धानकर्ता को यह स्पष्ट रहे कि अमुक समस्या के अध्ययन से अमुक प्रकार के फल अपेक्षित हैं। अनुसन्धान हेतु समस्या की मुख्य स्थापना इस प्रकार के मूल्यांकन पर निर्भर होती है। अनुसन्धानकर्ताओं की सुविधा हेतु लेखक की ओर से प्रस्तुत 'मूल्यांकन पत्रक' क्रियात्मक-अनुसन्धान की समस्याओ के मूल्यांकनार्थ प्रयुक्त किया जा सकता है। यह 'मूल्यांकन पत्रक' आगे के पृष्ठ पर है।

## क्रियात्मक-अनुसन्धान की समस्याओं के लिए मूल्यांकन-पत्रक

१. क्या समस्या का वास्तविक रूप निश्चित तथ्यों द्वारा निर्धारित हो चुका है ? हाँ/नहीं
२. क्या समस्या के अध्ययन से विद्यालय की कार्य-प्रणाली पर कोई प्रभाव पड़ेगा ? हाँ/नहीं
३. क्या समस्या का अध्ययन विद्यालय की परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए सम्भव है ? हाँ/नहीं
४. क्या समस्या का प्रत्यक्ष सम्बन्ध अनुसन्धानकर्ता से है ? हाँ/नहीं
५. क्या समस्या का हल विद्यालय के अन्तर्गत हो सकता है ? हाँ/नहीं,
६. क्या समस्या के मुख्य-मुख्य पक्षों का विश्लेषण भली प्रकार कर लिया गया है ? हाँ/नहीं
७. क्या समस्या का परिभाषीकरण एवं सीमांकन स्पष्टतापूर्वक किया गया है ? हाँ/नहीं
८. क्या समस्या का महत्त्व विद्यालय की प्रगति की दृष्टि से है ? हाँ/नहीं
९. क्या समस्या के अध्ययन के लिए अपेक्षित वातावरण का निर्माण सम्भव है ? हाँ/नहीं
१०. क्या समस्या के प्रति अनुसन्धानकर्ता रुचि रखता है ? हाँ/नहीं
११. क्या अनुसन्धानकर्ता अपनी क्षमताओं के आधार पर समस्या का अध्ययन सफलतापूर्वक कर सकता है ? हाँ/नहीं
१२. क्या समस्या के अध्ययन हेतु अनुसन्धान विशेषज्ञों की सम्मति उपलब्ध है ? हाँ/नहीं

इस 'मूल्यांकन-पत्रक' में १२ प्रश्न दिये गये हैं। यदि किसी समस्या का मूल्यांकन इन प्रश्नों द्वारा किया जा रहा हो तो ६ से अधिक प्रश्नों का उत्तर स्वीकारात्मक (हाँ) रूप में आने पर ही समस्या को अनुसन्धान हेतु मान्यता देनी चाहिए। विद्यालयों में क्रियात्मक-अनुसन्धान की समस्याओं का चयन इस 'मूल्यांकन-पत्रक' की सहायता से सुविधापूर्वक किया जा सकता है।

## सारांश

शिक्षा में क्रियात्मक-अनुसन्धान की समस्याओं के चयन हेतु मुख्य चार स्रोत हैं, शिक्षण, परीक्षण, पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं का आयोजन एवं

विद्यालय संगठन तथा प्रबन्ध। ये सभी स्रोत विद्यालय की कार्य-प्रणाली से अविच्छिन्न रूप में सम्बन्धित हैं। इन चार स्रोतों को विद्यालय की मुख्य प्रक्रियाओं के रूप में माना जा सकता है। इनसे सम्बन्धित अनेक समस्याओं का उल्लेख किया जा सकता है।

विद्यालयों में क्रियात्मक-अनुसन्धान की समस्याओं का चुनाव कुछ प्रमुख तत्वों पर आधारित होता है। ये तत्व हैं—अनुसन्धानकर्ता (अध्यापक, प्रधानाचार्य, *निरीक्षक व प्रबन्धक*) *की अनुभूत आवश्यकताएँ*, *विद्यालय* की परिस्थितियों का वस्तुनिष्ठ विश्लेषण एवं उन पर आलोचनात्मक दृष्टि, विचार-विमर्श, अन्तर्दृष्टि तथा शिक्षा के क्षेत्र में हुए अन्य अनुसन्धानों की जानकारी।

समस्या का चयन कर लेने पर उसका परिभाषीकरण एवं सीमांकन अत्यन्त सावधानीपूर्वक करना चाहिए। इसके बिना समस्या का विधिवत् अध्ययन सम्भव नहीं है।

समस्या की स्थापना निश्चित रूप म तभी करनी चाहिए जब कि उसका मूल्यांकन करने पर वह खरी उतरे। अनुसन्धानकर्ता को समस्या का मूल्यांकन करने के निमित्त कुछ प्रश्न पूछने चाहिए। ये प्रश्न प्रस्तुत अध्याय के अन्त में 'मूल्यांकन-पत्रक' के अन्तर्गत दिये गये हैं। यदि ६ से अधिक प्रश्नों के उत्तर स्वीकारात्मक आते हैं तो समस्या को अनुसन्धान के लिए उपयुक्त मानना चाहिए।

## ७

# क्रियात्मक-उपकल्पनाएँ

> "A hypothesis is a tentative assumption drawn from knowledge and theory which is used as a guide in the investigation of other facts and theory that are as yet unknown. The hypothesis formulation is one of the most difficult and most crucial steps in the entire scientific process. × × × It is impossible to overemphasize the role of the hypothesis in research. It is the central core of the study that directs the selection of the data to be gathered, the experimental design, the statistical analysis, and the conclusion drawn from the study."
>
> —*Hildreth Hoke McAshan.*

उपकल्पनाएँ अनुसन्धान को दिशा प्रदान करती हैं। इनके द्वारा समस्या ा समाधान प्राप्त करने का संकेत मिलता है। प्रत्येक अनुसन्धान में उपकल्प- ाओं का विशेष महत्व है। क्रियात्मक-अनुसन्धान में उपकल्पनाओं को विशेष ाम से पुकारा जाता है। इन्हें क्रियात्मक-उपकल्पना (Action-hypothesis) हा जाता है क्योंकि इसके अन्तर्गत 'क्रिया' के प्रति स्पष्ट उल्लेख रहता है।

अनुसन्धान में उपकल्पना (Hypothesis) शब्द का प्रयोग एक ऐसे कथन ेलिए किया जाता है जिसके द्वारा किसी समस्या के प्रति सम्भव समाधानों ा बोध होता है। उपकल्पना में सदैव ज्ञात से अज्ञात की ओर अनुमान होता । इसका स्वरूप प्रयोगात्मक अथवा आजमायशी (Tentative) होता है। इसी

के आधार पर नये सिद्धान्तों का निर्माण किया जाता है। किन्तु उपकल्पना को सिद्धान्त का रूप धारण करने में बहुत समय लगता है। कई प्रयोगों द्वारा उपकल्पना का सत्यापन करने पर ही उसे सिद्धान्त का रूप दिया जा सकता है।

## सामान्य-उपकल्पना तथा क्रियात्मक-उपकल्पना में भेद

सामान्य-उपकल्पनायें प्रायः मौलिक-अनुसन्धान के लिए निर्मित की जाती हैं। इनके द्वारा समस्या-विशेष के सम्बन्ध मे सर्वाधिक सम्भाव्य अनुमान की कल्पना की जाती है। अनुसन्धानकर्ता अपनी उपकल्पना का निर्माण अनेक सम्भव अनुमानों के आधार पर करता है। इसीलिए उपकल्पनाओं को एक कुशल अटकल (Guess) माना जाता है। क्रियात्मक-उपकल्पनाओं मे भी एक प्रकार का अनुमान ही कार्यशील होता है। किन्तु इस तरह की उपकल्पनाओं मे क्रिया-पक्ष पर विशेष बल दिया जाता है। यहाँ अनुमान का उल्लेख क्रियात्मक-पहलू को स्पष्ट करते हुए किया जाता है। सामान्य-उपकल्पनाओं मे क्रिया-पक्ष का उल्लेख आवश्यक नहीं है।

क्रियात्मक-उपकल्पना की सत्यता का पता थोड़े दिनों मे ही लगाया जा सकता है किन्तु सामान्य-उपकल्पनाओं की सत्यता एक निश्चित अवधि के बाद स्थापित की जाती है। क्रियात्मक-उपकल्पनाओं का स्वरूप परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तनशील होता है। एक अनुसन्धान के अन्तर्गत अनेक क्रियात्मक-उपकल्पनाओं का निर्माण किया जा सकता है। सामान्य-उपकल्पनाओं का स्वरूप अपेक्षाकृत कम परिवर्तनशील होता है। उनमे परिवर्तन अनुसन्धान की रूपरेखा को संशोधित किये बिना नहीं लाया जा सकता।

दोनों प्रकार की उपकल्पनाओं मे अनुमान का स्थान महत्वपूर्ण है। बिना अनुमान के इनका निर्माण असम्भव है। दोनों की सत्यता प्रयोगों के बाद मालूम होती है। दोनों द्वारा समस्या के सम्भव समाधानों की परीक्षा होती है।

## क्रियात्मक-उपकल्पनाओं का निर्माण

क्रियात्मक-उपकल्पनाएँ 'समस्या' के [illegible] हैं। समस्या का विशद विश्लेषण करने पर ही [illegible] प्रति संकेत प्राप्त होते हैं। समस्या [illegible] सम्बन्ध होना चाहिए। [illegible] का निर्माण करने से [illegible] लेना चाहिए। [illegible] है।

क्रियात्मक-उपकल्पना का निर्माण निम्नाङ्कित बातों को ध्यान में रखते हुए करना चाहिए :—

१. समस्या का सांगोपांग विश्लेषण करना चाहिए ।
२. समस्या के स्वरूप का परिभाषीकरण एवं सीमाङ्कन स्पष्ट होना चाहिए।
३. समस्या के कारण-भूत तत्त्वों की विवेचना विस्तारपूर्वक हो ।
४. समस्या का समर्थन उपयुक्त साक्षियों द्वारा सम्भव हो ।
५. समस्या के सभी सम्भव समाधानों (Potential solutions) का अनुमान लगाना चाहिए ।
६. केवल उन्हीं सम्भव समाधानों पर अधिक विचार करना चाहिए जो अनुसन्धानकर्ता की सामर्थ्य के भीतर हों ।
७. उन सम्भव समाधानों को प्राप्त करने के ढंगों पर विशेष रूप से सोचना चाहिए ।
८. क्रियात्मक-उपकल्पना का अन्तिम रूप निर्धारित करते समय उसको अभिव्यक्त करने के लिए उपयुक्त शब्दो का प्रयोग करना चाहिए ।

क्रियात्मक-अनुसन्धान के लिए उपयुक्त कतिपय समस्याओं पर शोध करने हेतु कुछ क्रियात्मक-उपकल्पनाओं का निर्माण अधोलिखित रूप में किया जा रहा है—

(क) समस्या का विशिष्ट रूप—विद्यालय के अन्तिम घण्टों (अवकाश के बाद) में ७ वीं, ६ वी तथा ११ वीं कक्षा के छात्रों का सप्ताह के अन्तिम दिनों (शुक्रवार तथा शनिवार) में विद्यालय से प्रायः बिना बताये चले जाना ।

**क्रियात्मक-उपकल्पनाएं**

(१) छात्रों को अवकाश के बाद वाले घण्टों में नित्य विविध कार्य-क्रमों (यथा : प्रहसन, वाद-विवाद एवं अभिनय) के आयोजन द्वारा उस समय पढ़ाये जाने वाले विषयों की नीरसता कम करने पर उनमें विद्यालय से बिना बताए चले जाने की प्रवृत्ति कम होगी ।

(२) समय-चक्र को बदल कर (अवकाश के पहले पढ़ाये जाने वाले विषयों को बाद में रखकर) छात्रो के भागने की प्रवृत्ति को कम किया जा सकता है ।

(३) यदि अन्तिम घण्टों में नित्य उपस्थिति ली जाय तथा अनुपस्थित छात्रों को दण्डित किया जाय तो छात्र विद्यालय से नहीं भागेंगे ।

(ख) समस्या का विशिष्ट रूप—विज्ञान तथा अंग्रेजी के अध्यापकों द्वारा सत्र के ५ महीनों (नवम्बर से मार्च तक) में प्राइवेट ट्यूशन अधिक* करना और इस कारण विद्यालय के कार्यों में ढीलापन* दिखाना।

### क्रियात्मक-उपकल्पनाएं

(१) यदि विज्ञान तथा अंग्रेजी के लिए विद्यालय में ही कमजोर छात्रों की अतिरिक्त कक्षाएं लगाने की व्यवस्था की जाय तथा इसके लिए उन्हें प्रतिफल दिया जाय तो वे प्राइवेट ट्यूशन अधिक* नहीं करेंगे और विद्यालय के कार्यों में ढील* नहीं देंगे।

(२) यदि विज्ञान तथा अंग्रेजी के अध्यापकों को कुछ रचनात्मक कार्यों जैसे—विज्ञान-कक्ष की साज-सज्जा बढ़ाना, अपने विषय के लिए उपयोगी अभ्यास-पुस्तिकाओं को लिखने के लिए प्रेरित किया जाय तो उनमें प्राइवेट ट्यूशन की प्रवृत्ति कम होगी।

(ग) समस्या का विशिष्ट रूप—अध्यापकों तथा विद्यार्थियों का (जो विद्यालय के निकट अथवा दूर रहते हैं) समय से विद्यालय में उपस्थित न होना।

### क्रियात्मक उपकल्पनाएं

(१) यदि विद्यालय में समय से उपस्थित न होने के लिए कुछ दण्ड (जैसे सभी लोगों के सामने क्षमा-याचना करना, सभी लोगों के सामने खड़ा होना आदि) दिये जायें तो विलम्ब से आने की प्रवृत्ति कम होगी।

(२) यदि विलम्ब से आने वालों को विद्यालय में प्रधानाचार्य की अनुमति के बिना प्रविष्ट न करने दिया जाय तो समय से उपस्थित होने की टेव पड़ेगी।

(३) यदि विद्यालय का निश्चित समय आधा घण्टा बढ़ा दिया जाय (यथा १० बजे के स्थान पर १०॥ बजे प्रारम्भ किया जाय) तो अध्यापक तथा विद्यार्थी विद्यालय में समय से उपस्थित हो जायेंगे।

इन सभी समस्याओं के विशिष्ट रूप के साथ क्रियात्मक-उपकल्पनाओं को प्रस्तुत करने में लेखक का यह उद्देश्य है कि पाठक यह ध्यान दें कि समस्या के सम्पर्क में ही क्रियात्मक-उपकल्पनाओं का निर्माण किया जाता है।

---

* अध्याय ५ में इन शब्दों को परिभाषित किया जा चुका है।

प्रत्येक क्रियात्मक-उपकल्पना के दो भाग होते हैं—

(१) क्रियात्मक (Related to action or procedural)

(२) लक्ष्यात्मक (Related to goal)

प्रथम भाग में उपकल्पना से यह स्पष्ट होता है कि किस प्रकार की क्रिया-पद्धति का अनुसरण करना है। द्वितीय भाग में उस क्रिया-पद्धति द्वारा अभीष्ट लक्ष्य का निर्देश होता है। अर्थात् अमुक क्रिया का परिणाम अमुक होगा। क्रियात्मक पक्ष से यह अवगत होता है कि क्या करना है? लक्ष्यात्मक पक्ष से उसके परिणाम का संकेत मिलता है। उपर्युक्त सभी उदाहरणों में उल्लिखित उपकल्पनाओं का विश्लेषण इन दो भागों में किया जा सकता है। आगे की तालिका में यह स्पष्ट किया गया है।

## क्रियात्मक-उपकल्पना के अवयव

| क्रिया॰ सम-स्या | उप॰ क्र॰ सं॰ | क्रियात्मक पक्ष | लक्ष्यात्मक पक्ष |
|---|---|---|---|
| (क) | १. | अवकाश के बाद वाले घण्टों में नित्य विविध कार्य-क्रमों का आयोजन इस ढंग से करना कि उन घण्टों में पढ़ाये जाने वाले विषयों की नीरसता कम हो। | छात्रों में विद्यालय के बिना बताये चले जाने की प्रवृत्ति का कम होना। |
| | २. | समय-चक्र को बदलना (अवकाश के पहले पढ़ाये जाने वाले विषयों को बाद में रखना)। | छात्रों के भागने की प्रवृत्ति का कम होना। |
| | ३. | अन्तिम घण्टो में नित्य उपस्थिति लेना तथा अनुपस्थित छात्रों को दण्डित करना। | छात्रों का विद्यालय से न भागना। |
| (ख) | १. | विज्ञान तथा अंग्रेजी के अध्यापकों के लिए विद्यालय में ही कमज़ोर छात्रों की कक्षाएं लगाना तथा इसके लिए उन्हें प्रतिफल देना। | वे प्राइवेट ट्यूशन अधिक न करेंगे तथा विद्यालय के कार्यों में ढीलापन नही दिखाएंगे। |
| | २. | विज्ञान तथा अंग्रेजी के अध्यापकों को रचनात्मक कार्यों की ओर प्रेरित करना। | उनमें ट्यूशन करने की प्रवृत्ति कम होगी। |

| ग | | |
|---|---|---|
| | १. विद्यालय में समय से न आने के लिए सामूहिक दण्ड देना। | समय से उपस्थित न होने की प्रवृत्ति कम होगी। |
| | २. विलम्ब से आने वाले को प्रधानाचार्य की अनुमति के बिना प्रविष्ट न होने देना। | समय से उपस्थित होने की टेव पड़ेगी। |
| | ३. विद्यालय की दिनचर्या १० बजे के स्थान पर १०½ बजे प्रारम्भ हो। | सभी समय से उपस्थित होंगे। |

कहने का अभिप्राय यह है कि क्रियात्मक-उपकल्पना समस्या के समाधान से सम्बन्धित एक विशेष कथन है। इस कथन का पूर्वार्द्ध भाग समाधान के ढंग को बताता है और उत्तरार्द्ध उसके द्वारा प्राप्त होने वाले लक्ष्य को। यह कथन प्रायः अपेक्षा-व्यंजक वाक्य (Conditional sentence) के रूप में अभिव्यक्त किया जाता है—"यदि ऐसा किया जाएगा······ तो यह परिणाम प्राप्त होगा···"। 'यदि' से प्रारम्भ होने वाला वाक्यांश उपकल्पना का क्रियात्मक पक्ष संकेतित करता है तथा 'तो' से प्रारम्भ होने वाला वाक्य उसके परिणाम को। प्रत्येक क्रियात्मक-उपकल्पना का प्रतिपादन इसी रूप मे हो—यह आवश्यक नही है। हाँ, इतना अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि क्रियात्मक-उपकल्पना को अभिव्यक्त करने वाला कथन क्रियात्मक एवं लक्ष्यात्मक दोनों पक्षों को स्पष्ट करे।

## क्रियात्मक-उपकल्पना की विशेषताएँ

क्रियात्मक-अनुसन्धान मे उप-कल्पनाओं की विशेषताओं पर ही अनुसन्धान की उपयोगिता निर्भर करती है। जिस प्रकार की क्रियात्मक-उपकल्पना होती है, अनुसन्धान के परिणाम भी उसी प्रकार के होगे। अतः क्रियात्मक-उपकल्पनाओं का निर्माण पर्याप्त सतर्कतापूर्वक करना चाहिए। इसके लिए हमें एक अच्छी क्रियात्मक-उपकल्पना की विशेषताओं से परिचित होना आवश्यक है।

(१) सत्यापनशीलता (Verifiability)—एक अच्छी क्रियात्मक-उपकल्पना की यह पहचान है कि उसकी सत्यता अथवा असत्यता के बारे में परीक्षा सम्भव होती है। उसे विद्यालय की परिस्थितियों मे ही परीक्षित किया जा सकना है। क्रियात्मक-उपकल्पना की सत्यापनशीलता का पता उसके पूर्वार्द्ध भाग (क्रियात्मक-पक्ष) को विश्लेषित कर लगाया जा सकता है। यदि उसका क्रियात्मक पक्ष

व्यावहारिक दृष्टि से उपयुक्त है तो उसकी परीक्षा सरलतापूर्वक ली जा सकती है।

(२) प्रभाव-गाम्भीर्य (Profundity of effect)—क्रियात्मक-उपकल्पना का प्रभाव किस रूप में पड़ेगा तथा यह प्रभाव कितना महत्वपूर्ण होगा? आदि प्रश्नों द्वारा यह ज्ञात किया जा सकता है कि अमुक क्रियात्मक-उपकल्पना कितनी उपयोगी है। विद्यालयों के लिए क्रियात्मक-उपकल्पनाओं के प्रति इस प्रकार के प्रश्न विद्यालय के सन्दर्भ में होने चाहिए। अनुसन्धानकर्ता यह पूछ सकता है कि अमुक क्रियात्मक-उपकल्पना का प्रभाव विद्यालय के कितने लोगों पर पड़ेगा। इसके कार्यान्वयन से छात्रों पर प्रभाव पड़ेगा अथवा अध्यापकों पर? कितने छात्र अथवा अध्यापक इससे प्रभावित होंगे।

(३) स्पष्टता (Clarity)—क्रियात्मक-उपकल्पना को स्पष्ट शब्दों द्वारा अभिव्यक्त किया जाता है। इससे तात्पर्य यह है कि क्रियात्मक-उपकल्पना का जिन शब्दों अथवा पदों की सहायता से स्पष्टीकरण किया जाता है, उनके अर्थ निश्चित कर दिये जाते हैं ताकि सभी लोग उसका एक ही अर्थ समझें। अधोलिखित क्रियात्मक-उपकल्पना में चिन्हित शब्दों के कई अर्थ प्रतिध्वनित होते हैं, अतः उनका अर्थ निश्चित कर दिया गया है।

"यदि विज्ञान तथा अंग्रेजी के अध्यापकों के लिए विद्यालय में ही कमजोर छात्रों की अतिरिक्त कक्षाएं लगाने की व्यवस्था की जाय तथा इसके लिए उन्हें प्रतिफल दिया जाय तो वे प्राइवेट ट्यूशन अधिक● नहीं करेंगे और विद्यालय के कार्यों में ढील● नहीं देंगे।"

चिन्हित शब्दों के अतिरिक्त इस उपकल्पना में कुछ अन्य शब्द भी हैं जिन्हें स्पष्ट करना होगा—यथा—कमजोर छात्र, प्रतिफल आदि। कमजोर छात्र किसे कहा जाएगा? प्रतिफल किस रूप में तथा कितनी मात्रा में दिया जाएगा? आदि प्रश्नों के उत्तर निश्चित होने चाहिए।

(४) सोद्देश्यता (Purposiveness)—क्रियात्मक-उपकल्पना का उद्देश्य अनुसन्धानकर्ता को मालूम होना चाहिए। जैसे अभी दिये हुए उदाहरण में क्रियात्मक-उपकल्पना का प्रमुख उद्देश्य यह है कि इसके द्वारा अध्यापकों में विद्यालय के कार्यों को निरलसतापूर्वक करने की प्रेरणा प्राप्त हो। क्रियात्मक-उपकल्पना का यह उद्देश्य अनुसन्धान के मुख्य उद्देश्य से सम्बन्धित होना है। इसके लिए यह आवश्यक है कि क्रियात्मक-उपकल्पना का निर्माण करते समय अनुसन्धानकर्ता अपने अनुसन्धान के उद्देश्यों को सामने रखे।

(५) समस्या के प्रति तर्क-संगति (Relevance to the problem)—प्रत्येक क्रियात्मक-उपकल्पना का सम्बन्ध उस समस्या से होना चाहिए जिसके लिए उसे निर्मित किया गया है। अध्याय ५ में यह प्रदर्शित किया गया है कि किस प्रकार समस्या के कारण-भूत तत्वों का विश्लेषण कर, उनके आधार पर ही क्रियात्मक-उपकल्पना का निर्माण किया जा सकता है। कहने का अभिप्राय यह है कि क्रियात्मक उपकल्पना की जड़ें 'समस्या' में अवश्य होनी चाहिए तभी उसे समस्या के प्रति तर्क-संगत माना जा सकता है। एक अच्छी क्रियात्मक-उपकल्पना का सम्बन्ध समस्या-विशेष से ढूँढ़ा जा सकता है।

(६) अन्य क्रियाओं से नहीं के बराबर हस्तक्षेप (Least interference with other activities)—क्रियात्मक-उपकल्पनाओं के अन्तर्गत ऐसी क्रियाओं का उल्लेख हो जिनके कार्यान्वियन से विद्यालय की अन्य क्रियाओं पर अनावश्यक एवं अनधिकार हस्तक्षेप न हो। इसके लिए अनुसन्धानकर्ता अपने अधिकार-क्षेत्र को स्मरण रखते हुए ही क्रियात्मक-उपकल्पना का निर्माण करे। पूर्वोल्लिखित उपकल्पना पर पुनः विचार करें :

"यदि विज्ञान तथा अंग्रेजी के अध्यापकों के लिए विद्यालय में ही कमजोर छात्रों की अतिरिक्त कक्षाएँ लगाने की व्यवस्था की जाय तथा इसके लिए उन्हें प्रतिफल दिया जाय तो वे प्राइवेट ट्यूशन अधिक नहीं करेंगे और विद्यालय के कार्यों में ढील नहीं देंगे।"

इस उपकल्पना का कार्यान्वियन प्रधानाचार्य अथवा प्रबन्धक के अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत है। यदि दोनों ही मिलकर इसके कार्यान्वियन की ओर संलग्न हों तो उत्तम होगा। इस क्रियात्मक-उपकल्पना से यह स्पष्ट हो जाता है कि विद्यालय की अन्य क्रियाओं में इससे बाधा पहुँचने की सम्भावना नहीं के बराबर है। अध्यापकों की सहायता से कमजोर छात्रों का समूह छाँटने पर ही अतिरिक्त कक्षाओं की व्यवस्था की जा सकती है। इसके अतिरिक्त अन्य कई बातों पर ध्यान देना पड़ेगा।

(७) मितव्ययी (Economical)—क्रियात्मक-उपकल्पनाओं के कार्यान्वियन में धन एवं समय सम्बन्धी समस्यायें नहीं उत्पन्न होनी चाहिए। एक अच्छी क्रियात्मक-उपकल्पना के कार्यान्वियन में कम से कम धन एवं समय की आवश्यकता होती है। यदि क्रियात्मक-उपकल्पना की जाँच करने में विशेष धन एवं समय लगता है तो अनुसन्धान की दृष्टि से हम उसे अधिक खर्चीला कहेंगे। क्रियात्मक-अनुसन्धान में महत्वपूर्ण बात यह होती है कि विद्यालय को कम से कम धन के द्वारा उपयोगी क्रियाओं का पता चल जाता है। इसके लिए बहुत

लम्बी अवधि की भी आवश्यकता नहीं होती। विद्यालय अपने सीमित धन एवं समय के माध्यम से इस प्रकार के अनुसन्धानों को चलाता है। अतः क्रियात्मक-उपकल्पनाओं का निर्माण इस दृष्टि से करना चाहिए कि उनके कार्यान्वियन में अधिक धन एवं समय की आवश्यकता न हो।

(८) पूर्व-स्थापित सिद्धान्तों द्वारा समर्थित (Supported by pre-established theories)—क्रियात्मक-उपकल्पना के मुख्य तत्वों में पूर्व स्थापित सिद्धान्तों अथवा सत्यों से विरोध नहीं होना चाहिए। विशेष तौर से शिक्षण-विधियों एवं सीखने की प्रक्रियाओं से सम्बन्धित क्रियात्मक-उपकल्पनाओं में यह ध्यान रखना चाहिए। एक अच्छी क्रियात्मक-उपकल्पना में पूर्व स्थापित सिद्धान्तों का समर्थन प्राप्त होता है।

(९) अनुसन्धानकर्ता की क्षमताओं के अनुकूल (In keeping with the abilities of the researcher)—प्रत्येक क्रियात्मक-उपकल्पना की यह प्रमुख विशेषता होनी चाहिए कि वह अनुसन्धानकर्ता (अध्यापक अथवा प्रधानाचार्य) की क्षमताओं के अनुकूल हो। यदि क्रियात्मक-उपकल्पना अनुसन्धानकर्ता की योग्यताओं एवं क्षमताओं के मुताबिक नहीं होती तो उसका कार्यान्वियन ठीक प्रकार नहीं हो सकता।

इन सभी विशेषताओं के आधार पर क्रियात्मक-उपकल्पनाओं का मूल्यांकन किया जा सकता है। अनुसन्धानकर्ता को चाहिए कि अपने शोध-कार्य में लगने से पूर्व क्रियात्मक-उपकल्पना की इन विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए अपनी क्रियात्मक-उपकल्पना का मूल्याङ्कन स्वयं कर लें।

### क्रियात्मक-उपकल्पना के स्रोत (Sources of action-hypothesis)

क्रियात्मक-उपकल्पनाओं का उद्भव अनुसन्धानकर्ता के सूझपूर्ण अनुभव तथा चिन्तन से होता है। निरन्तर समस्याओं का विश्लेषण करते रहना भी क्रियात्मक-उपकल्पना के उत्पादन में सहायक होता है। अपनी दैनिक परिस्थितियों के प्रति आलोचनात्मक दृष्टि रखकर कार्य करना क्रियात्मक-अनुसन्धान की भूमिका है। इस प्रकार का दृष्टिकोण अपनाने से हमे अपनी कार्य-प्रणालियों में सुधार लाने की चेतना कायम रहती है। क्रियात्मक-उपकल्पनाओं का सम्बन्ध अनुसन्धानकर्ता की इस चेतना से होता है। जो अनुसन्धानकर्ता जिज्ञासु एवं प्रगति-कांक्षी होता है, वह क्रियात्मक-उपकल्पनाओं की सृष्टि अत्यन्त सरलता-पूर्वक कर लेता है।

क्रियात्मक-उपकल्पना के मुख्य स्रोतों को इस प्रकार प्रकट किया जा सकता है :—
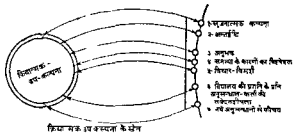
क्रियात्मक उपकल्पना के स्रोत

अब हम इन स्रोतों को आगे स्पष्ट करेंगे।

(१) सृजनात्मक-कल्पना (Creative imagination)—क्रियात्मक-उपकल्पना के लिए उच्च कोटि की सृजनात्मकता (Creativity) की आवश्यकता होती है। जिस प्रकार कलाकार अपनी समस्त कला-कृति को सृजनात्मक-कल्पना के आधार पर ढालता है, उसका रूप निर्धारित करता है, उसी प्रकार एक अनुसन्धानकर्ता अपने शोध कार्य की रूपरेखा निर्मित करते समय अपनी सृजनात्मक-कल्पना का प्रयोग करता है। क्रियात्मक-अनुसन्धान में क्रियात्मक-उपकल्पनाओं की उत्पत्ति सृजनात्मक-कल्पना के अभाव में असम्भव है।

(२) अन्तर्दृष्टि (Insight)—अनुसन्धान-कार्यों में अन्तर्दृष्टि अथवा सूझ के बिना एक पग भी आगे बढ़ना कठिन है। यहाँ अन्तर्दृष्टि से तात्पर्य है—एक ऐसी विशेष दृष्टि से जिसके द्वारा परिस्थितियों के सतह मात्र का ही दर्शन नहीं होता अपितु उनके प्रच्छन्न अंशों का भी बोध होता है। अन्तर्दृष्टि द्वारा व्यक्ति किसी विषय की गहराई में प्रवेश कर सकता है। क्रियात्मक-उपकल्पनाओं के निर्माण में अन्तर्दृष्टि का विशेष महत्व है। इस प्रकार की दृष्टि के बिना हम उत्तम कोटि की क्रियात्मक-उपकल्पनाओं का सृजन नहीं कर सकते। विद्यालय की परिस्थितियों के बारे में हमारी सूझ जितनी ही गहरी होगी, हम क्रियात्मक उपकल्पनाओं का निर्माण कुशलतापूर्वक कर सकेंगे।

(३) अनुभव (Experience)—अन्तर्दृष्टि तथा अनुभव में अत्यन्त घनिष्ट सम्बन्ध होता है। जैसे-जैसे हमारे अनुभवों का भाण्डार बढ़ता जाता है, हमारी सूझ भी पैनी होती जाती है। अनुभवी व्यक्तियों में क्रियात्मक-उपकल्पनाओं के निर्माण की क्षमता अधिक होती है। हमें अपने अनुभवों से जो कुछ प्राप्त होता है उसका सदुपयोग हम क्रियात्मक-उपकल्पनाओं की रचना में कर सकते हैं। अनुभवों की आँच में तपाई हुई क्रियात्मक-उपकल्पना अवश्य ही मूल्यवान् सिद्ध होगी।

**(४) समस्या के कारणों का विश्लेषण** (Analysis of the causes related to the problem)—क्रियात्मक-उपकल्पना के मुख्य स्रोत समस्या के कारण-भूत तत्व होते हैं। यह पहले भी कहा जा चुका है कि समस्या के कारणों का सूक्ष्म विश्लेषण किये बिना क्रियात्मक-उपकल्पनाओं की निर्मिति न्याय संगत नहीं है। इससे सम्भव है कि क्रियात्मक-उपकल्पना का समस्या-विशेष से सम्बन्ध-विच्छेद हो जाय। अतः प्रत्येक अनुसन्धानकर्ता को चाहिए कि क्रियात्मक-उपकल्पना का निर्माण करने से पूर्व वे समस्या विशेष के कारणों का साङ्गोपाङ्ग विश्लेषण कर लें।

**(५) विचार-विमर्श** *(Discussion)—अनुसन्धान के अन्तर्गत* विचार-विमर्श पद्धति का आलम्बन कई स्थानों पर ग्रहण किया जा सकता है। क्रियात्मक-उपकल्पनाओं की रचना हेतु परस्पर 'विचार-विमर्श' द्वारा अनेक लाभ उठाये जा सकते हैं। सामूहिक चिन्तन से क्रियात्मक-उपकल्पनाओं के क्रिया-पक्षों की व्यावहारिकता के सम्बन्ध में कई व्यक्तियों की स्पष्ट राय मिल जाती है। इसके अतिरिक्त कई नवीन क्रियात्मक-उपकल्पनाएँ विचार-विमर्श के माध्यम से निर्मित की जा सकती हैं। बहुधा हम अकेले क्रियात्मक-उपकल्पना का निर्माण सरलतापूर्वक नहीं कर पाते। किन्तु जब हम किसी समूह में विचार-विमर्श करते हैं तो अपने ही विचार क्रियात्मक-उपकल्पना के निर्माण हेतु संकेत देते हैं।

**(६) विद्यालय की प्रगति के प्रति अनुसन्धानकर्ता की संवेदनशीलता** (Sensitivity of the researcher towards the progress of the school)—*विद्यालय की कार्य-प्रणाली के प्रति प्रत्येक अध्यापक समान रूप से* संवेदनशील नहीं होता। यह मनोविज्ञान का एक मुख्य सिद्धान्त है कि व्यक्ति एक दूसरे से भिन्न होता है। क्रियात्मक-अनुसन्धान में प्रत्येक अध्यापक समान रुचि नहीं प्रदर्शित कर सकता। इसका मुख्य कारण यह है कि अध्यापकों में अपनी परिस्थितियों के प्रति संवेदनशीलता एक जैसी नहीं होती है।

अपनी परिस्थितियों में होने वाले परिवर्तनों के प्रति जो संवेदनशील नहीं होता उससे अनुसन्धान में कुछ भी आशा नहीं की जा सकती। क्रियात्मक उपकल्पनाओं का उद्भव व्यक्ति की परिस्थितियों के प्रति इस संवेदनशीलता एवं चेतना पर निर्भर होता है। जो अध्यापक अपने विद्यालय की प्रगति के प्रति अधिक चैतन्य एवं संवेदनशील होगा, वही क्रियात्मक-उपकल्पनाओं का निर्माण कर सकता है। इस प्रकार की चेतनता अथवा संवेदनशीलता का सम्बन्ध बहुत स्वभाव है व्यक्ति का विद्यालय की गतिविधि के सम्बन्ध में निरन्तर कुछ न कुछ विचार करते रहना।

(७) नये अनुसन्धानों से परिचय (Acquaintance with new researches)—नये अनुसन्धानों द्वारा प्राप्त होने वाले परिणामों को भी क्रियात्मक-उपकल्पनाओं का स्रोत माना जा सकता है। विद्यालय में जिस अध्यापक को शिक्षा के क्षेत्र में हुए अनुसन्धानों की विशेष जानकारी होगी, वह क्रियात्मक-उपकल्पनाओं का निर्माण अत्यन्त शुद्धतापूर्वक कर सकता है। सामान्य-उपकल्पनाओं के बारे में भी यह लागू होता है। इसीलिए प्रत्येक अनुसन्धानकर्ता के लिए यह आवश्यक समझा जाता है कि वह अपने क्षेत्र में हुए अनुसन्धानों से परिचय स्थापित करे। उसे अपने विषय से सम्बन्धित समस्त अध्ययन-सामग्रियों का सर्वेक्षण करना आवश्यक है ताकि वह महत्वपूर्ण खोजों से वञ्चित न रह जाय। इस प्रकार का सर्वेक्षण इसलिए भी अपेक्षित है कि अनुसन्धानकर्ता यह निश्चय कर ले कि जो कुछ वह कर रहा है, आवृत्ति (Duplication) मात्र नहीं है। इसके आधार पर उसे पूर्ण विश्वास हो जाता है कि उसका अनुसन्धान एक नवीन प्रयास है न कि पूर्व सम्पादित अनुसन्धानों का पिष्टपेषण।

क्रियात्मक-अनुसन्धान में प्रत्येक समस्या नई होती है अतः इसमें आवृत्ति का प्रश्न ही नहीं उठता। हाँ, इतना अवश्य है कि अनुसन्धान-विषयक रिपोर्टों को पढ़कर दूसरे के अनुभवों से लाभ उठाया जा सकता है। दूसरों के अनुभव कभी-कभी अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होते हैं। इन अनुभवों के आधार पर क्रियात्मक-उपकल्पनाओं की रचना की जा सकती है। नये अनुसन्धानों से परिचय प्राप्त करने का यह मुख्य लाभ है।

## क्रियात्मक-उपकल्पना का महत्व

क्रियात्मक-उपकल्पना अनुसन्धान की आधारशिला है। इसके बिना क्रियात्मक-अनुसन्धान को आगे नहीं बढ़ाया जा सकता। प्रत्येक अनुसन्धान के लिए उपकल्पना का महत्व विशेष रूप से माना जाता है। क्रियात्मक-उपकल्पना के निर्माण से अनुसन्धानकर्ता को एक दिशा का संकेत प्राप्त होता है। वह अपनी विचार-प्रक्रिया को क्रियात्मक-उपकल्पना के सूत्र में बाँध देता है जिससे उसके अनुसन्धान-विषयक विचारों में तर्कसंगतता का समावेश होता है।

क्रियात्मक-उपकल्पना को सम्पूर्ण क्रियात्मक-अनुसन्धान की धुरी के रूप में समझना चाहिए। इसका निर्धारण हो जाने पर अनुसन्धान की दिशा निश्चित हो जाती है जिससे अनुसन्धान-कार्य में पर्याप्त स्पष्टता एवं शुद्धता आती है। अनुसन्धानकर्ता को एक अदम्य आत्म-विश्वास का अनुभव होता है। क्रियात्मक-उपकल्पना की रचना न होने तक अनुसन्धानकर्ता अनेक प्रकार के तर्क-वितर्कों में उलझा रहता है। उसकी चिन्तना केन्द्रित नहीं हो पाती।

क्रियात्मक-उपकल्पना का महत्व सबसे अधिक इसलिए है कि इसके द्वारा अनुसन्धान की विधि एवं उसके परिणामों का स्पष्ट निर्देश मिलता है। अनुसन्धानकर्ता को यह ज्ञात हो जाता है कि उसे क्या करना है ? तथा कैसे करना है ? इसके साथ ही साथ उसे अपने लक्ष्य का भी परिज्ञान रहता है।

## सारांश

क्रियात्मक-उपकल्पनाओं मे कार्य-पक्षों पर विशेष बल दिया जाता है। सामान्य-उपकल्पनाएँ कार्य-पक्ष पर उतना बल नहीं देती। क्रियात्मक-अनुसन्धान की योजना को लचीला रखा जाता है क्योंकि क्रियात्मक-उपकल्पनाओं का स्वरूप परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित होता रहता है।

क्रियात्मक-उपकल्पना का निर्माण समस्या-विशेष के सम्पर्क में होना चाहिए। इसके लिए यह आवश्यक है कि समस्या के कारणों का सूक्ष्म एवं वस्तुनिष्ठ विश्लेषण कर लिया जाय।

क्रियात्मक-उपकल्पना को दो भागों मे विभक्त किया जा सकता है—क्रियात्मक तथा लक्ष्यात्मक। क्रियात्मक पक्ष मे क्रिया-पद्धति का उल्लेख होता है तथा लक्ष्यात्मक पक्ष मे उस क्रिया-पद्धति द्वारा अभीष्ट परिणामो का।

एक अच्छी क्रियात्मक-उपकल्पना की विशेषताएँ हैं—सत्यापनशीलता अथवा परीक्षणीयता, प्रभाव-गाम्भीर्य, स्पष्टता, सोद्देश्यता, समस्या के प्रति तर्क-संगति, अन्य क्रियाओं से नहीं के बराबर हस्तक्षेप, मितव्ययता, पूर्व-स्थापित सिद्धान्तो द्वारा समर्थन तथा अनुसन्धानकर्ता की क्षमताओं के अनुकूल होना। क्रियात्मक-उपकल्पनाओं का मूल्यांकन इन्हीं विशेषताओं को दृष्टिगत रखकर करना चाहिए।

क्रियात्मक-उपकल्पना के स्रोतो को भी इंगित किया जा सकता है। वे हैं—सृजनात्मक कल्पना, अन्तर्दृष्टि, अनुभव, समस्या के कारणों का विश्लेषण, विचार-विमर्श, विद्यालय की प्रगति के प्रति अनुसन्धानकर्ता की संवेदनशीलता, तथा नये अनुसन्धानो से परिचय।

क्रियात्मक-उपकल्पना अनुसन्धान की दिशा निश्चित कर देती है। इससे अनुसन्धानकर्ता मे शोध-कार्य के प्रति आत्मविश्वास का उदय होता है और वह अपनी विचार-प्रक्रिया को तर्कसंगत बनाने में समर्थ होता है।

# ८

# क्रियात्मक-उपकल्पना की परीक्षा हेतु आवश्यक रूपरेखा निर्मित करना

> **"Excellent research involves a method of inquiry that warrants a high degree of confidence in its results. All problem solving, however, involves defining the problem, hypothesizing, developing a design to test the hypotheses, getting evidence, and generalizing from this evidence. If the quality of the definition, hypothesis, design, evidence, and generalization is high, the over-all action research is good-that is, it will lead to actions in which the investigators may place confidence."**
>
> —*Stephen M. Corey.*

क्रियात्मक-उपकल्पना का अन्तिम रूप निश्चित हो जाने पर अनुसन्धान-कर्ता उसकी परीक्षा करने के लिए उद्यत होता है। यह स्थल अनुसन्धान-कार्य के परिणामो का निर्णायक होता है। यहीं से क्रियात्मक-उपकल्पनाओं को सत्य अथवा असत्य घोषित करने का प्रमाण मिलता है। अनुसन्धानकर्ता को इस सोपान के अन्तर्गत कई प्रकार के प्रतिबन्धो का अनुगमन करना पड़ता है। अनुसन्धान के बारे मे अन्तिम निर्णय क्रियात्मक-उपकल्पनाओं की परीक्षा के आधार पर ही लिया जाता है।

पहले बताया जा चुका है कि क्रियात्मक-उपकल्पना के दो पक्ष होते हैं। एक पक्ष में क्रियाओं तथा कार्य-पद्धति के प्रति संकेत होता है तथा दूसरे पक्ष मे

उनके द्वारा प्राप्त होने वाले परिणामों का। क्रियात्मक-उपकल्पना का परीक्षा इसी आधार पर की जाती है। क्रियात्मक-उपकल्पना के दोनों पक्षों को स्पष्ट रूप से विश्लेषित कर उनकी तर्क-संगतता तथा सत्यता की परीक्षा विद्यालय की व्यावहारिक परिस्थितियों में की जाती है। क्रियात्मक-अनुसन्धानकर्ता को अपने क्षेत्र में इन उपकल्पनाओं को लागू करने के लिए किसी विशेष वातावरण का निर्माण करने की आवश्यकता नहीं होती है। कहना न होगा कि प्रत्येक क्रियात्मक-उपकल्पना की परीक्षा व्यावहारिक परिस्थितियों के सन्दर्भ में ही होती है।

क्रियात्मक-अनुसन्धान की यह सबसे बड़ी विशेषता है कि इसके अन्तर्गत जिन उपकल्पनाओं की परीक्षा होती है उनका प्रभाव व्यावहारिक परिस्थितियों द्वारा ही अनुमानित किया जा सकता है। विद्यालय के वास्तविक वातावरण में क्रियात्मक-उपकल्पनाओं की सत्यता का परीक्षण होता है। यह वातावरण कृत्रिम न होकर अत्यन्त स्वाभाविक तथा वास्तविक होता है। अनुसन्धानकर्ता अपनी दैनिक क्रियाओं में हेर फेर लाये बिना ही क्रियात्मक-उपकल्पना की परीक्षा कर लेता है।

इसका तात्पर्य यह नहीं है कि क्रियात्मक-उपकल्पनाओं की परीक्षा हेतु अनुसन्धानकर्ता को कोई तैयारी नहीं करनी पड़ती। विद्यालय के कार्य-क्रमों में हस्तक्षेप किये बिना किसी प्रकार का अनुसन्धान सम्भव नहीं है। क्रियात्मक-अनुसन्धान की यह विशेषता है कि इसके द्वारा विद्यालय के कार्यों में कम से कम हस्तक्षेप होता है। क्रियात्मक-अनुसन्धान की समस्या विद्यालय से सम्बन्धित होती है। अतः इसके अन्तर्गत सम्पादित होने वाली क्रियाएँ विद्यालय की स्वाभाविक क्रियाओं का अंग होती हैं। अनुसन्धानकर्ता को क्रियात्मक-उपकल्पना का कार्यान्वयन करने के लिए विद्यालय के अन्दर कोई विशेष प्रसाधन जुटाने अथवा विशेष प्रकार का वातावरण निर्मित करने की आवश्यकता नहीं होती है। चूँकि क्रियात्मक-उपकल्पना में कार्य-पक्ष का उल्लेख रहता है, अनुसन्धानकर्ता उसे अधिकाधिक शुद्धता एवं सावधानी के साथ व्यवहार में लागू करने की चेष्टा करता है। क्रियात्मक-उपकल्पना में संकेतित क्रिया को व्यवहार-रूप देने के लिए एक रूपरेखा (Design) तैयार करनी पड़ती है। कार्य-पद्धति का लेखा-जोखा कहा जा सकता है। इस प्रकार के विवरण क्रियात्मक-उपकल्पना की परीक्षा कुशलतापूर्वक सम्पन्न होती है।

क्रियात्मक-उपकल्पना अपने आप में पूर्ण होती है, किन्तु इसके कार्यान्वयन-अनुकूल व्यावहारिक परिस्थितियों की अपेक्षा होती है। इन व्यावहारिक [illegible] में क्रियात्मक-उपकल्पना को किस प्रकार लागू किया जाय, इसका

विवरण प्रस्तुत करना अत्यन्त आवश्यक है। अनुसन्धानकर्ता को चाहिए कि वह क्रियात्मक-उपकल्पना के कार्यान्वयन की विधि को कुछ विस्तार के साथ अंकित कर ले। इसे क्रियात्मक-उपकल्पना की परीक्षा हेतु रूपरेखा अथवा आकल्पन (Design) तैयार करना कहा जाता है। आगे हम इसी के बारे मे उदाहरणों की सहायता से स्पष्टीकरण करेंगे।

**क्रियात्मक-उपकल्पना की परीक्षा हेतु उपयुक्त रूपरेखा प्रस्तुत करना (Preparing a suitable design for evaluation of the action-hypothesis)**

यहाँ रूपरेखा से तात्पर्य है एक ऐसा खाका बनाना जिसके आधार पर क्रियात्मक-उपकल्पना का कार्यान्वियन सम्भव हो। इस खाके के अन्तर्गत कार्यान्वयन की विधि के सम्बन्ध में सविस्तार विवरण प्राप्त होता है। इस प्रकार का खाका प्रत्येक अनुसन्धान के लिए उपयोगी सिद्ध होता है।

यह ध्यान रखना चाहिए कि जो भी खाका अथवा रूपरेखा प्रस्तुत की जाय उसका सम्बन्ध क्रियात्मक-उपकल्पना तथा समस्या के विशिष्ट रूप से अवश्य हो। आगे कुछ क्रियात्मक-उपकल्पनाओं की परीक्षा हेतु उदाहरण के रूप में कतिपय रूपरेखाएँ प्रस्तुत की जा रही हैं।

**उदाहरण १—**

**क्रियात्मक उपकल्पना**—"छात्रों को अवकाश के बाद वाले घण्टों मे नित्य विविध कार्यक्रमो (यथा— प्रहसन, वाद-विवाद एवं अभिनय आदि) के आयोजन द्वारा उस समय पढ़ाये जाने वाले विषयो की नीरसता कम करने पर उनमें विद्यालय से बिना बताए चले जाने की प्रवृत्ति कम होगी।"

## क्रियात्मक-उपकल्पना की परीक्षा हेतु रूपरेखा

| क्रियाएँ जो प्रारम्भ करनी हैं | विधि | अपेक्षित साधन |
|---|---|---|
| १. अवकाश के बाद वाले घण्टों में पढ़ाये जाने वाले विषयो की सूची तैयार करना। | अध्यापक विद्यालय की समय-सारिणी के आधार पर यह सूची तैयार करेगा। | विद्यालय की समय-सारिणी |
| २. इन घण्टो मे पाँच-पाँच मिनट की कटौती कर उतने समय के अनुसार विविध कार्य-क्रमों को आयोजित करना। | प्रधानाचार्य की अनुमति लेकर ऐसा किया जायेगा। | |

| | | |
|---|---|---|
| ३. इन कार्य-क्रमों की सूची बनाना तथा इनके अन्तर्गत भाग लेने के लिए छात्रों को प्रोत्साहित करना। | अध्यापक अपने अन्य सहयोगियों की सहायता से यह कार्य करेगा। | पिछले वर्ष के कार्य-क्रमों की सूची तथा अन्य आवश्यक साहित्य। |
| ४. इन कार्य-क्रमों का आयोजन व्यवस्थित रूप में करना। | कार्य-क्रमों में व्यवस्था लाने की जिम्मेदारी अध्यापक स्वयं लेगा। | |
| ५. इन कार्य क्रमों के आयोजन का मुख्य लक्ष्य मनोरंजन एवं शारीरिक थकान रखते हुए ऐसे कार्य-क्रमों का चुनाव करना जो बालकों की रुचि के अनुकूल हों। | कार्य-क्रमों का चुनाव अध्यापक अपने अन्य सहयोगियों तथा छात्र-प्रतिनिधियों से पूछ कर करेगा। | |
| ६. प्रहसन, वाद-विवाद एवं अभिनय आदि में पर्याप्त विविधता लाना तथा उनमें छात्रों की उपस्थिति अनिवार्य कर देना। | विविधता लाने का प्रयास अध्यापक स्वयं करेगा। इनमें भाग लेना अनिवार्य बनाने के लिए वह प्रधानाचार्य की सम्मति लेगा। | अभिनय के लिए सामान्य सामग्रियाँ। |
| ७. छात्रों की रुचियों एवं इच्छाओं के अनुकूल कार्य-क्रमों में परिवर्तन लाते रहना। | छात्रों की रुचियों एवं इच्छाओं का पता उनसे मौलिक रूप में पूछ कर लगाया जाएगा तथा तदनुकूल परिवर्तन किये जाएँगे। | |

*समय—अनुमानित समय ६ महीने*

उदाहरण २—

क्रियात्मक-उपकल्पना—"समय-चक्र को बदल कर (अवकाश के पहले पढ़ाये जाने वाले विषयों को बाद में रख कर) छात्रों के विद्यालय से भाग जाने की प्रवृत्ति को कम किया जा सकता है।

## क्रियात्मक-उपकल्पना की परीक्षा हेतु रूपरेखा

| क्रियाएँ जो प्रारम्भ करनी हैं | विधि | अपेक्षित साधन |
|---|---|---|
| १. उन विषयों की सूची तैयार करना जो अवकाश के पहले पढ़ाये जाते हैं। | समय-सारिणी के आधार पर अध्यापक स्वयं करेगा। | समय-सारिणी |
| २. इन विषयों को अवकाश के बाद पढ़ाये जाने में अध्यापकों तथा छात्रों की सम्मति माँगना। | प्रश्नावली अथवा मौलिक रूप में अध्यापकों तथा छात्रों की सम्मति ली जायेगी। | अध्यापक द्वारा निर्मित प्रश्नावली |
| | समय—दो सप्ताह | |
| ३. सम्मति के आधार पर तदनुकूल परिवर्तन करना। | समय-चक्र का संशोधित रूप तैयार करना। | समय-सारिणी |
| | समय एक सप्ताह— | |
| ४. उन विशेष विषयों की सूची के अनुसार समय चक्र को परिवर्तित करते हुए उसे प्रधानाचार्य की अनुमति लेकर लागू करना। | संशोधित अथवा परिवर्तित समय-चक्र को लागू किया जायेगा। | |
| | समय—पाँच सप्ताह | |

उदाहरण ३—

क्रियात्मक उपकल्पना—"यदि अन्तिम घण्टों में नित्य उपस्थिति ली जाय तथा अनुपस्थित छात्रों को दण्डित किया जाय, तो छात्र विद्यालय से न भागेंगे।"

## क्रियात्मक-उपकल्पना की परीक्षा हेतु रूपरेखा

| क्रियाएँ जो प्रारम्भ करनी हैं | विधि | अपेक्षित साधन |
|---|---|---|
| १. विद्यालय के अंतिम घण्टों में पढ़ाये जाने वाले विषयों की सूची तैयार करना। | विद्यालय की समय-सारिणी द्वारा अध्यापक स्वयं करेगा। | समय-सारिणी |

| | | |
|---|---|---|
| २. उन विषयों के अध्यापकों द्वारा अन्तिम घण्टों में नित्य उपस्थिति लेने की व्यवस्था करना। | प्रधानाचार्य की अनुमति लेकर ऐसा किया जाएगा। | |
| ३. अनुपस्थित छात्रों के नाम प्रतिदिन प्रधानाचार्य के पास भेज देना। | विषयों के अध्यापक प्रति दिन अनुपस्थित छात्रों के नाम प्रधानाचार्य के पास भेज देंगे। | उपस्थिति रजिस्टर |
| ४ अनुपस्थित छात्रों के लिए उचित दण्ड की व्यवस्था एक 'दण्ड समिति' द्वारा किया जाना। | अध्यापकों एवं छात्रों की सम्मिलित दण्ड-समिति प्रधानाचार्य बनाएगा। | अनुपस्थित छात्रों की सूची |
| ५. दण्ड - समिति के निर्णयों को विद्यालय की प्रथम सभा में बताना। | 'दण्ड-समिति के अध्यक्ष द्वारा नित्य अपने निर्णयों की घोषणा' विद्यालय की प्रथम सभा में किया जाएगा। | |
| ६. उन निर्णयों के कार्यान्वियन हेतु अध्यापकों की समिति नियुक्त करना | विद्यालय के कतिपय अध्यापक इसका उत्तरदायित्व ग्रहण करेंगे कि दण्ड-समिति के निर्णय भली प्रकार लागू हों। | |

समय—अनुमानित समय २ माह

उदाहरण ४—

क्रियात्मक-उपकल्पना—"यदि विज्ञान तथा अंग्रेजी के अध्यापकों के लिए विद्यालय में ही कमजोर छात्रों की अतिरिक्त कक्षाएं लगाने की व्यवस्था की जाए तथा इसके लिए उन्हें प्रतिफल दिया जाय तो वे प्राइवेट ट्यूशन अधिक नहीं करेंगे और विद्यालय के कार्यों में ढीलापन नहीं दिखायेंगे।"

## क्रियात्मक-उपकल्पना की परीक्षा हेतु रूपरेखा

| क्रियाएँ जो प्रारम्भ करनी हैं | विधि | अपेक्षित साधन |
|---|---|---|
| १. अंग्रेजी तथा विज्ञान में कमजोर छात्रों की सूची तैयार करना। | अध्यापकों की सहायता से यह सूची विगत परीक्षा के आधार पर निर्मित की जाएगी। | वस्तुनिष्ठ एवं निबन्धात्मक परीक्षाएँ। |
| २. ऐसे छात्रों के अभिभावकों को अतिरिक्त शुल्क देने के लिए आग्रह करना। | प्रधानाचार्य प्रत्येक अभिभावक से पत्र-व्यवहार करेगा तथा आवश्यकता पड़ने पर अभिभावकों की सभा बुलाएगा। | |
| ३. विद्यालय में अतिरिक्त कक्षाओं की व्यवस्था करना। | प्रबन्धक की सहायता से प्रधानाचार्य अतिरिक्त कक्षाओं की व्यवस्था करेगा। | अतिरिक्त कक्ष तथा अन्य आवश्यक प्रसाधन |
| ४. अतिरिक्त कक्षाओं के सञ्चालन हेतु इच्छुक अध्यापकों की सूची बनाना। | विज्ञान तथा अंग्रेजी के सभी अध्यापकों से अतिरिक्त कक्षाएँ पढ़ाने की सम्मति माँगी जाएगी। | |
| ५. ऐसे सभी अध्यापकों को अतिरिक्त कक्षाएँ देना तथा इसके लिए प्रतिफल की रकम निश्चित करना। | इच्छुक अध्यापकों को अतिरिक्त कक्षाएँ दी जाएँगी तथा इसके लिए उन्हें प्रतिफल की व्यवस्था की जाएगी। | |

समय—अनुमानित समय-एक सत्र।

उदाहरण ५—

क्रियात्मक-उपकल्पना—"यदि विद्यालय में समय से उपस्थित न होने के लिए कुछ दण्ड दिये जायें तो छात्रों में विलम्ब से आने की प्रवृत्ति कम होगी।"

## क्रियात्मक-उपकल्पना की परीक्षा हेतु रूपरेखा

| क्रियाएँ जो प्रारम्भ करनी हैं | विधि | अपेक्षित साधन |
| --- | --- | --- |
| १. विद्यालय में समय से उपस्थित न होने वाले छात्रों की सूची नित्य प्रस्तुत करना। | अध्यापक कक्षा-मानीटर की सहायता से यह कार्य करेगा। | उपस्थिति रजिस्टर। |
| २. ऐसे छात्रों के लिए विद्यालय को 'प्रथम सभा' में सम्पूर्ण समूह के सम्मुख दण्ड देना। | प्रधानाचार्य, कतिपय अध्यापकों की सहायता से यह कार्य करेगा। | |
| ३. इस प्रकार के दण्डों को निश्चित करना। | अध्यापक तथा प्रधानाचार्य दण्डों के विविध रूप निश्चित करेंगे। | |
| ४. अध्यापकों द्वारा इसका लागू किया जाना। | अध्यापकों का एक पैनेल दण्डों को लागू करेगा। | |

समय—अनुमानित समय ८ सप्ताह

उदाहरण ६—

क्रियात्मक-उपकल्पना—"यदि विद्यालय का निश्चित समय आधा घण्टा बढ़ा दिया जाय (यथा : १० बजे के स्थान पर १०॥ बजे प्रारम्भ किया जाय) तो अध्यापक तथा विद्यार्थी विद्यालय में समय से उपस्थित हो जायेंगे।"

## क्रियात्मक-उपकल्पना की परीक्षा हेतु रूपरेखा

| क्रियाएँ जो प्रारम्भ करनी हैं | विधि | अपेक्षित साधन |
| --- | --- | --- |
| १. विद्यालय का समय १०॥ बजे से प्रारम्भ करने के लिए अध्यापकों तथा छात्रों की सम्मति लेना। | अध्यापकों तथा छात्रों से सामूहिक रूप से सम्मति ली जायेगी। | |

| २.१०॥ बजे विद्यालय का कार्यक्रम प्रारम्भ करना तथा नित्य उपस्थिति विषयक विवरण रखना। | प्रधानाचार्य कुछ अध्यापकों की सहायता से उपस्थिति विषयक विवरण रखेगा। | उपस्थिति विषयक रजिस्टर। |
|---|---|---|

समय—अनुमानित समय ३ माह

क्रियात्मक-उपकल्पना की परीक्षा हेतु जो इस प्रकार रूपरेखा निर्मित की जाती है उसके निम्नाङ्कित अङ्ग होते हैं :—

(१) **क्रियाओं का विवरण**—इसके अन्तर्गत जिन क्रियाओं को प्रारम्भ किया जाना है, उनका उल्लेख स्पष्टतापूर्वक कर दिया जाता है।

(२) **विधि**—जिन क्रियाओं का उल्लेख किया जाता है, उनकी सम्पादन-विधि के बारे में विवरण प्रस्तुत किया जाता है।

(३) **अपेक्षित साधन**—इससे तात्पर्य यह है कि अनुसन्धानकर्ता यह स्पष्ट करे कि अमुक क्रिया के सफल सम्पादन हेतु किन साधनों की आवश्यकता होगी।

(४) **समय**—इसके अन्तर्गत क्रियाओं के सम्पादन में अनुमानित समय का ब्योरा देना अभीष्ट होता है।

इन सभी को स्पष्टतापूर्वक समझने के लिए यह आवश्यक है कि पाठक पीछे के उदाहरणों में दी हुई रूपरेखाओं को अच्छी तरह पढ़ें।

इस प्रकार की रूपरेखा का निर्माण करने के पश्चात् अनुसन्धानकर्ता को कुछ विशेष बातों पर ध्यान देना होगा। क्रियाओं का विवरण देने के बाद उनका सम्भव अनुक्रम (Sequence) निश्चित कर देना चाहिए। उदाहरणार्थ गतपृष्ठों में प्रस्तुत रूपरेखाओं में जो क्रियाओं का विवरण दिया गया है उनका अनुक्रम निर्धारित नहीं किया गया है। अनुक्रम के अनुसार रखने पर ही इन क्रियाओं का कार्यान्वयन सुचारु रूप से हो सकता है। इसके अतिरिक्त अनुसन्धानकर्ता यह भी ध्यान रखेगा कि व्यावहारिक परिस्थितियों में कोई ऐसे विघ्न न उपस्थित हों जिनसे क्रियाओं के सम्पादन में कठिनाई हो। इसके लिए उसे प्रत्येक सम्भव नियन्त्रण रखने के लिए सचेष्ट रहना होगा। अनुसन्धानकर्ता को क्रियात्मक-उपकल्पना की परीक्षा के लिए, विद्यालय के अन्य सदस्यों से सहयोग लेते रहना चाहिए।

## सारांश

क्रियात्मक-उपकल्पना की परीक्षा हेतु एक उपयुक्त रूपरेखा (Design) का निर्माण करना अनुसन्धान की सफलता के लिए आवश्यक है। इससे अनुसन्धान-

कर्ता को क्रियात्मक-उपकल्पना के कार्यान्वयन में सुविधा होती है। उसे एक निश्चित एवं स्पष्ट दिशा में कार्य करने का आधार प्राप्त हो जाता है।

इस रूपरेखा की रचना करते समय पर्याप्त सावधानी बरतनी चाहिए। इसके अन्तर्गत जो विवरण दिये जाते हैं, वे इस प्रकार हैं—

(१) क्रियाओं का विवरण।

(२) जिस ढङ्ग से उन क्रियाओं को सम्पादित करना है।

(३) क्रियाओं के सम्पादनार्थ जिन साधनों की आवश्यकता होगी। तथा

(४) जितना समय अपेक्षित होगा।

अनुसन्धानकर्ता को चाहिए कि क्रियात्मक-उपकल्पना की परीक्षा हेतु निर्मित इस प्रकार की रूपरेखा का कार्यान्वयन वह अत्यन्त कठोरता के साथ न करे। किन्तु उसे इस बात के लिए सचेष्ट रहना होगा कि क्रियाओं के सम्पादन-काल में कोई विघ्न उपस्थित न हो।

## ६

# क्रियात्मक-अनुसन्धान के परिणामों का मूल्यांकन

"In the case of action research, it is not necessary that broad generalizations and interpretations be made. The solving of the immediate problem of the teacher may suffice in most instances. However, no scientific contribution will have been made until the results are tied in with some broader population. In the case of action research, the scientific contribution may be made through several replications of the experiment which produce similar results."
—*Hildreth Hohe Mc Ashan.*

शिक्षा में क्रियात्मक-अनुसन्धान विद्यालय की समस्याओं को वैज्ञानिक ढंग से हल करने का एक प्रयास है। इसके अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता समस्या का विश्लेषण, उसकी परिभाषा तथा स्वरूप-निर्धारण बड़ी सावधानी के साथ करता है। समस्या को अन्तिम रूप में स्थापना हो जाने पर उसके समाधान हेतु क्रियात्मक-उपकल्पनाओं का निर्माण किया जाता है। इन उपकल्पनाओं का कार्यान्वियन एक निर्धारित रूपरेखा के आधार पर प्रारम्भ होता है। गत अध्याय में हम यह बता चुके हैं कि इस प्रकार की 'रूपरेखा' की रचना किस प्रकार की जाती है। इन 'रूपरेखाओं' के कार्यान्वियन पर ही क्रियात्मक-अनुसन्धान के परिणामों का मूल्याङ्कन सम्भव है। क्रियात्मक-उपकल्पनाओं को

व्यवहार रूप में लागू करने के बाद ही क्रियात्मक-अनुसन्धान के परिणाम के बारे में घोषणा की जा सकती है।

अस्तु, क्रियात्मक-अनुसन्धान के परिणाम क्रियात्मक-उपकल्पना के कार्यान्वयन से घनिष्ट रूप से सम्बन्धित है। इन परिणामों के आधार पर ही क्रियात्मक उपकल्पना की सत्यता अथवा असत्यता का पता लगाया जाता है। ये परिणाम कभी-कभी अनुसन्धानों को उत्तेजित करते है। इसीलिए क्रियात्मक-अनुसन्धान की प्रक्रिया को अखण्ड माना जाता है।

क्रियात्मक उपकल्पना के कार्यान्वयन से प्राप्त होने वाले परिणाम ही क्रियात्मक-अनुसन्धान के परिणाम कहे जाते हैं। इन परिणामों का मूल्याङ्कन पर्याप्त सावधानीपूर्वक करना चाहिए। मूल्याङ्कन पद्धति में आत्मगत (Subjective) पक्षों पर पूर्ण प्रतिबन्ध रखना चाहिए ताकि कहीं ऐसा न हो कि जो कुछ भी परिणाम प्राप्त हो उन्हे वैयक्तिक पक्षपातों अथवा पूर्वाग्रहों के कारण पहचाना न जा सके।

प्रश्न उठाया जा सकता है कि इस प्रकार का मूल्याङ्कन क्यों आवश्यक है? क्या बिना मूल्याङ्कन के कार्य नहीं चल सकता? इसके उत्तर में हम कह सकते है कि प्रत्येक अनुसन्धान-कार्य का अन्तिम बिन्दु मूल्याङ्कन द्वारा निश्चित होता है। इसी के आधार पर हमें लक्ष्य-प्राप्ति के बारे में पता चलता है जो अनुसन्धान के लिए सर्वथा महत्वपूर्ण है। मूल्याङ्कन के बिना अनुसन्धानकर्ता को यह आभास नही हो पाता कि वह गन्तव्य तक पहुँच पाया है अथवा नहीं। अपने प्रयासों की सार्थकता का स्पष्ट ज्ञान प्राप्त करने के निमित्त उसे मूल्यांकन की महती आवश्यकता होती है।

## मूल्यांकन-विधियाँ

क्रियात्मक-अनुसन्धान के परिणामो का मूल्याङ्कन करने के लिए विशेष तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता नहीं होती। अनुसन्धानकर्ता अपने अनुभवों के आधार पर कुछ वस्तुनिष्ठ प्रणालियों का प्रयोग मूल्याङ्कनार्थ स्वयं कर सकता है। उसे मूल्याङ्कन-यन्त्रों का निर्माण करने के लिए कठोर तकनीक अपनाने की आवश्यकता नही है। कुछ सामान्य मूल्याङ्कन-विधियों का उल्लेख आगे किया जा रहा है।

(१) निरीक्षण (Observation)—क्रियात्मक-अनुसन्धान के परिणामों का मूल्याङ्कन इस विधि द्वारा प्रचुरता के साथ किया जाता है। इसके अन्तर्गत अध्यापक अथवा प्रधानाचार्य नियमित रूप से निरीक्षण करता है तथा निरीक्षण

निरीक्षण तीन प्रकार के होते हैं :—

(क) पूर्ण-व्यवस्थित निरीक्षण (Fully-structured observation)
(ख) अर्द्ध-व्यवस्थित निरीक्षण (Semi-structured observation)
(ग) स्वतन्त्र निरीक्षण (Free.observation)

अनुसन्धान के परिणामों का मूल्याङ्कन करने के लिए पूर्ण-व्यवस्थित निरीक्षण की पद्धति को ही अपनाना ज्यादा सङ्गत होगा। इससे निरीक्षण की वस्तुनिष्ठता बढ़ जाती है। इसके लिए एक खाका निश्चित कर लिया जाता है जिसमें उन बातों का उल्लेख होता है जिनके प्रति निरीक्षण करना है।

अर्द्ध-व्यवस्थित निरीक्षण में खाका का प्रयोग नितान्त आवश्यक नहीं होता। स्वतन्त्र निरीक्षण में परिस्थितियों को बिना नियन्त्रित किए अवलोकन किया जाता है। इन दोनों प्रकार के निरीक्षणों का प्रयोग क्रियात्मक-अनुसन्धान में अधिक बहुलतापूर्वक नहीं करना चाहिए क्योंकि इनमें आत्मगत पक्षों का समावेश होने की सम्भावना बनी रहती है।

पूर्ण-व्यवस्थित निरीक्षण के लिए अनुसन्धानकर्ता कुछ विशेष व्यक्तियों को नियुक्त कर सकता है और उन्हें एक व्यवस्थित रूप में निरीक्षण करने के लिए कहेगा। यह कार्य वह स्वयं भी कर सकता है। परिस्थितियों के अनुसार इस सम्बन्ध में उचित निर्णय लेना चाहिए।

जिन बातों का निरीक्षण करना हो उन्हें सूचीबद्ध कर देने से निरीक्षण में वस्तुनिष्ठता आती है। निरीक्षणकर्ता को निरीक्षण काल में केवल उन्हीं तथ्यों को अङ्कित करना चाहिए जो वस्तुगत रूप में विद्यमान हों। तथ्यों अथवा घटनाओं के अर्थों व व्याख्याओं का लेशमात्र भी उल्लेख नहीं करना चाहिए। क्रियात्मक-अनुसन्धान के परिणामों का मूल्याङ्कन करने हेतु निरीक्षण का प्रयोग अधोलिखित तालिका के आधार पर करना चाहिए।

## निरीक्षण हेतु पत्रक का नमूना

| निरीक्षण की परिस्थितियाँ | घटनाएँ या तथ्य जिन्हें निरीक्षित किया गया | विशेष विवरण | समय |
|---|---|---|---|
| इसके अन्तर्गत निरीक्षण के समय विद्यमान परिस्थिति का विवरण दिया जाना चाहिए यथा : कक्षा अथवा विद्यालय का वातावरण-शान्त अथवा अशान्त, निरीक्षणकर्ता की मनःस्थिति आदि। | इसमें उन घटनाओं अथवा तथ्यों को संक्षिप्त रूप में अंकित कर लिया जाता है जिनका निरीक्षण अभीष्ट था। | कुछ विशेष बातें लिख ली जाती हैं। | जितने समय तक निरीक्षण किया गया, उसे यहाँ अंकित किया जाता है। |

निरीक्षणकर्ता के हस्ताक्षर

..................................

इस निरीक्षण-पत्रक के साथ निरीक्षणकर्ता को वह सूची दे देनी चाहिए जिसमें निरीक्षण के विविध पक्षों का स्पष्ट उल्लेख रहता है। निरीक्षण के समय प्रायः सांकेतिक शब्दों (Code-words) का प्रयोग करना सुविधाजनक होता है। इसके लिए प्रत्येक निरीक्षण-कर्ता को चाहिए कि विशेष तथ्यों अथवा घटनाओं को अभिव्यक्त करने के लिए वे सांकेतिक शब्दों का पूर्व-निश्चय कर लें। इससे निरीक्षण की प्रक्रिया में वस्तुनिष्ठता की वृद्धि होती है। साथ ही ऐसा करना मितव्ययी भी होता है। निरीक्षणकर्ता कम से कम समय में अधिकाधिक बातों का निरीक्षण करने में समर्थ होंगे। ऊपर दिये गए निरीक्षण-पत्रक में विस्तार किया जा सकता है। अनुसन्धानकर्ता अपनी आवश्यकतानुसार इसे संशोधित या परिवर्द्धित कर सकते हैं।

(२) मत-संग्रह (Collection of opinion)—क्रियात्मक-अनुसन्धान के परिणामों का मूल्याङ्कन मत-संग्रह द्वारा भी किया जा सकता है। इसके लिए अनुसन्धानकर्ता विद्यालय के प्रधानाचार्य, अध्यापकों तथा छात्रों की सम्मति संग्रहीत करेगा। किन्तु स्मरण रहे कि दूसरों के मतों पर सर्वथा निर्भर करना अनुसन्धान की दृष्टि से उपयुक्त नहीं है। सम्भव है कि मतों को अभिव्यक्त करते समय विद्यालय के सभी लोग (जिनका मत संग्रह किया जा रहा हो) किसी विशेष पक्षपात के शिकार बन जायँ। ऐसी स्थिति का निराकरण करने के लिए प्रत्येक व्यक्ति के मतों को अलग-अलग एकत्र करना चाहिए।

मतों को अभिव्यक्त करने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को ऐसे विषयों की सूची देनी चाहिए जिन पर विचार व्यक्त करना हो। इससे सम्मतियों का आधार निश्चित हो जाता है और प्रत्येक व्यक्ति एक ही बात पर अपनी सम्मति प्रकट करता है। इस प्रकार के मत संग्रह द्वारा अनुसन्धान के परिणामों के बारे में अन्य व्यक्तियों के विचार मालूम हो जाते हैं।

(३) प्रश्नावली (Questionnaire)—अनुसन्धान के परिणामों का मूल्याङ्कन करने के लिए प्रश्नावली का विशेष महत्व नहीं है। किन्तु इसके द्वारा परिणामों के सम्बन्ध में अन्य लोगों की धारणा का पता लगाया जा सकता है। इसके अन्तर्गत कुछ ऐसे प्रश्नों को स्थान दिया जाना चाहिए जिनके माध्यम से क्रियात्मक-उपकल्पना के लक्ष्य तक पहुँच जाने की सूचना प्राप्त हो। मूल्याङ्कनार्थ प्रयोग में लायी जाने वाली प्रश्नावली के अन्तर्गत प्रश्न छोटे तथा एक क्रम में हों। उनके द्वारा प्रश्न पूछने का उद्देश्य स्पष्ट रूप से परिलक्षित होना चाहिए।

प्रश्नावली के दो रूप होते हैं—

(क) नियन्त्रित रूप (Restricted or closed-form type)

(ख) अनियन्त्रित रूप (Unrestricted or open-form type)

नियन्त्रित रूप प्रश्नावली के अन्तर्गत जो प्रश्न पूछे जाते हैं उनके सम्भावित उत्तर साथ ही दिये रहते हैं और उत्तरदाता को उन्हीं सम्भव उत्तरों में से किसी एक को चिन्हित करना पड़ता है। उदाहरणार्थ—

क्या विद्यालय के सभी छात्र समय से उपस्थित होने लगे हैं? हाँ/नहीं

यदि हाँ, तो निम्नलिखित में से किन कारणों से—(उपयुक्त को ✓ से चिन्हित करें)

(१) विद्यालय का समय १० बजे के बजाय १०॥ बजे कर देने से।

(२) अनुपस्थित होने वाले छात्रों को दण्डित करने से।

(३) ऊपर लिखित में से किसी से नहीं।

अनियन्त्रित रूप प्रश्नावली में प्रश्नों के उत्तर नहीं दिये जाते। उत्तरदाता स्वयं सोचकर उत्तर लिखता है। इस प्रकार के प्रश्नों में उत्तरदाता को पूर्ण स्वतन्त्रता होती है। उदाहरणार्थ—

(१) विद्यालय में छात्रों के भाग जाने की प्रवृत्ति अब क्यों कम हो रही है?

(२) विद्यालय में छात्र अवकाश के घण्टों के बाद पढ़ने में रुचि क्यों नहीं दिखाते?

क्रियात्मक-अनुसन्धान के परिणामों का मूल्यांकन करने के लिए नियन्त्रित-रूप प्रश्नावली (Closed form-type quetionnaire) का प्रयोग करना चाहिए। इससे मूल्यांकन में वस्तुनिष्ठता का समावेश होता है।

प्रश्नों का चुनाव अत्यन्त सतर्कतापूर्वक करना चाहिए। उनके उत्तरों को विचार-विमर्श द्वारा निर्धारित करने के पश्चात् ही प्रश्नों के साथ संलग्न करना चाहिए। अध्यापकों तथा छात्रों द्वारा मूल्यांकन कराने के लिए प्रश्नावली का प्रयोग करना चाहिए।

(४) साक्षात्कार (Interview)—क्रियात्मक अनुसन्धान में साक्षात्कार विधि का प्रयोग सबसे सरल है। इसके द्वारा विद्यालय के छात्रों तथा अध्यापकों का साक्षात्कार किया जा सकता है और उनके विचारों को जानकर अनुसन्धान के परिणामों के बारे में अनुमान लगाया जा सकता है। वस्तुतः साक्षात्कार तथा प्रश्नावली दोनों ही 'मत संग्रह' के दो ढंग हैं। इनके द्वारा व्यक्तियों की सम्मतियाँ अधिक वस्तुनिष्ठ रूप में संकलित हो जाती हैं।

(५) चेक लिस्ट (Check-list)—क्रियात्मक-अनुसन्धान के परिणामों को वस्तु-गत रूप में ज्ञापित करने के लिए यह एक सुगम तरीका है। इसके अन्तर्गत कुछ सूचियाँ प्रस्तुत की जाती हैं, जिन्हें चेक करने के लिए कहा जाता है। *व्यक्तिगत एवं सामान्य समस्याओं का पता लगाने के लिए भी यह एक मितव्ययी* साधन है। समस्याओं की सूची (List) प्रस्तुत करके व्यक्तियों से उन उपयुक्त समस्याओं को चिन्हित करने के लिए कहा जाता है जो उनके लिए लागू हैं। इस प्रकार की सूची समस्या चेक-लिस्ट (Problem check list) के नाम से पुकारी जाती है।

क्रियात्मक-अनुसन्धान के परिणामों का मूल्यांकन करने के लिए इसका *प्रयोग सावधानी के साथ करना चाहिए*। यह ध्यान रखना चाहिए कि चेक-लिस्ट के अन्तर्गत उन्हीं बातों का उल्लेख हो जिनका सम्बन्ध क्रियात्मक-उप-कल्पना के अभीष्ट प्रभावों से हो। इसके बिना चेक-लिस्ट की वैधता (Validity) दूषित हो जाती है। अतः प्रत्येक चेक-लिस्ट के अन्तर्गत केवल तर्क-संगत तत्वों का ही समावेश होना चाहिए।

(६) रेटिंग-स्केल (Rating-scale)—मूल्यांकन के लिए रेटिंग स्केल का प्रयोग अधिकतर किया जाता है। इस प्रकार के स्केल कुछ विशेष गुणों को रेट *करते हैं। इन गुणों की सूची दी गई रहती है और मूल्यांकनकर्ता* उनके आधार पर रेटिंग करता है। रेटिंग के लिए एक स्केल की कल्पना की जाती है जो इस प्रकार की हो सकती है—

*(क) पंचपदी (Five-point) रेटिंग स्केल—इसमें रेटिंग के लिए पाँच* बिन्दु या वर्ग होते हैं यथा—

| सर्वोत्कृष्ट | उत्कृष्ट | औसत | औसत से कुछ | कमनिकृष्ट |
|---|---|---|---|---|
| १ | २ | ३ | ४ | ५ |
| सदा (Always) | बार-बार (Frequenty) | कदा-कदा (Occasionally) | कदाचित (Rarely) | कभी नहीं (Never) |

रेट करने वाले को इन्हीं ५ वर्गों में से कहीं न कहीं रेटिंग करना होगा।

(ख) सप्त-पदी (Seven-point) रेटिंग स्केल—इस रेटिंग-स्केल के अन्तर्गत बिन्दुओं या वर्गों को ५ से बढ़ाकर ७ कर दिया जाता है। इससे रेटिंग में और अधिक सूक्ष्मता आजाती है। अभिवृत्ति स्केल ( Altitude-scale ) बनाने *के लिए तो एकादश-पदी ( Eleven-point ) स्केल तक का प्रयोग किया* जाता है।

सप्त-पदी रेटिंग स्केल का उदाहरण नीचे दिया जा रहा है :—

| सर्वोत्तम | अत्युत्तम | उत्तम | सामान्य |
|---|---|---|---|
| १ | २ | ३ | ४ |
| Excellent | Superior | Good | Average |

| निकृष्ट | निकृष्टतर | निकृष्टतम |
|---|---|---|
| ५ | ६ | ७ |
| Inferior | Poorly Inferior | Most Inferior |

रेटिंग स्केल के प्रयोग करने में कठिनाई यह होती है कि इसके अन्तर्गत जिन विशेषताओं अथवा गुणों को रेट किया जाता है, उनका स्पष्ट उल्लेख नहीं हो पाता। विशेषताओं अथवा गुणों को एकान्तिक श्रेणियों (Exclusive categories) में विभक्त करना सबसे कठिन कार्य है। एकान्तिक श्रेणियों (Exclusive categories) से तात्पर्य है ऐसी श्रेणियों से जिनको एक दूसरे में समाहित नहीं किया जा सकता। प्रत्येक श्रेणी अपने आप में स्वतन्त्र (Independent) होती है। दूसरी कठिनाई यह है कि रेट करने वाले लोगों के विशेष पक्षपातों को बहिष्कृत करना दुष्कर होता है। इसे विशेष प्रभाव (Halo-effect) के नाम से अभिहित किया जाता है। इससे तात्पर्य है कि रेटिंगकर्ता कुछ आकर्षक तत्वों से प्रभावित होकर ही रेटिंग कर देता है जिससे वास्तविक तत्वों की रेटिंग नहीं हो पाती। यदि इन कठिनाइयों को अच्छी तरह समझ कर इनका निवारण अत्यन्त सावधानीपूर्वक किया जाय तो रेटिंग-स्केल का प्रयोग उपयोगी सिद्ध होगा।

(७) परीक्षाएँ (Tests)—शिक्षण अथवा परीक्षण से सम्बन्धित क्रियात्मक-अनुसन्धानों के परिणाम कुछ विशेष परीक्षाओं के द्वारा ज्ञात किये जा सकते हैं। ये परीक्षाएँ अधोलिखित प्रकार की हो सकती हैं—

(क) वस्तुनिष्ठ परीक्षा (Objective-type test)
(ख) निबन्धात्मक परीक्षा (Essay-type test)
(ग) मौखिक परीक्षा (Oral test)
(घ) प्रयोगात्मक परीक्षा (Practical test)

इन परीक्षाओं का प्रयोग अध्यापक प्रायः किया करते हैं। इनमें वस्तुनिष्ठ-परीक्षा का प्रचलन हाल ही में हुआ है। अध्यापकों को चाहिए

कि इन सभी परीक्षाओं के प्रयोग को अधिक से अधिक वैज्ञानिक एवं वस्तुनिष्ठ बनाएं।

(८) सांख्यिकी विधियाँ (Statistical devices)—क्रियात्मक-अनुसन्धान में सांख्यिकी के लिए विशेष स्थान नहीं है। तथापि कुछ स्थलों पर सांख्यिकी की सरल विधियों का प्रयोग किया जा सकता है। इन विधियों के प्रयोग से अनुसन्धानकर्ता अपने परिणामों को वस्तुनिष्ठ ढंग से प्रकट कर सकता है। इन विधियों के बारे में अध्याय ११ में कुछ विस्तारपूर्वक वर्णन उपलब्ध है।

इन मूल्यांकन-विधियों के अतिरिक्त अन्य विधियाँ भी हैं जिनका प्रयोग क्रियात्मक अनुसन्धान के परिणामों का मूल्यांकन करने के निमित्त किया जा सकता है। अनुसन्धानकर्ता को अपनी आवश्यकतानुसार ही मूल्यांकन-विधियों का चुनाव करना चाहिए। इनके चुनाव में यह ध्यान रखना चाहिए कि मूल्यांकन-विधि उपयुक्त एवं सुलभ हो। कुछ अन्य बातों पर भी विचार करना आवश्यक होता है। वे इस प्रकार हैं—

(१) मूल्यांकन अधिक से अधिक विश्वसनीय एवं वस्तुनिष्ठ हो।
(२) मूल्यांकन की वैधता (Validity) पर कोई संशय न उठाया जा सके।
(३) व्यावहारिक दृष्टि से मूल्यांकन सुगम हो।
(४) मूल्यांकन के लिए वास्तविक (Authentic) साक्षियाँ उपलब्ध हों।
(५) मूल्यांकन में व्यक्तिगत पक्षपातों तथा पूर्वाग्रहों पर पूर्ण प्रतिबन्ध हो।
(६) *मूल्याङ्कन की उपयुक्तता (Relevance) एवं पर्याप्तता (Adequacy)* स्पष्ट रूप से निर्धारित की गई हो।
(७) मूल्याङ्कन में स्वाभाविकता का समावेश हो।
(८) मूल्यांकन का प्रयोग अनुसन्धानकर्ता स्वयं करे अथवा अन्य विश्वसनीय सूत्रों से प्राप्त करे।

इन बातों को दृष्टिगत रखते हुए मूल्यांकन करना चाहिए जिससे उसके द्वारा कुछ निष्कर्ष निकाले जा सकें। मूल्यांकन के आधार पर अनुसन्धान के परिणामों के बारे में अन्तिम निर्णय लिया जाता है।

अनुसन्धान के निष्कर्ष तथा सामान्यीकरण (Conclusions and generalizations of the research)

मूल्यांकन विधियों की सहायता से अनुसन्धान के अन्तिम परिणाम निश्चित किये जाते हैं जिन्हें निष्कर्ष अथवा सामान्यीकरण का नाम दिया जा सकता है। क्रियात्मक-अनुसन्धान में इस प्रकार के निष्कर्षों का महत्त्व पृथक् रूप में समझना चाहिए। परम्परागत अथवा मौलिक-अनुसन्धान में निष्कर्षों तथा सामान्य-

नियमों की प्राप्ति ही अनुसन्धान का चरम लक्ष्य होता है। किन्तु क्रियात्मक-अनुसन्धान में इस प्रकार के निष्कर्ष अथवा सामान्यीकरण अनुसन्धानकर्ता की कार्य-प्रणाली मे सुधार लाने के प्रति प्रत्यक्ष सुझाव होते हैं। इनके द्वारा विद्यालय की क्रियाओं को नये ढङ्ग से सम्पादित करने के लिए निर्देशन प्राप्त होता है। क्रियात्मक-अनुसन्धान के परिणाम विद्यालय की क्रियाओं को सहज रूप मे प्रभावित करते हैं। अनुसन्धानकर्ता इनके द्वारा प्राप्त निष्कर्षों तथा सामान्य नियमों से भविष्य के लिए प्रेरणा प्राप्त करता है और अपने भावी प्रयत्नों मे यथानुकूल संशोधन एवं परिवर्द्धन करता है।

## सारांश

क्रियात्मक-अनुसन्धान के परिणामों का मूल्यांकन पर्याप्त वस्तुनिष्ठता के साथ करना चाहिए। मूल्यांकन के आधार पर यह ज्ञात हो जाता है कि क्रियात्मक-उपकल्पनाओं के बारे में किस प्रकार का अन्तिम निर्णय लेना समीचीन होगा। इससे अनुसन्धान के गन्तव्य तक पहुँच जाने की सूचना प्राप्त होती है।

मूल्यांकन-विधियों मे उल्लेखनीय हैं—निरीक्षण, मत-संग्रह, प्रश्नावली, साक्षात्कार, चेक लिस्ट, रेटिंग स्केल, परीक्षाएँ तथा सांख्यिकी विधियाँ। इनका प्रयोग करते समय इनकी उपयुक्तता एवं पर्याप्तता के बारे में विचार कर लेना चाहिए।

मूल्यांकन के माध्यम से अनुसन्धानकर्ता अपने अनुसन्धान के सम्बन्ध में कुछ महत्वपूर्ण निष्कर्ष एवं सामान्यीकरण प्रतिपादित कर सकता है। क्रियात्मक-अनुसन्धान में इस प्रकार के निष्कर्ष तथा सामान्यीकरण अनुसन्धानकर्ता की क्रियाओं एवं भावी प्रयासों को परिवर्तित अथवा संशोधित करने मे सहायक होते हैं।

# १०

# क्रियात्मक-अनुसन्धान की योजनाएँ

"Action research is focused on the immediate application, not on the development, of theory. It has placed its emphasis on a real problem—here and now in a local setting. Its findings are to be evaluated in terms of local applicability, not in terms of universal validity. Its advocates propose that research be the function of group of teachers, wiih research specialists serving either as consultants or as members of the research team. This method provides sufficient flexibility to permit modification of the hypotheses and procedures as the study goes on. Its purpose is to improve school practices and, at the same time, to improve those who are to improve the practices. The purpose is to combine the research fuction with teacher growth in such qualities as objectivity, skill in research processes, habits of thinking, ability to work harmoniously with others, and professional spirit."

—*John W. Best.*

क्रियात्मक-अनुसन्धान की सफलता इस बात पर आधारित है कि हम इसके प्रति कितनी लगन एवं निष्ठा का भाव प्रदर्शित करते हैं। हमारे विद्यालयों में क्रियात्मक-अनुसन्धान द्वारा एक नई जाग्रति पैदा की जा सकती है। इसमें कोई संशय नहीं है कि आज भारतीय विद्यालय एक चौराहे पर खड़े हैं। इन्हें निश्चित दिशा प्रदान कर अनिश्चितता की अवस्था से मुक्त करना होगा।

विद्यालयों के सूत्र-धारों से यह आशा की जाती है कि वे विद्यालय की प्रगति के के प्रति संवेदनशीलता प्रकट करें तथा विद्यालय के अन्दर जकड़ी हुई रूढ़ियों तथा परम्पराओं के पाश का समूल उच्छेदन कर दें। इसके लिए उन्हें क्रियात्मक-अनुसन्धान की विधि से परिचित होना चाहिए। विद्यालयों के प्रधानाचार्य तथा अध्यापक क्रियात्मक अनुसन्धान को अपनी कार्य-प्रणाली का एक अविच्छिन्न अंग समझें वे क्रियात्मक-अनुसन्धान की योजनाओं का निर्माण करें तथा उनके कार्यान्वयन के प्रति कदम उठावें।

क्रियात्मक-अनुसन्धान की योजनाओं को प्रस्तुत करने के लिए विशेष चिन्तन की आवश्यकता है। ऐसी योजनाओं को तैयार करने में प्रधानाचार्य एवं अध्यापक दोनों ही प्रयास कर सकते हैं। इससे विद्यालय की कार्य-प्रणाली को सुधारने में आशातीत सफलता प्राप्त होगी। बड़े हर्ष की बात है कि नेशनल कॉउन्सिल ऑफ एजुकेशनल रिसर्च एण्ड ट्रेनिंग (दिल्ली) के तत्त्वावधान में विद्यालयों के लिए अनुसन्धान को प्रोत्साहित करने के निमित्त कुछ अलग धन-राशि की व्यवस्था की गई है। इसके द्वारा विद्यालयों से प्रयोगात्मक योजनाएँ (Experimental projects) माँगी जाती हैं तथा उनके लिए उपयुक्त धन का अनुदान देने की व्यवस्था है। अभी तक जिन 'प्रयोगात्मक-योजनाओं' के लिए इस प्रकार के अनुदान दिये गये हैं, उनकी संख्या अल्प है। आशा है कि निकट भविष्य में हमारे विद्यालयों से कई महत्त्वपूर्ण प्रयोगात्मक-योजनाएँ प्रस्तुत की जाएँगी और क्रियात्मक-अनुसन्धान को प्रोत्साहन दिया जाएगा।

इस अध्याय में क्रियात्मक-अनुसन्धान की योजनाओं के कतिपय नमूने जिन्हें लेखक ने स्वयं बनाया है, पाठकों के लाभार्थ उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

## क्रियात्मक-अनुसन्धान के लिए कतिपय-प्रयोगात्मक योजनाओं के नमूने

प्रयोगात्मक-योजनाओं (Experimental projects) के नमूनों को प्रस्तुत करने के पूर्व उनके प्रारूप (Proforma) को बता देना उचित होगा। नेशनल काउन्सिल ऑफ एजुकेशनल रिसर्च एण्ड ट्रेनिंग (दिल्ली) के अधिकारियों ने 'प्रयोगात्मक योजनाओं' (Experimental projects) को प्रस्तुत करने के निमित्त अधोलिखित प्रारूप (Proforma) निश्चित किया है—

**(क) योजना के सम्बन्ध में सूचना (Information about the project)—**

१. योजना का शीर्षक (Title of the project)
२. उद्देश्य (Aims or objectives)
३. प्रक्रियाएँ (Procedures)

४. मूल्यांकन (Evaluation)

५ अनुमानित-व्यय (Estimated expenditure)

(ख) विद्यालय के सम्बन्ध में सूचना—

१. नाम (Name)·······

२. विद्यार्थियों की संख्या (Number of students)···

३ *अध्यापकों की संख्या तथा उन अध्यापकों के नाम (योग्यता तथा अनुभव सहित) जो योजना से सम्बन्धित हैं।*

(Strength of the staff with the names, qualifications, *and experience of teachers,* who would be concerned with the project.)

४. क्या विद्यालय ने इस तरह की योजना इसके पूर्व कभी ली है? यदि हाँ, तो उसका संक्षिप्त विवरण दिया जाय।

(Has the school undertaken any such projcet or experimentation before? If so a brief account of the experiment *may be given.)*

५. योजना के कार्यान्वियन मे विद्यालय किस प्रकार की सुविधा—फर्नीचर तथा आवश्यक साधन आदि के रूप में—प्रदान कर सकता है?

(What facilities in the shape of *furniture, equipment* etc. can the school provide for carrying out the project?)

६. योजना के अन्तर्गत कार्य करने के लिए क्या विद्यालय अपने अध्यापकों को खाली कर सकता है?

(Will the school be able to provide time for theteachers to work on the project?)

७. प्रस्तावित योजना के सम्बन्ध में कोई अतिरिक्त सूचना जो विद्यालय देना चाहेगा···

*(Any other information the school* would like to supply in connection with the proposed poroject)

८. विद्यालय के समीपस्थ प्रसार-सेवा-विभाग का नाम।

(Name of the Extension Services Department nearest to the school)

विद्यालयों के प्रधानाचार्य तथा अध्यापकों को चाहिए कि इस प्रारूप की एक प्रति अपने समीप के 'प्रसार-सेवा-विभाग' से प्राप्त कर लें अथवा इस सम्बन्ध में निम्नांकित पते पर पत्र-व्यवहार करें।

Director,
National Council of Educational Research Training,
7. Lancers Road. TIMARPUR, DELHI-6.

क्रियात्मक-अनुसन्धान के अन्तर्गत इस प्रकार के 'प्रयोगात्मक-योजनाओं' को अधिकाधिक बढ़ावा दिया जाना चाहिए। लेखक ने इन योजनाओं का जो नमूना प्रस्तुत किया है उसका प्रारूप इस प्रकार है।

### योजना का प्रारूप

१. योजना का शीर्षक…… .. अनुसन्धानकर्ता…
२. योजना की पृष्ठ भूमि…
३. योजना के अन्तर्गत प्रस्तावित अनुसन्धान का उद्देश्य।
४. विद्यालय के लिए योजना का महत्व।
५. समस्या—
   (क) समस्या का क्षेत्र।
   (ख) समस्या का विशिष्ट रूप।
   सीमांकन तथा परिभाषीकरण
   (ग) समस्या के लए साक्षियाँ।
   (घ) समस्या के कारण-भूत तत्वों का विश्लेषण।
   (ङ) विशेष बातें।
६. क्रियात्मक-उपकल्पनाएँ तथा उनकी कार्यान्वियन पद्धति।
   (क) क्रियाएँ जो प्रारम्भ करनी हैं।
   (ख) विधि-जिस प्रकार उन्हें सम्पादित किया जायगा।
   (ग) उन क्रियाओं के कार्यान्वियन हेतु अपेक्षित साधन तथा समय।
   (घ) क्रियाओं को प्रथमता के अनुसार अनुक्रमित करना।
७. क्रियात्मक-उपकल्पनाओं के कार्यान्वियन से सम्बन्धित साक्षियों तथा उनके आधार पर मूल्यांकन।
८. अनुसन्धानकर्ता की टिप्पणी…

यदि विचारपूर्वक देखा जाय तो यह मालूम होगा कि योजनाओं का यह प्रारूप अधिक विस्तीर्ण (Comprehensive) है। इसके अन्तर्गत अनुसन्धान की सम्पूर्ण रूपरेखा सरलतापूर्वक प्रस्तुत की जा सकती है। पाठक अपने अनुभव के आधार पर इस प्रारूप में संशोधन एवं परिवर्द्धन स्वयं कर सकते हैं। यह स्मरण रखना चाहिए कि अनुसन्धान के लिए किसी प्रकार के प्रारूप का

कठोरतापूर्वक पालन अपेक्षित नहीं है। इस प्रकार के प्रारूप सुविधा एवं निर्धारणा की दृष्टि से प्रस्तुत किये जाते हैं।

## क्रियात्मक-अनुसन्धान की कतिपय योजनाएँ

### योजना सं० १

**योजना का शीर्षक**—"विद्यालय में अध्यापकों के कार्यों में अपेक्षित कुशलता एवं कर्तव्य-निष्ठा का भाव लाने के प्रति अध्ययन।"

**अनुसन्धानकर्ता**—उच्चतर-माध्यमिक विद्यालय के एक अनुभवी प्रधानाचार्य।

**योजना की पृष्ठ भूमि**—*विद्यालय के निरीक्षण-काल में यह विदित हुआ* कि कुछ अध्यापक समय से पहले ही घण्टा छोड़ देते हैं तथा कक्षा में प्रायः विलम्ब से जाते हैं। वे छात्रों के गृह-कार्यों को नहीं देखते तथा शिक्षण में रुचि नहीं प्रदर्शित करते। इसका अनुमान उनके शिक्षण को देखकर लगाया गया। ऐसे अध्यापक कक्षा में पूर्ण तैयारी के साथ शिक्षण नहीं करने के अभ्यासी बन गये हैं। वे विद्यालय के अन्य कार्यक्रमों (यथा: पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाएँ, एन० सी० सी० तथा सांस्कृतिक कार्यक्रम आदि) में भाग लेने से आनाकानी करते हैं तथा जो कुछ भी कार्य उन्हें सौंपा जाता है, उसे लापरवाही के साथ सम्पादित करते हैं। विद्यालय के अन्य अध्यापकों पर इसका प्रभाव पड़ता है तथा उनमें भी विद्यालय के प्रति निष्ठा-भाव कम होने की प्रवृत्ति दृष्टिगोचर हो रही है। ऐसे अध्यापक प्रमुखतः विज्ञान, गणित तथा अंग्रेजी पढ़ाने वालों में हैं। कतिपय स्रोतों से यह पता चला है कि ये अध्यापक प्राइवेट ट्यूशन अधिक मात्रा में करते हैं जिससे विद्यालय में कार्य करने से बचना चाहते हैं। ऐसे अध्यापकों में कर्तव्य-निष्ठा एवं व्यावसायिक-नैतिकता का भाव कैसे लाया जाय? इन्हें कुशल अध्यापक बने रहने के लिए किस प्रकार प्रेरणा प्रदान की जाय?

### योजना के अन्तर्गत प्रस्तावित अनुसन्धान का उद्देश्य

विचार-विमर्श के आधार पर प्रस्तुत योजना के निम्नलिखित उद्देश्य निश्चित किये गये हैं—

(१) विज्ञान तथा अंग्रेजी के अध्यापकों में विद्यालय के कार्यों को कुशलतापूर्वक करने के लिए समर्थ बनाना।

(२) उनमें विद्यालय के प्रति कर्तव्य-निष्ठा का सञ्चार करना।

(३) विद्यालय की क्रियाओं में निश्चित सुधार लाना।
(४) विद्यालय के सम्पूर्ण वातावरण में अध्यापकों का योग-दान उत्तम-कोटि का बनाना।

## विद्यालय के लिए योजना का महत्व

योजना का महत्व विद्यालय की कार्य-प्रणाली में अपेक्षित सुधार लाने की दृष्टि से विशेष है। इसके सफल कार्यान्वियन द्वारा विद्यालय का वातावरण शिक्षण की दृष्टि से पर्याप्त सुधर जायेगा। अध्यापकों में कर्तव्य-निष्ठा का भाव आयेगा जो विद्यालय के स्तर को ऊँचा उठाने में सहायक होगा। शिक्षण के लिए जो सभी अध्यापकों पर सामूहिक रूप में दोषारोपण किया जा रहा है, कम होगा। अध्यापक अपने कार्यों को करने में जिम्मेदारी का अनुभव करेंगे।

### समस्या

समस्या का क्षेत्र—विद्यालय में पर्यवेक्षण (Supervision) तथा संगठन (Organisation) को प्रभावपूर्ण बनाना।

समस्या का विशिष्ट रूप—विज्ञान तथा अंग्रेजी के अध्यापकों द्वारा विद्यालय के कार्यों को भली प्रकार न किया जाना।

यहाँ मोटे शब्दों से तात्पर्य है—उनके द्वारा कक्षाओं में बिना तैयारी के पाठ पढ़ाना, विद्यालय के कार्यों को समय से न करना, शिक्षण के अतिरिक्त अन्य क्रियाओं में उपस्थित न होना, तथा विद्यालय से समय के पूर्व ही चले जाना आदि।

### समस्या के लिए साक्षियाँ

(१) प्रायः विज्ञान तथा अंग्रेजी के अध्यापकों द्वारा ही शिक्षण में असावधानियाँ पकड़ी गई हैं। (प्रधानाचार्य के पर्यवेक्षण द्वारा)

(२) दो तिहाई विज्ञान तथा अंग्रेजी के अध्यापक विद्यालय के कार्यों को समय से नहीं करके देते।

(३) विज्ञान तथा अंग्रेजी के सभी अध्यापक पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं के आयोजन का उत्तरदायित्व ग्रहण करने में आनाकानी करते हैं तथा अधिकांश इन क्रियाओं में सक्रिय भाग नहीं लेते।

(४) विज्ञान तथा अंग्रेजी के लगभग एक तिहाई अध्यापक विद्यालय के अन्तिम घण्टों में प्रधानाचार्य से यह आग्रह करते पाये जाते हैं कि उन्हें घर जाने के लिए अनुमति मिल जाय।

(५) विद्यालय में अन्य कई अवसरों पर विज्ञान तथा अंग्रेजी के अध्यापक अपने उपस्थित रहने की असमर्थता प्रकट करते हैं।

## समस्या के कारणों का विश्लेषण

१. विज्ञान तथा अंग्रेजी के अध्यापकों को प्राइवेट ट्यूशन का लोभ।
२. उनमें कर्तव्य-निष्ठा का अभाव।
३. उनकी आर्थिक परिस्थितियों का अनुकूल न होना।
*४. विद्यालय के अध्यापकों में परस्पर सहयोग तथा संगठन का अभाव।
*५. विज्ञान तथा अंग्रेजी में छात्रों का अधिक कमजोर होना जिससे प्राइवेट ट्यूशन की अधिक माँग उत्पन्न होना।
*६ विज्ञान तथा अंग्रेजी में कार्यातिभार होना।
७. विज्ञान तथा अंग्रेजी के अध्यापकों में एक अनावश्यक अहंकार का भाव होना।
*८. विज्ञान तथा अंग्रेजी के लिए उपयुक्त पाठ्यक्रम, पाठ्य-पुस्तकों तथा प्रसाधनों का विद्यालय में उपलब्ध न होना।

अनुसन्धानकर्ता इन कारणों की यथार्थता का पता उपयुक्त साधियों के आधार पर करेगा।

## विशेष बातें

(१) वह इन कारणों का वर्गीकरण दो रूप में करेगा— वे कारण जो उसके अधीन हैं तथा वे जो उसके अधीन नहीं हैं। तारांकित कारण इस अनुसन्धान में अनुसन्धानकर्ता के अधीन हैं।

(२) इन्हीं कारणों के आधार पर नीचे की क्रियात्मक-उपकल्पनाओं का निर्माण किया गया है।

## क्रियात्मक-उपकल्पनाएँ तथा उनकी कार्यान्वियन-पद्धति

क्रियात्मक-उपकल्पना सं० (१)—यदि विद्यालय में अतिरिक्त कक्षाओं की व्यवस्था द्वारा विज्ञान तथा अंग्रेजी के अध्यापकों को अतिरिक्त पारिश्रमिक दिया जाय तो इन्हें आर्थिक दृष्टि से निश्चिन्तता प्राप्त होगी और वे विद्यालय के कार्यों को भली प्रकार सम्पादित करेंगे।

क्रियात्मक-उपकल्पना सं० (२)—विद्यालय में विज्ञान तथा अंग्रेजी के कमजोर छात्रों के लिए अलग से शिक्षण की व्यवस्था की जाय तथा इसके लिए अतिरिक्त अध्यापकों की व्यवस्था भी हो तो विज्ञान तथा अंग्रेजी के अध्यापक कार्यातिभार का अनुभव नहीं करेंगे और वे विद्यालय के कार्यों को भली प्रकार से करेंगे।

## क्रियात्मक-उपकल्पना सं० (१) का कार्यान्वयन

| क्रियाएं जो प्रारम्भ करनी हैं | विधि | अपेक्षित साधन |
| --- | --- | --- |
| १. अतिरिक्त कक्षाओं की व्यवस्था के लिए उन छात्रों की सूची बनाना जो अतिरिक्त समय में पढ़ने के लिए इच्छुक हों। | प्रधानाचार्य यह कार्य अध्यापकों की सहायता से करेगा। | इच्छुक छात्रों का नाम प्राप्त करने के लिए आवश्यक सूचना-पत्रक |

समय—दो सप्ताह

| क्रियाएं जो प्रारम्भ करनी हैं | विधि | अपेक्षित साधन |
| --- | --- | --- |
| २. इन छात्रों के अभिभावकों से मिलकर अतिरिक्त शुल्क की दर निर्धारित करना। | अभिभावकों को विद्यालय में ३ बजे से ४ बजे के बीच बुला कर। | अभिभावकों के लिए पत्र |

समय—दो सप्ताह

| क्रियाएं जो प्रारम्भ करनी हैं | विधि | अपेक्षित साधन |
| --- | --- | --- |
| ३. अतिरिक्त कक्षाओं के आकार ( Size ) निश्चित करना। | यह कार्य अध्यापकों तथा छात्रों की सम्मतियों द्वारा किया जाएगा। | सम्मति-पत्रक |

समय—एक दिन

| क्रियाएं जो प्रारम्भ करनी हैं | विधि | अपेक्षित साधन |
| --- | --- | --- |
| ४. उन अध्यापकों (विज्ञान तथा अंग्रेजी के) की सूची तैयार करना जो अतिरिक्त कक्षाएं पढ़ाने के लिए उद्यत हों। | अध्यापकों को सूचित कर प्रधानाचार्य स्वयं यह सूची निर्मित करेगा। | आवश्यक सूचना |

समय—एक सप्ताह

| क्रियाएं जो प्रारम्भ करनी हैं | विधि | अपेक्षित साधन |
| --- | --- | --- |
| ५. इस कार्य के लिए अध्यापकों के पारिश्रमिक की दर तय करना। | अध्यापकों की सभा बुला कर। | |

समय—एक दिन

| | | |
|---|---|---|
| ६. प्रत्येक अध्यापक को उसकी सुविधानुसार अतिरिक्त कक्षाएँ देने की व्यवस्था करना। | अध्यापकों की परामर्श लेकर। | ...... |

समय—एक दिन

| | | |
|---|---|---|
| ७. अध्यापकों को समकाल ही विद्यालय की अन्य क्रियाओं में भाग लेने के प्रति अवसर देना। | यह कार्य लम्बी अवधि तक सम्पन्न होगा। | कक्षाओं में विशेष प्रसाधन, फर्नीचर आदि। |

समय—तीन माह

| | | |
|---|---|---|
| ८. इस सम्बन्ध में अन्य अध्यापकों की सम्मतियाँ एकत्र करना जिससे यह पता लग सके कि कितने अध्यापक अब अपने उत्तरदायित्वों का निर्वाह भली प्रकार कर रहे हैं। | योजना के कार्यान्वयन काल में ही इस प्रकार की सम्मतियों को यथानुकूल संग्रहीत किया जाएगा। | प्रश्नावली तथा साक्षात्कार। |

समय—एक सप्ताह

क्रियात्मक-उपकल्पना सं० (२) का कार्यान्वयन

| क्रियाएँ जो प्रारम्भ करनी हैं | विधि | अपेक्षित साधन |
|---|---|---|
| १. कमजोर छात्रों को छाँटना। | वस्तुनिष्ठ तथा निबन्धात्मक परीक्षाओं के द्वारा। | वस्तुनिष्ठ परीक्षाएँ जो विद्यालय में अथवा अन्य जगह निर्मित हो चुकी हैं। |
| २. जो विज्ञान तथा अंग्रेजी में अत्यन्त कमजोर हैं उनकी सूची तैयार करना। | छात्रों के अङ्कों को विश्लेषित कर। | ...... |

समय—एक सप्ताह

| | | |
|---|---|---|
| ३. विद्यालय के समय मे ही ऐसे छात्रों की कक्षाएँ लगाने के लिए कमरो का पता लगाना। | समय-सारिणी द्वारा विविध कक्षाओ के लिए नियुक्त कमरों की पता लगाकर। | ...... |
| ४. अतिरिक्त अध्यापको की व्यवस्था के बारे मे विद्यालय के प्रबन्धक से परामर्श लेना। | प्रबन्धक के समक्ष विद्यालय की समस्या को स्पष्ट रूप से रख कर। | ...... |
| ५. विज्ञान तथा अंग्रेजी के अध्यापकों का कार्य-भार ज्ञात करना तथा उसे अन्य अध्यापकों की तुलना मे अधिक न होने देने की व्यवस्था करना। | अध्यापको से उनके कार्यों का विवरण लेकर तथा समय-सारिणी से उनके द्वारा प्रतिदिन पढ़ाये जाने वाले घण्टो को गिन कर। | समय-सारिणी |

समय—एक दिन

| | | |
|---|---|---|
| ६. अतिरिक्त अध्यापको की व्यवस्था करने से विज्ञान तथा अंग्रेजी के अध्यापको में कितना संतोष है इसका पता लगाना। | प्रश्नावली एवं साक्षात्कार द्वारा। | अतिरिक्त अध्यापकों तथा कक्षागृहों की व्यवस्था। |

समय —तीन माह

| | | |
|---|---|---|
| ७. इससे विज्ञान तथा अंग्रेजी के अध्यापकों मे अपने कार्यों को निष्ठापूर्वक करने का भाव किस प्रकार प्रदर्शित होता है—इसकी जाँच करना। | प्रश्नावली तथा पर्यवेक्षण द्वारा। | ...... |

समय—एक सप्ताह

इन दोनों क्रियात्मक-उपकल्पनाओं के कार्यान्वयन में कुल लगभग ६ माह लगेंगे। इनके अन्तर्गत जिन क्रियाओ का उल्लेख किया गया है, उन्हें प्रथमता (Priority) के अनुसार अनुक्रमित करना अभी शेष है।

मूल्याङ्कन—वस्तुत: क्रियात्मक-उपकल्पनाओं की सत्यता का मूल्याङ्कन उपलब्ध साक्षियों के आधार पर किया जाएगा। अनुसन्धानकर्ता मूल्यांकन विधि को अधिक से अधिक वस्तु-निष्ठ बनाने का प्रयत्न करेगा। वह प्रमुखत: प्रश्नावली तथा निरीक्षण-विधि की सहायता से मूल्याङ्कन करेगा। प्रश्नावली का निर्माण कतिपय अध्यापकों की परामर्श लेकर किया जायेगा।

अनुसन्धानकर्ता की टिप्पणी—योजना के कार्यान्वयन के समय जो विशेष परिस्थितियाँ उपस्थित होंगी उनका रेकार्ड व्यवस्थित रूप में रखा जायगा। अनुसन्धान-कार्य की सीमाओं के प्रति संकेत प्रस्तुत करने के निमित्त अन्य सम्बन्धित सूचनाओं को संग्रहीत किया जाएगा।

### योजना सं० २

योजना का शीर्षक—"छात्रों द्वारा विद्यालय के वाचनालय तथा पुस्तकालय का संतोषजनक उपयोग न करने की प्रवृत्ति को हटाने के निमित्त अध्ययन।"

अनुसन्धानकर्ता—भाषा (हिन्दी तथा अंग्रेजी) एवं सामाजिक-अध्ययन विषयों को पढ़ाने वाले वरिष्ठ अध्यापक सामूहिक रूप में।

योजना की पृष्ठ-भूमि—गत चार वर्षों से छात्रों में यह प्रवृत्ति दृष्टिगत हो रही है कि वे अपने अवकाश के समय में इधर-उधर घूमते हैं अथवा कहीं बैठकर बकवास करते हैं। विद्यालय के अन्तर्गत वाचनालय तथा पुस्तकालय का प्रयोग करने वाले छात्रों की संख्या दिन प्रति दिन ह्रास पर है। वाचनालय में विविध प्रकार की पत्र-पत्रिकाएँ मंगाई जाती हैं किन्तु उनको उपयोग में लाये बिना ही हटा दिया जाता है। यही हाल पुस्तकालय का है। छात्रों द्वारा पुस्तकालय से पुस्तकें लेकर पढ़ने की आवृत्ति नाम मात्र को है। ख़ास कर भाषा तथा सामाजिक-अध्ययन की पुस्तकों को छात्र छूते तक नहीं हैं। यदि यही स्थिति बनी रही तो थोड़े ही दिनों मे पुस्तकालय तथा वाचनालय अस्तित्वहीन बन जाएँगे तथा उनका महत्व केवल सिद्धान्त रूप मे ही सत्य सिद्ध हो सकेगा। विद्यालय के छात्र पुस्तकालय तथा वाचनालय का प्रयोग संतोषजनक ढंग से किस प्रकार करें—यह एक विचारणीय विषय है।

### योजना के अन्तर्गत प्रस्तावित अनुसन्धान का उद्देश्य

(१) छात्रो में विद्यालय के वाचनालय तथा पुस्तकालय का उचित उपयोग करने की प्रवृत्ति उत्पन्न करना।

(२) विद्यालय के वाचनालय तथा पुस्तकालय को एक महत्वपूर्ण शैक्षिक केन्द्र बनाना।

(४) वाचनालय तथा पुस्तकालय में पढ़ते समय एक उपयुक्त वातावरण निर्मित करना।

## विद्यालय के लिए योजना का महत्व

पुस्तकालय तथा वाचनालय किसी भी विद्यालय के आभूषण होते है। यही वे स्थल हैं जहाँ ज्ञान का अखण्ड कोष सतत विद्यमान रहता है। यदि विद्यालय वास्तविक रूप मे शिक्षा देना चाहता है तो उसे अपने पुस्तकालय तथा वाचनालय के प्रयोग को प्रोत्साहित करना नितान्त आवश्यक है। इसके बिना विद्यालय में समुचित वातावरण का समावेश होना दुर्लभ है। छात्रों में स्वतन्त्र-अध्ययन की क्षमता विकसित करने के लिए पुस्तकालय तथा वाचनालय अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।

## समस्या

**समस्या का क्षेत्र**—विद्यालय-संगठन को अधिक प्रभावशाली बनाना।

**समस्या का विशिष्ट रूप**—"विद्यालय के पुस्तकालय तथा वाचनालय का विद्यालय की वरिष्ठ कक्षाओं (६ वीं एवं १० वी) के छात्रो द्वारा संतोषजनक प्रयोग न किया जाना।"

यहाँ मोटे शब्दों से अभिप्राय है—छात्रों द्वारा वाचनालय में यदा-कदा आना, पुस्तकालय तथा वाचनालय की पुस्तको तथा पत्र-पत्रिकाओं को न पढ़ना, अवकाश के समय वाचनालय मे आकर अनावश्यक वार्तालाप करना आदि।

## समस्या के लिए साक्षियाँ

(१) ६ वीं तथा १० वी कक्षा के छात्र वाचनालय तथा पुस्तकालय मे यदा-कदा पदार्पण करते हुए पाये गये हैं।

(२) इन कक्षाओं के छात्रो द्वारा पुस्तकालय से उधार लेकर पढ़ी जाने वाली पुस्तकों की सख्या औसतन २ प्रतिवर्ष प्रति १० छात्र है।

(३) वाचनालय तथा पुस्तकालय मे ये छात्र जब कभी आते हैं तो अनावश्यक वार्ता करने मे रुचि लेते हैं।

(४) इन छात्रो को वाचनालय एवं पुस्तकालय की पत्र-पत्रिकाओ तथा पुस्तको की जानकारी न होना।

## समस्या के कारणों का विश्लेषण

(१) पुस्तकालय तथा वाचनालय में छात्रों की रुचियो के अनुकूल पुस्तकों तथा पत्र-पत्रिकाओं का न होना।

(२) पुस्तकालय में अपेक्षित व्यवस्था का अभाव।

(३) छात्रों द्वारा परीक्षा की तैयारी मे अधिक लगा रहना।

(४) वाचनालय तथा पुस्तकालय में स्थानाभाव का होना।

(५) अध्यापकों द्वारा छात्रों को पुस्तकालय का प्रयोग करने के प्रति प्रोत्साहित न किया जाना।

(६) पुस्तकालय में पर्याप्त पुस्तकों तथा पत्र-पत्रिकाओं का अभाव।

(७) पुस्तकालय तथा वाचनालय का उपयुक्त स्थान पर स्थित न होना।

### विशेष बातें

(१) अनुसन्धानकर्ता इन कारणों की यथार्थता का पता उपयुक्त साक्षियाँ जुटाकर करेंगे।

(२) वे कारण जो अनुसन्धानकर्ताओं के अधिकार-क्षेत्र के भीतर हैं, उन्हें ही समाधान का विषय बनाया जाएगा।

(३) क्रियात्मक-उपकल्पनाएँ इन्हीं के आधार पर निर्मित की गई हैं।

### क्रियात्मक-उपकल्पनाएँ तथा उनकी कार्यान्वयन-पद्धति

क्रियात्मक-उपकल्पना सं० (१)—पुस्तकालय तथा वाचनालय में छात्रों की रुचियों पर ध्यान रखते हुए अध्ययन-सामग्री की व्यवस्था की जाय तो छात्र उनका प्रयोग संतोषजनक ढंग से करेंगे।

क्रियात्मक-उपकल्पना सं० (२)—पुस्तकालय में अपेक्षित व्यवस्थापूर्वक छात्रों को पढ़ने के प्रति प्रोत्साहित करने पर वे उसका संतोषजनक प्रयोग कर सकेंगे।

## क्रियात्मक-उपकल्पना सं० (१) का कार्यान्वयन

| क्रियाएँ जो प्रारम्भ करनी हैं | विधि | अपेक्षित साधन |
|---|---|---|
| १. वरिष्ठ कक्षाओं के छात्रों की रुचियों का पता लगाना तथा उनकी प्रिय अध्ययन-सामग्री की सूची बनाना। | प्रश्नावली देकर छात्रों की रुचियों का पता लगाना। | रुचि-विषयक प्रश्नावली। |
| २. उन पुस्तकों तथा पत्र-पत्रिकाओं की व्यवस्था करना जिन्हें छात्र पसन्द करते हों। | पुस्तकालय में नई पुस्तकें तथा पत्र-पत्रिकाएँ मँगवाना | पुस्तकें तथा पत्र-पत्रिकाएँ। |

समय—तीन सप्ताह

| | | |
|---|---|---|
| ३. पुस्तकालय तथा वाचनालय में नवीन प्रकार की पुस्तकों से छात्रों का परिचय कराना। | अध्यापक स्वयं यह कार्य करेंगे। | ...... |

समय—एक सप्ताह

| | | |
|---|---|---|
| ४. प्रत्येक अध्यापक छात्रों के साथ पुस्तकालय तथा वाचनालय का प्रयोग किया करेगा। | अध्यापक तथा छात्र प्रतिदिन अपने अवकाश के घंटों में पुस्तकालय तथा वाचनालय का साथ-साथ प्रयोग करेंगे। | .. |

समय—तीन सप्ताह

## क्रियात्मक-उपकल्पना सं० (२) का कार्यान्वयन

| क्रियाएँ जो प्रारम्भ करनी हैं | विधि | अपेक्षित साधन |
|---|---|---|
| १. पुस्तकालय की सभी वर्तमान पुस्तकों का छात्रों की रुचियों के अनुसार वर्गीकरण करना। | अध्यापक कुछ छात्रों की सहायता से यह करेंगे। | रुचि विषयक प्रश्नावली तथा पुस्तकों का रजिस्टर। |

समय—तीन सप्ताह

| | | |
|---|---|---|
| २. विविध विषयों में पुरानी तथा नई पुस्तकों के लिए पृथक-पृथक आलमारियों की व्यवस्था करना। | पुस्तकालय के इन्चार्ज की परामर्श से यह कार्य किया जाएगा। | विविध पुस्तकों को रखने के लिए आलमारियाँ। |
| ३. पुस्तकालय में पर्याप्त फर्नीचर तथा अन्य सुविधाएँ प्रदान करना। | प्रधानाचार्य की स्वीकृति लेकर यह प्रबन्ध किया जायेगा। | आवश्यक फर्नीचर। |

समय—एक सप्ताह

| | | |
|---|---|---|
| ४. पुस्तकालय से समय से पुस्तकें उधार लेने तथा लौटाने आदि के बारे में नियमावली बनाना, | अध्यापक तथा पुस्तकालय के इन्चार्ज स्वयं यह कार्य करेंगे। | ... ... |

| | | |
|---|---|---|
| उसे लागू करना तथा नियमों को कठोरता-पूर्वक पालन करना। | | |
| | समय—तीन सप्ताह | |
| ५. अध्यापकों द्वारा छात्रों को पुस्तकालय की पुस्तकों को पढ़ने के प्रति प्रोत्साहित करते रहना। | विद्यालय के सभी अध्यापक *अपने-अपने विषयों की पुस्तकें* बताकर पुस्तकालय में पढ़ने का परामर्श देंगे। | ...... |
| | *समय—नित्य* | |

इन दोनों *क्रियात्मक-उपकल्पनाओं* के *कार्यान्वियन में लगभग ८ माह* लगेंगे। इनके अन्तर्गत जिन क्रियाओं का उल्लेख किया गया है वे प्रायः प्रथमता के अनुसार अंकित हैं।

**मूल्याङ्कन**—प्रस्तुत योजना में क्रियात्मक-उपकल्पनाओं का मूल्याङ्कन *प्रश्नावली, सम्मति-पत्रक* तथा पर्यवेक्षण द्वारा किया जायगा। *प्रश्नावली तथा* सम्मति-पत्रक की रचना अध्यापक स्वयं करेंगे।

**अनुसन्धानकर्ता की टिप्पणी**—पुस्तकालय तथा वाचनालय का प्रयोग करते समय छात्रों की क्रियाओं का विवरण रखा जायगा।

## विद्यालय के अधिकारियों से अनुरोध

प्रस्तुत अध्याय में जिन योजनाओं की रूपरेखा पाठकों के समक्ष रखी गई है उन्हें आदर्श के रूप में नहीं लेना चाहिए। इस प्रकार की सहस्रों योजनाओं *को कार्य रूप देने के लिए हमारे विद्यालयों के अधिकारी वर्ग कदम उठा सकते* हैं। आवश्यकता केवल आत्म-विश्वास एवं वस्तुनिष्ठ दृष्टि पैदा करने की है। यदि राष्ट्र से सभी को वास्तविक प्रेम है तथा प्रजातन्त्रात्मक मूल्यों की स्थापना शीघ्रातिशीघ्र करनी है तो हमारे विद्यालयों को सजग करना होगा। उनमें एक नव-जीवन का संचार करना होगा। क्रियात्मक-अनुसन्धान का अनुसरण आधुनिक परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए अत्यन्त कल्याणकारी सिद्ध होगा।

## सारांश

क्रियात्मक-अनुसन्धान की योजनाएँ विधिवत् रूप में प्रस्तुत हों इनके लिए एक निश्चित प्रारूप (Proforma) का अनुसरण करना अत्यन्त सुविधा-जनक प्रतीत होगा। नेशनल काउन्सिल ऑफ एजूकेशनल रिसर्च एण्ड ट्रेनिंग ( दिल्ली ) तथा प्रसार-सेवा-विभाग से इस सम्बन्ध में सम्पर्क स्थापित करना चाहिए। योजनाओं को परस्पर विचार-विमर्श द्वारा अधिकाधिक तर्क-संगत तथा व्यावहारिक दृष्टि से उपयोगी बनाने की अतीव आवश्यकता होती है।

## ११

# क्रियात्मक-अनुसन्धान में सांख्यिकी-विधियों का प्रयोग

"One of the best ways of discouraging classroom teachers or other practical school people from experimenting is to emphasize statistics as such. This is quite different from emphasizing the value of getting maximum meaning from quantitative data. It is almost impossible to do the latter without learning some statistical concepts and operations. When a teacher-or anyone else, for that matter-needs precise, quantitative measures of central tendency or variability or the relationship among variables in order to understand something he wants very much to understand, statistics take on a surprisingly different significance."

—*Stephen M. Corey.*

क्रियात्मक-अनुसन्धान में सांख्यिकी विधियों के प्रयोग का विशेष महत्व नहीं है। तथापि कुछ ऐसे स्थल हैं जहाँ इनके प्रयोग से यथेष्ठ लाभ उठाया जा सकता है। सांख्यिकी-विधियों के द्वारा अनुसन्धान के परिणामों का वस्तु-निष्ठ ढंग से मूल्यांकन सम्भव है। इनके उपयोग से अनुसन्धानकर्ता अपने निर्णयों को वस्तु-निष्ठ बना सकता है। इस अध्याय में हम उन्हीं सांख्यिकी-विधियों का विवरण देंगे जिन्हें क्रियात्मक-अनुसन्धान के लिए प्रयोग किया जा सकता है।

प्रमुख सांख्यिकी-विधियाँ जिनका प्रयोग क्रियात्मक-अनुसन्धान में प्रदत्तों का वर्णन करने के उद्देश्य से किया जाना सम्भव है, वे इस प्रकार हैं—

· (क) केन्द्रवर्ती मान (Measures of Central tendency)
(ख) विचलन मान (Measures of Variability)
(ग) सहसम्बन्ध मान (Measures of Correlation)
इन विधियों के बारे में टिप्पणियाँ आगे प्रस्तुत हैं।

## (क) केंद्रवर्ती मान (Measures of Central tendency)

क्रियात्मक-अनुसन्धान में केन्द्रवर्ती मानों का प्रयोग शिक्षण अथवा परीक्षण विषयक समस्याओं के लिए किया जा सकता है। इनके द्वारा किसी समूह की केन्द्रवर्ती प्रवृत्ति का द्योतन होता है। उदाहरणार्थ कोई अध्यापक अपने छात्रों को विशेष विधि से पढ़ाता है। वह छात्रों की निष्पत्ति वस्तु-निष्ठ परीक्षा देकर ज्ञात करता है। इस प्रकार छात्रों को जो अङ्क प्राप्त होंगे उन्हें वह केन्द्रवर्ती मानों द्वारा प्रकट कर सकता है। इससे पूरे समूह की निष्पत्ति का आभास प्राप्त होगा।

केन्द्रवर्ती मान तीन प्रकार के होते हैं—
(१) मध्यमान (Mean)
(२) मध्याङ्क मान (Median)
(३) बहुलाङ्क मान (Mode)

(१) मध्यमान (Mean)—किसी समूह के केन्द्रवर्ती झुकाव को प्रकट करने वाला वह मान है जिसके दोनों ओर विचलन समान होते हैं। मध्यमान के दोनों तरफ विचलन का योग शून्य के बराबर होता है (The sum of the deviations from the mean is equal to zero) मध्यमान का प्रयोग व्यवस्थित तथा अव्यवस्थित (Grouped and ungrouped) । दोनों तरह के प्रदत्तों में होता है।

अव्यवस्थित प्रदत्त उसे कहते हैं जहाँ प्राप्त अङ्क उसी रूप में होते हैं जिसमें उन्हें पाया जाता है, व्यवस्थित प्रदत्तों में अङ्कों को एक खास प्रकार से रखा गया होता है।

### अव्यवस्थित प्रदत्तों में मध्यमान निकालना

उदाहरण—दस लड़कों के एक समूह को स्पैलिंग टेस्ट दिया गया। उनके अङ्क इस प्रकार हैं—

| छात्र | क | ख | ग | घ | ङ | च | छ | ज | झ | ञ |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| प्राप्ताङ्क | ४ | २ | ३ | ५ | ६ | ७ | ८ | १ | ३ | १ |

११

# क्रियात्मक-अनुसन्धान में सांख्यिकी-विधियों का प्रयोग

*"One of the best ways of discouraging classroom teachers or other practical school people from experimenting is to emphasize statistics as such. This is quite different from emphasizing the value of getting maximum meaning from quantitative data. It is almost impossible to do the latter without learning some statistical concepts and operations. When a teacher-or anyone else, for that matter-needs precise, quantitative measures of central tendency o variability or the relationship among variables in order understand something he wants very much to understa*

तत्पश्चात् उस अङ्क को मध्यांक मान कहा जायेगा जिसके ऊपर तथा नीचे बराबर-बराबर प्राप्तांक हैं। इसमें ८ वह प्राप्तांक हैं जिसके ऊपर तथा नीचे (तीन-तीन) बराबर प्राप्तांक हैं। अतः ८ को मध्यांक मान कहा जायेगा।

एक दूसरी परीक्षा में आठ छात्रों के प्राप्तांक इस प्रकार हैं—

उदाहरण (२) १६, १०, ११, १५, ९, १८, १३, १२

इन प्राप्तांकों का मध्यांक मान ज्ञात करने के लिए सर्वप्रथम इन्हें आकार के अनुसार व्यवस्थित करना होगा। यथा—

१६, १८, १५, <u>१३, १२</u>, ११, १०, ९

इसमें मध्यांक मान ज्ञात करने के लिए रेखाङ्कित प्राप्तांको (१३ तथा १२) का औसत $\left(\text{अर्थात्}\ \frac{१३+१२}{२}\right)$ निकालना होगा। जो १२·५ है। अतः इन प्राप्ताङ्कों का मध्यांक मान १२·५ हुआ।

जब समूह की संख्या (N) विषम (Odd) हो, जैसे उदाहरण (१) तो मध्यांक मान निकालने के लिए सबसे सरल तरीका है, सभी प्राप्तांकों को आकार के अनुसार रखकर नीचे तथा ऊपर दोनों ओर से $\frac{N+१}{२}$ वाँ प्राप्तांक ज्ञात करना। उक्त उदाहरण मे $\frac{७+१}{२}$ वाँ प्राप्तांक (जो ८ है) ही मध्यांक मान है। ऊपर तथा नीचे दोनों ओर के प्राप्तांकों से यह चौथा अर्थात् $\frac{७+१}{२}$ वाँ प्राप्तांक है।

जब समूह की संख्या (N) सम (Even) हो जैसे उदाहरण (२) तो मध्यांक मान निकालने के लिए सबसे सरल तरीका है, सभी प्राप्तांकों को आकार के अनुसार रखकर नीचे तथा ऊपर दोनों ओर से $\frac{N}{२}$ वाँ प्राप्तांक ज्ञात करना। तदुपरान्त उन प्राप्तांको का औसत मालूम करना। जैसे उक्त उदाहरण में $\frac{N}{२}$ वाँ प्राप्तांक हैं १३ तथा १२। इनका औसत $\frac{१३+१२}{२} = १२·५$ होगा। इस उदाहरण में प्राप्तांक १२·५ मध्यांकमान हुआ।

(३) बहुलाङ्क मान (Mode)—प्राप्तांक-समूहों में वह प्राप्तांक बहुलाङ्क मान कहलाता है जिसकी आवृत्ति सबसे अधिक होती है।

(Mode is the most frequently occurring value)

निम्नांकित प्राप्तांक समूह से (जो १० छात्रों के किसी परीक्षा सम्बन्धी प्राप्तांक हैं) बहुलांक मान निकालना है।

उदाहरण (१) ५, ६, ३, ५, ८, ७, ५, ८, ६, ५

यहाँ प्राप्तांक ५ की आवृत्ति सबसे अधिक (४ बार) है अतः इस प्राप्तांक-समूह के लिए बहुलांक मान ५ कहलायेगा।

जहाँ सभी प्राप्तांकों की आवृत्ति समान होती है, बहुलांक मान नहीं निकाला जा सकता। यथा:

उदाहरण (२) २, २, ३, ३, ८, ७, ८, ७, १, ५, ६, ५, १, ६

उदाहरण (३) २, २, २, ३, ३, ३, ४, ४, ४, ५, ५, ५, ७, ७, ७

उदाहरण (४) ५, ६, ८, ९, ७, १०, ११, १२, १६, ३, २, ४, १

उदाहरण (२), (३) तथा (४) में सभी प्राप्तांकों की आवृत्ति समान है अतः बहुलांक मान नहीं ज्ञात किया जा सकता।

जब प्राप्तांक समूह में पास-पास के दो प्राप्तांकों की आवृत्तियाँ अन्य प्राप्तांकों की तुलना में सर्वाधिक हों किन्तु परस्पर समान हों तो बहुलांक मान ज्ञात करने के लिए उन दोनों प्राप्तांकों का औसत मालूम कर लिया जाता है। यथा : १९ छात्रों के प्राप्तांक इस प्रकार हैं :—

५, ५, ६, ६, ६, <u>७, ७, ७, ७</u>, <u>८, ८, ८, ८</u>, ९, ९, १०, १०, ११, १२

*यहाँ ७ तथा ८ दोनों पास-पास के प्राप्तांकों की आवृत्तियाँ अन्य प्राप्तांकों* की तुलना में सर्वाधिक हैं (दोनों चार-चार बार आये हैं) किन्तु परस्पर समान हैं। अतः बहुलांकन मान निकालने के लिए इनका औसत (अर्थात् $\frac{७+८}{२}$) मालूम कर लिया जायेगा जो ७·५ है। इस प्राप्तांक-समूह के लिए बहुलांकन मान ७·५ होगा।

जब प्राप्तांक समूह में किन्हीं प्राप्तांकों की आवृत्तियाँ अन्य प्राप्तांकों की तुलना में सर्वाधिक तथा परस्पर समान हों किन्तु वे पास-पास न हों तो उन्हें पृथक्-पृथक् दो बहुलांक मान घोषित किया जायेगा। यथा : २४ छात्रों के अंक इस प्रकार हैं :—

५, ५, ६, ६, ६, ७, ७, ७, ७, ७, ८, ८, ८, ९, ९, ९, ९, ९, १०, १०, १०, ११, ११, १८

यहाँ प्राप्तांक ७ की आवृत्ति ५ बार है जो अपने पास के प्राप्तांकों की आवृत्ति से अधिक है। इसी तरह प्राप्तांक ६ की आवृत्ति भी ५ बार है जो अपने पास के प्राप्तांकों की आवृत्ति से अधिक है। अतः इस प्राप्तांक-समूह में दो बहुलांक मान होंगे ७ तथा ६। इस प्राप्तांक-समूह को द्वि-बहुलांकी (Bi-modal) कहा जायेगा।

## मध्य मान, मध्यांक मान तथा बहुलांक मान में परस्पर तुलना

इन तीनों तरह के केन्द्रवर्ती-मानों में 'मध्य मान' सबसे अधिक विश्वसनीय तथा उपयोगी है। अनुसन्धान के अन्तर्गत इसका प्रयोग प्रचुरता के साथ किया जाता है। बहुलांक मान सबसे अधिक अविश्वसनीय है। इसका प्रयोग शीघ्रता की दृष्टि से किया जाता है क्योंकि बहुलांक मान ज्ञात करना सबसे सरल है।

जहाँ प्राप्तांक-समूह में प्राप्तांकों का वितरण सामान्य (Normal distri bution) होता है, वहाँ मध्य मान ज्ञात करना उपयुक्त है। किन्तु प्राप्तांक समूह में प्राप्तांकों का वितरण सामान्य न होने पर मध्यांक मान मालूम करना उपयुक्त है। यथा : सात छात्रों के अंग्रेजी मे प्राप्तांक इस प्रकार हैं .

२, ३, ४, ६, ७, ८, ६८

इस प्राप्तांक-समूह में प्राप्तांक ६८, अन्य प्राप्तांकों की तुलना में सामान्य नहीं है। इसके कारण 'मध्य मान' प्रभावित होगा किन्तु मध्यांक मान पर इससे कोई असर नहीं पड़ता। इस प्राप्तांक समूह मे मध्य मान $\left(\frac{\Sigma X}{N}\right)$ होगा

$\frac{२+३+४+६+७+८+६८}{७} = \frac{६८}{७} = १४$ जबकि मध्यांक मान होगा '६'

इस उदाहरण मे मध्य मान जो कि १४ है प्राप्तांक समूह के ७ अङ्कों में से प्राय: किसी का प्रतिनिधित्व ठीक से नहीं करता। इसे केन्द्रवर्ती मान कहना उचित न होगा। यहाँ पर मध्यांक मान ही सबसे अधिक उपयुक्त है।

इस उदाहरण से एक और बात स्पष्ट हो जाती है। मध्य मान अत्यन्त संवेदनशील (Sensitive) होता है किन्तु मध्यांक मान पर असामान्य अंकों का असर बहुत कम पड़ता है। उक्त उदाहरण में यदि प्राप्तांक ६८ (जो कि छोर पर है) को बदल कर ६० कर दिया जाय तो भी मध्यांक मान ६ ही रहेगा किन्तु मध्य मान १४ से १३·१४ हो जायेगा। कहने का तात्पर्य यह है कि छोर के अङ्कों में परिवर्तन लाने पर मध्य मान भी परिवर्तित हो जाता है किन्तु मध्यांक मान पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

## (ख) विचलन मान (Measures of Variability)

सांख्यिकी-विधियों में विचलन मानों का स्थान महत्वपूर्ण है। इनके द्वारा किसी समूह की भिन्नता का पता लगाया जाता है। विचलन मान मापन द्वारा प्राप्त अंको की विचलनशीलता अथवा भिन्नता को प्रगट करते हैं। इन्हें अंग्रेजी मे Measures of dispersion or spread or deviation or Measures of scatter के नाम से भी पुकारा जाता है। क्रियात्मक-अनुसन्धान की दृष्टि से जिन विचलन-मानो का प्रयोग किया जा सकता है वे इस प्रकार हैं—

(१) विस्तार (Range)

(२) मध्य मान विचलन (Mean Deviation)

(३) *प्रामाणिक विचलन (Standard Deviation)*

इन विचलन मानो के बारे में स्पष्टीकरण देने के पूर्व हम यह स्पष्ट करेंगे कि इनकी आवश्यकता व्यावहारिक दृष्टि से क्या है?

उदाहरण—एक अध्यापक अपने कक्षा के छात्रों को दो वर्गों में बाँटकर पढ़ाना चाहता है। वह इन दोनों वर्गों के छात्रों पर (जिनकी संख्या ५,५ है) एक परीक्षा देता है ताकि उन्हें समान घोषित किया जा सके। परीक्षा के बाद छात्रों के प्राप्तांक इस प्रकार हैं—

समूह (अ) ७, ८, १०, १२, १३

समूह (ब) ०, १, १०, १५, २४

इन दोनों समूहों के प्राप्तांकों का मध्य मान एक ही है। दोनो में मध्य मान १० है। यदि अध्यापक दोनो समूहों को मध्य मान के आधार पर समान घोषित कर दे तो यह दोष-पूर्ण होगा क्योंकि दोनों समूहों में प्राप्तांकों के वितरण को देखने पर यह ज्ञात होता है कि समूह (ब) मे समूह (अ) की तुलना मे अधिक भिन्नता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि किन्हीं दो समूहों की तुलना केवल मध्य मान के द्वारा *नहीं करनी चाहिए। विचलन मानों के बिना दो समूहों की तुलना गलत* हो सकती है। विचलन मानों के द्वारा समूह की भिन्नता का अनुमान लगता है और इसकी सहायता से समूह को सजातीय (Homogenous) अथवा विजातीय *(Heterogenous)* कहा जा सकता है। प्रस्तुत उदाहरण में 'समूह 'ब' को समूह 'अ' की तुलना मे विजातीय कहा जाएगा। समूह 'ब' में शून्य (०) से लेकर २४ प्राप्तांक तक के छात्र हैं जबकि समूह 'अ' में ७ से लेकर १३ तक। समूह 'ब' के अङ्कों का विस्तार (Range) समूह 'अ' के अङ्कों के विस्तार की तुलना में बड़ा है।

कहने का तात्पर्य यह है कि विचलन-मानों के बिना किसी समूह की तुलना [illegible] सकती। इनके द्वारा समूहों के बारे में तुलना की दृष्टि से महत्वपूर्ण है

जानकारी प्राप्त होती है। केवल केन्द्रवर्ती मान जानने से समूह की रचना (Composition) का पता नहीं लग पाता। समूह किस प्रकार के व्यक्तियों से मिलकर बना है—इसका सही अनुमान विचलन मानों के द्वारा लगाया जा सकता है।

(१) विस्तार (Range)—यह सबसे सरल विचलन मान है। विस्तार निकालने के लिए समूह के सर्वाधिक तथा न्यूनतम अङ्कों का अन्तर मालूम कर लिया जाता है। (Range is the difference between the largest and smallest scores of a group)।

समूह (अ) में सर्वाधिक अङ्क १३ है तथा न्यूनतम अङ्क ७ है। अतः विस्तार=१३−७=६ हुआ।

समूह (ब) में सर्वाधिक अङ्क २४ है तथा न्यूनतम अङ्क ० (शून्य) है। अतः विस्तार=२४−०=२४ हुआ।

विस्तार ज्ञात करने के लिए यह सूत्र याद रखना चाहिए।

विस्तार=सर्वाधिक अङ्क−न्यूनतम अङ्क

विस्तार का प्रयोग तभी करना चाहिए जब कि समूह की संख्या (N) १० से कम हो क्योंकि समूह का आकार जैसे-जैसे बढ़ेगा ऐसे अङ्कों की सम्भावना बढ़ जाती है जिनके द्वारा विस्तार-क्षेत्र में घटाव या वृद्धि निश्चित रूप से नहीं बताई जा सकती। विस्तार का प्रयोग करने में सबसे बड़ी सीमा यह होती है कि इसके द्वारा समूह के दो छोरों को ही बताया जाता है न कि समूह के अन्तर्गत विद्यमान भिन्नता को। नीचे के उदाहरण विस्तार की इस सीमा को स्पष्ट करते हैं—

समूह (क)—प्राप्तांक ०, १, ३, २, ५, ६, ४, ८, ७, ८०।

समूह (ख)—प्राप्तांक ०, ८, २०, २७, ४५, ५०, ६०, ६५, ७५, ८०।

समूह (क) के प्राप्तांकों का विस्तार है=८०−०=८०

समूह (ख) के प्राप्तांकों का विस्तार है=८०−०=८०

दोनों समूहों का विस्तार-क्षेत्र समान है किन्तु प्राप्तांकों के वितरण को ध्यानपूर्वक देखने पर यह पता चलेगा कि समूह (क) के प्राप्तांकों में एक को छोड़कर (८० को) शेष सभी प्राप्तांक शून्य से ८ के बीच हैं जो समूह की सजातीयता (Homogeneity) को सूचित करता है। इसके विपरीत समूह (ख) के प्राप्तांकों में परस्पर पर्याप्त भिन्नता है। यदि हम 'विस्तार' द्वारा ही विचलन मान प्रकट करें तो दोषपूर्ण निष्कर्ष प्राप्त होंगे। इससे यह ज्ञात होता है कि

'विस्तार' (Range) का प्रयोग विश्वसनीय नहीं है। केवल शीघ्रता की दृष्टि से इसका प्रयोग किया जाना तर्क संगत है।

(२) मध्य मान-विचलन (Mean Deviation)—विस्तार-क्षेत्र को स्पष्ट करने के लिए दिए गये उदाहरणों से यह ज्ञात हो जाता है कि इसमें विचलन का आन्तरिक रूप न मालूम होकर दो छोरों पर अवस्थित प्राप्तांकों का अन्तर मात्र मालूम होता है। 'मध्य मान-विचलन' से किसी समूह के अन्तर्गत मध्य मान के दोनों ओर (अर्थात् मध्य मान से बड़े तथा छोटे अङ्क) विचलन की मात्रा ज्ञात होती है।

नीचे के उदाहरण देखिये —

प्राप्ताङ्क

| | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| समूह (क) | ५, | ५ | ५, | ५, | ५, | ५, | ५ |
| समूह (ख) | ५, | ६, | ७, | ४, | ३, | ८, | २ |
| समूह (ग) | ०, | १, | ३, | ५, | १०, | २, | १४ |

यदि इन समूहों के प्राप्ताङ्कों पर दृष्टि डाली जाय तो यह विदित होगा कि समूह (क) के प्राप्ताङ्क समूह (ख) के प्राप्ताङ्कों की तुलना में कम विचलन-शील हैं तथा समूह (ख) के प्राप्ताङ्क समूह (ग) के प्राप्ताङ्कों की तुलना में कम विचलनशील हैं। वस्तुतः समूह (क) के प्राप्ताङ्कों में कोई विचलनशीलता नहीं है। सभी प्राप्ताङ्क समान ही हैं (सभी प्राप्ताङ्क पाँच पाँच हैं)।

इन तीनों समूहों का मध्य मान पृथक्-पृथक् निकालने पर यह मालूम होता कि :—

समूह (क) का मध्य मान ५ है।
समूह (ख) का मध्य मान ५ है।
समूह (ग) का मध्य मान ५ है।

तीनों समूहों का मध्य मान समान है किन्तु इन समूहों में विचलनशीलता अलग-अलग है। प्रस्तुत उदाहरण में प्रत्येक समूह के प्राप्ताङ्कों का विचलन (Deviation) उनके मध्य मान से ज्ञात किया जा सकता है जो इस प्रकार है—

## मध्य मान से विचलन

*(Deviations from the Mean)*

समूह (क) ५ − ५ ५ − ५ ५ − ५ ५ − ५ ५ − ५ ५ − ५ ५ − ५
=० =० =० =० =० =० =०

समूह (ख) ५–५ ६–५ ७–५ ४–५ ३–५ ८–५ २–५
=० =१ =२ =–१ =–२ =३ =–३

समूह (ग) ०–५ १–५ ३–५ ५–५ १०–५ २–५ १४–५
=–५ =–४ =–२ =० =५ =–३ =६

प्रत्येक समूह के प्राप्ताङ्कों का उनके मध्य मानो से जो इस प्रकार विचलन मालूम हुआ, उसे स्पष्टता की दृष्टि से अलग दिया जा रहा है :—

## मध्य मान से प्राप्त विचलन

| | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| समूह (क) | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| समूह (ख) | ० | १ | २ | –१ | –२ | ३ | –३ |
| समूह (ग) | –५ | –४ | –२ | ० | ५ | –३ | ६ |

इसे ध्यानपूर्वक देखने पर यह ज्ञात होगा कि जैसे-जैसे विचलन बढ़ रहा है वैसे-वैसे मध्य मान से प्राप्ताङ्कों की दूरी बढ़ रही है। समूह (क) में विचलन की मात्रा* शून्य (०) है। समूह (ख) मे विचलन की मात्रा*१२ है तथा समूह (ग) में विचलन की मात्रा* २- है।

मध्य मान से इस प्रकार जो विचलन ज्ञात किये गये है इनका प्रयोग 'विचलनमान' निकालने के लिए किया जा सकता है। 'मध्य मान-विचलन' में इस प्रकार प्राप्त कुल विचलन (Absolute deviation) का औसत निकाला जाता है। इसके लिए निम्नाङ्कित सूत्र का प्रयोग किया जा सकता है :—

मध्य मान-विचलन (Mean-Deviation) $= \frac{\Sigma|X-M}{N}$

जिसमे X=प्राप्तांक
M=मध्य मान
Σ=योग
N=संख्या (समूहो के प्राप्तांको की)
ΣX—M|=प्राप्ताङ्कों से जो मध्य मान के विचलन हैं उनका धन-ऋण के चिन्हों को बिना ध्यान दिये कुल योग।

* यहाँ मात्रा से तात्पर्य है कुल विचलन (Absolute deviation) को धन तथा ऋण चिन्हों को बिना ध्यान में रखे सम्पूर्ण रूप में मालूम किया जाता है।

समूह (क) के लिए मध्य मान-विचलन शून्य होगा क्योंकि इस सूत्र में उपयुक्त मान रखने पर—

$$\frac{\text{म० वि०}}{\text{(मध्य मान विचलन)}} = \frac{०}{७} = ० \text{ (शून्य) होगा ।}$$

समूह (ख) के लिए इस सूत्र का प्रयोग करने पर :—

$$\frac{\text{म० वि०}}{\text{(मध्य मान विचलन)}} = \frac{१२}{७} = १\text{'}७१ \text{ ( निकट तक )}$$

अर्थात् मध्य मान विचलन १'७१ होगा ।

समूह (ग) के लिए इस सूत्र का प्रयोग करने पर :—

$$\frac{\text{म० वि०}}{\text{(मध्य मान विचलन)}} = \frac{२८}{७} = ४$$

अर्थात् मध्य मान विचलन ४ होगा ।

तीनों समूहों का इस प्रकार प्राप्त मध्य मान विचलन सुविधा के लिए नीचे दिया जा रहा है :—

| समूह का नाम | प्राप्ताङ्कों का मध्य मान से कुल विचलन | मध्य मान विचलन |
|---|---|---|
| समूह (क) | ० | ० |
| समूह (ख) | १२ | १'७१ |
| समूह (ग) | २८ | ४ |

इससे यह स्पष्ट है कि मध्य मान-विचलन किसी समूह के प्राप्तांकों का मध्य मान से विचलन प्रदर्शित करता है । इसमें समूह के अन्तर्गत जो विचलन या भिन्नता होती है उसका सन्दर्भ-विन्दु ( Reference point ) मध्य मान होता है ।

इसकी सबसे बड़ी सीमा यह है कि इसके द्वारा मध्य मान के दोनों तरफ के विचलन का योग धन-ऋण के चिन्हों को बिना ध्यान रखे हुए किया जाता है जो स्वाभाविक नहीं है । अनुसन्धान-कार्य के लिए मध्य मान-विचलन का प्रयोग अधिक प्रचलन में नहीं है ।

*प्रामाणिक विचलन (Standard Deviation)*—विस्तार-क्षेत्र तथा मध्य मान विचलन की अपेक्षा प्रामाणिक विचलन अनुसन्धान के लिए अधिक प्रयुक्त होता है । इसमें भी मध्य मान से विचलन निकाला जाता है किन्तु इसके अन्तर्गत

नन (जो कि पहले ज्ञात किया जा चुका है) ज्ञात किया गया है ) दोनो की तुलना प्रदर्शित किया गया है—

| चलन | प्रामाणिक विचलन |
|---|---|
| | २ |
| | ४·७८ |

सी समूह के प्रामाणिक विचलन का अपेक्षाकृत बडा होता है।

## क विचलन में अन्तर तथा समानता

प्तांको का मध्य मान से विचलन ज्ञात कर बकि प्रामाणिक विचलन मे प्राप्ताङ्को का के वर्गों का औसत मालूम किया जाता है ल (Square root) ले लिया जाता है।

विचलन (Absolute deviation) ज्ञात चलन मे विचलन का वर्ग (Square of । विचलनो (Deviations) मे धन-ऋण र करने के लिए ऐसा किया जाता है।

के लिए संदर्भ बिन्दु (Reference point)

ा औसत ज्ञात करना पड़ता है।

s of Correlation)

परीक्षाओं द्वारा प्राप्त अङ्कों के आधार
की निष्पत्ति (Achievement) में परस
है। आठ लड़कों के एक समूह का हि
नीचे दिये गये हैं और उनमें सह-सम्बन
difference method) द्वारा निकाला

| छात्र | हिन्दी की वर्तनी के प्राप्तांक | संस्कृत के प्राप्तांक | वर्तनी के प्राप्तांकों की अनु-स्थिति (Rank) | संस्कृत के प्राप्तांकों की अनुस्थि (Ra |
|---|---|---|---|---|
| A | ३० | ५५ | ४ | |
| B | ४० | ७५ | ३ | |
| C | ५० | ६० | १ | |
| D | २० | १२ | ६ | |
| E | १० | ११ | ८ | |
| F | ४५ | ३८ | २ | |
| G | २२ | २५ | ५ | |
| H | १८ | १५ | ७ | |

अनुस्थिति अन्तर* द्वारा सह-सम्बन्ध
प्रयोग में लाया जाता है :—

अनुस्थिति-अन्तर सह-सम्बन्ध गुणक = १
(Por Rho)

उक्त उदाहरण के लिए इस सूत्र का

$$= १ - \frac{६ \times १२}{८ (६४-१)}$$

$$= १ - \frac{७२}{८ (६३)}$$

$$= १ - \frac{७२}{५०४}$$

$$= १ - .१४$$

$$= .८६$$

अर्थात् हिन्दी की वर्तनी तथा संस्कृत मे घनात्मक सह-सम्बन्ध है। यह सह-सम्बन्ध ·८६ है जो महत्वपूर्ण प्रतीत होता है। इसके आधार पर हम यह कह सकते हैं कि जो छात्र हिन्दी की वर्तनी मे अच्छा है वह संस्कृत में भी अच्छा है। जो हिन्दी की वर्तनी में कमजोर है वह संस्कृत मे भी कमजोर है।

स्पष्टीकरण

(१) सर्व प्रथम प्रत्येक छात्र की अनुस्थिति (Rank) निकाली जाती है। इसके लिए सरल तरीका यह है कि जिस छात्र का उच्चतम अंक हो उसे १, उससे कम वाले को २ तथा इसी क्रम से बाद की अनुस्थितियाँ दी जाती हैं।

(२) प्राप्तांको के दोनों जोड़ों (Both sets of scores) की अनुस्थिति ज्ञात कर चुकने पर उनका अन्तर (Difference = D) मालूम किया जाता है।

(३) इसके पश्चात् प्रत्येक अन्तर का वर्ग ($D^2$) निकाला जाता है।

(४) अन्त मे, अन्तरों के वर्गों का योग ($\Sigma D^2$) ज्ञात कर अधोलिखित सूत्र का प्रयोग किया जाता है :—

$$Rho = १ - \frac{६ \Sigma D^2}{N(N^2 - १)}$$

जिसमें,

Rho = अनुस्थिति अन्तर द्वारा प्राप्त सह-सम्बन्ध।

$\Sigma D^2$ = अनुस्थितियों के अन्तरों के वर्गों का योग।

N = छात्रों की कुल संख्या।

(५) सह-सम्बन्ध हमेशा '१' से कम होता है।

सह-सम्बन्ध का महत्व—इस विधि द्वारा किन्हीं दो चल राशि (Variables) (जैसे—अंग्रेजी तथा हिन्दी के प्राप्तांक, बुद्धि तथा गणित प्राप्तांक, ऊँचाई तथा वजन आदि ) में परस्पर सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जा सकता है। इसके प्रयोग से शिक्षण तथा परीक्षण सम्बन्धी कतिपय समस्याओं में सह-सम्बन्ध मालूम किया जा सकता है।

सह-सम्बन्ध की व्याख्या—सह-सम्बन्ध पूर्ण धनात्मक एवं पूर्ण ऋणात्मक (Perfect positive and perfect negative) दोनों के बीच होता है। पूर्ण धनात्मक (Perfect positive) सह-सम्बन्ध के लिए '१' तथा पूर्ण ऋणात्मक (Perfect negative) सह-सम्बन्ध के लिए '−१' का प्रयोग किया जाता है। किन्तु पूर्ण धनात्मक अथवा पूर्ण ऋणात्मक सह-सम्बन्ध व्यावहारिक परिस्थितियों में नहीं मिल पाता।

सह-सम्बन्ध की व्याख्या करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि इसके आधार पर कार्य-कारण (Cause and effect) सम्बन्ध की स्थापना नहीं होती है। इसके द्वारा सूचित किया जाने वाला सम्बन्ध सदा सम्भावित (Probable) होता है। इसकी विश्वसनीयता समूह की संख्या (N) पर भी निर्भर होती है। बड़े समूहों से प्राप्त सह-सम्बन्ध छोटे समूहों से प्राप्त सह-सम्बन्धों की तुलना में अधिक विश्वसनीय होता है।

सह-सम्बन्धों के विभिन्न स्तर भिन्न-भिन्न प्रकार के सम्बन्ध प्रकट करते हैं। सुविधा के लिए नीचे की तालिका को देख सकते हैं।

## सह-सम्बन्धों की सम्भावित व्याख्या के लिए तालिका

| सह-सम्बन्ध गुणक | सम्भावित व्याख्या |
|---|---|
| ·९० से १·०० तक | पर्याप्त उच्च कोटि का सम्बन्ध (Very high correlation-very dependable relationship.) |
| ·७० से ·९० तक | उच्च कोटि का सम्बन्ध (High correlation-marked relationship.) |
| ·४० से ·७० तक | पर्याप्त—अच्छा खासा सम्बन्ध (Moderate correlation-substantial relationship.) |
| ·२० से ·४० तक | निश्चित सम्बन्ध किन्तु अल्प (Low correlation-definite but small relationship.) |
| २० तथा इससे नीचे | मामूली सम्बन्ध (Slight almost negligible relationship.) |

## सारांश

क्रियात्मक-अनुसन्धान में सांख्यिकी-विधियो का प्रयोग सीमित रूप में ही किया जाना उपयुक्त है। अनुसन्धानकर्ता को इस सम्बन्ध मे विशेषज्ञो की राय ले लेनी चाहिए। इस अध्याय में सांख्यिकी की सरलतम विधियो का ही विवरण दिया गया है। इनको समझने के लिए गणित के ज्ञान की विशेष आवश्यकता नहीं है। गणित का साधारण ज्ञान रखने वाला अनुसन्धानकर्ता भी इन्हें समझकर प्रयोग में ला सकता है।

# १२

# उपसंहार

शिक्षा में क्रियात्मक-अनुसन्धान विद्यालयों की कार्य-पद्धति में सुधार एवं विकास लाने के लिए एक नवीन सूझ है। विद्यालय की अनेकानेक समस्याओं का समाधान इसके अवलम्बन से सम्भव है। भारतीय विद्यालयों की परिस्थितियों में अपेक्षित सुधार का मार्ग प्रशस्त करने के निमित्त क्रियात्मक-अनुसन्धान अत्यन्त मितव्ययी सिद्ध होगा। विद्यालय के सहस्त्रों अध्यापकों तथा प्रधानाचार्यों को इस दिशा में प्रयासशील बनाना होगा। शिक्षा में अनुसन्धान की प्रक्रिया को गति देने के लिए तथा विद्यालयों द्वारा प्रजातन्त्रात्मक मूल्यों के विकास को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए 'क्रियात्मक-अनुसन्धान' के आन्दोलन को बढ़ावा देना नितान्त आवश्यक है।

क्रियात्मक-अनुसन्धान का सूत्रपात लगभग दो दशक पूर्व हुआ है। इसके प्रचार एवं प्रसार का श्रेय अमेरिका के स्टीफेन एम० कोरी को है। परम्परागत अनुसन्धानों ने विद्यालयों से अलग हटकर शिक्षा सम्बन्धी नवीन सिद्धान्तों एवं तथ्यों का निरूपण किया। इस प्रकार की खोजें शिक्षा-प्रणाली में सुधार लाने के लिए असमर्थ थीं। परिणामस्वरूप क्रियात्मक-अनुसन्धान एक प्रतिक्रिया के रूप में उत्पन्न हुआ। इधर शिक्षा जगत में मौलिक-अनुसन्धानों की संख्या इतनी बढ़ती गई कि उन्हें व्यवहार रूप देना असम्भव बन गया। क्रियात्मक-अनुसन्धान द्वारा विद्यालय के अभ्यासकर्त्ताओं (यथा : अध्यापक, प्रधानाचार्य, प्रबन्धक तथा निरीक्षक) को स्वयं अपनी दैनिक समस्याओं का हल निकालने के लिए प्रेरणा दी जाने लगी। इस प्रकार शिक्षा में सुधार तथा विकास लाने

१०

के प्रति क्रियात्मक-अनुसन्धान एक जागरूक पद्धति सिद्ध हुई। हमारे दे
शिक्षा विषयक मौलिक-अनुसन्धान अभी अधिक नहीं हुए हैं तथापि क्रियात्
अनुसन्धान भारतीय विद्यालयों को एक निश्चित मोड़ देने के लिए स
उपयुक्त है।

वस्तुतः क्रियात्मक-अनुसन्धान के अन्तर्गत विद्यालय की समस्याओं
वैज्ञानिक एवं वस्तुनिष्ठ दृष्टि से विश्लेषण तथा समाधान अभीष्ट होता
क्रियात्मक-अनुसन्धान का प्रारम्भ विद्यालय के भीतर विद्यमान कठिना
अथवा बाधाओं के प्रत्यक्षीकरण से होता है। जब तक समस्या विशेष
स्वरूप भली प्रकार विश्लेषित नहीं हो जाता, अनुसन्धान प्रक्रिया में अपे
गति नही आ पाती। यह क्रियात्मक-अनुसन्धान का प्रथम सोपान है। सम
के स्वरूप को पहिचान लेने के बाद उसे एक निश्चित दायरे में घेरना पड़ता
जिसे अनुसन्धान की भाषा मे समस्या का परिभाषीकरण एवं सीमांकन (De
nition and Delimitation of the problem) के नाम से पुकारा जा
है। इसके पश्चात् समस्या के कारणभूत तत्वों का पता लगाया जाता है जिस
समस्या के समाधान की ओर अग्रसर होने में कुछ रोशनी मिले। इससे क्रि
त्मक-उपकल्पनाओं (Action-hypotheses) का निर्माण करना सरल हो जा
है। क्रियात्मक-उपकल्पनाएँ समस्या के सम्भव-समाधानों (*Potential-sol
tions*) को प्रगट करती हैं। क्रियात्मक-अनुसन्धान में ऐसी उपकल्पनाओं
विशेष महत्त्व होता है। प्रत्येक क्रियात्मक-उपकल्पना के दो पक्ष होते हैं
क्रिया-पक्ष (Action-aspect) तथा लक्ष्य-पक्ष (Goal-aspect)। क्रिया-प
में समाधान की विधि बताई जाती है और लक्ष्य-पक्ष में उसके परिणाम इंगि
किये जाते हैं। अनुसन्धानकर्ता को क्रियात्मक-उपकल्पनाओं का निर्माण कर
समय विद्यालय की व्यावहारिक परिस्थितियों को कभी नहीं भूलना चाहिए
क्रियात्मक-उपकल्पना का चुनाव अत्यन्त सावधानीपूर्वक करना चाहिए।

ात्मक-उपकल्पना की निर्मिति हो जाने पर उसे कार्यान्वित करने
रूपरेखा (Design or Plan of action) प्रस्तुत की जाती है जिसमे
क्रियाओं की विस्तृत सूची तथा क्रियाओं के सम्पादनार्थ विधियों ए
ाधन व समय का ब्योरा दिया जाता है। इससे सम्पूर्ण प्रक्रिया वस्तु
जाती है। इस प्रकार की रूप रेखाएँ [illegible] समय अनुभवी
तथा कतिपय अनुसन्ध[illegible] चाहिए।
द्वारा क्रियात्मक-उप[illegible] की जाँच
है। किसी रूपरेखा [illegible] की

चाहिए कि उपर्युक्त मूल्यांकन-विधि का प्रयोग करके उसके परिणाम के सम्बन्ध में घोषणा करे। अनुसन्धानकर्ता अपनी कार्य-पद्धतियों में सुधार लाने का निर्णय इसके आधार पर कर सकता है। यह क्रियात्मक-अनुसन्धान का अन्तिम सोपान है। किन्तु कहना न होगा कि क्रियात्मक-अनुसन्धान की प्रक्रिया कभी समाप्त नहीं होती। यह तो निरन्तर चलती रहती है। एक कार्य-पद्धति का मूल्यांकन हो जाने पर दूसरी कार्य-पद्धति आ टपकती है और इस प्रकार क्रियात्मक-अनुसन्धान एक अटूट क्रम से आगे बढ़ता रहता है। विद्यालय की कार्य-प्रणालियों एवं अध्यापकों अथवा प्रधानाचार्यों के अपने कार्य-सम्बन्धी निर्णयों में सतत विकासशील बने रहने की क्षमता क्रियात्मक-अनुसन्धान के माध्यम से उत्पन्न की जा सकती है।

क्रियात्मक-अनुसन्धान में सांख्यिकी का प्रयोग कतिपय स्थलों पर ही किया जाता है। इसके द्वारा अनुसन्धान सम्बन्धी परिणामों का वस्तुनिष्ठ वर्णन दिया जा सकता है। किन्तु अध्यापकों को चाहिए कि अपने अनुसन्धान के अन्तर्गत सांख्यिकी का प्रयोग करते समय कुछ विशेषज्ञों की राय ले लें।

# परिशिष्ट

## सहायक पुस्तकों की सूची


| लेखक | पुस्तक | प्रकाशक |
|---|---|---|
| 1. Ackoff, Russell L. | The Design of Social Research (1953) | The University of Chicago Press. |
| 2. Best, John W. | Research in Education (1959) | Prentice-Hall Inc. Englewood Cliffs, N. I. |
| 3. Corey. Stephen M. | Action Research to Improve School Practices (1953) | Bureau of Publications : Teachers College,Columbia University, New York. |
| 4. Good, C. V., Barr, A. S. & Scates D. E. | Methodology of Educational Research (1936) | Appleton Century Co., Inc, New York. |
| 5. Good, Carter V. Scates, D. E. | Methods of Research (1954) | Appleton Century Crofts, N.Y. |
| 6. Hockett, H. C. | Introduction to Research In American History | Mac Millan Co., |
| 7. Mc Ashan, Hildreth Hoke | Elements of Educational Research | McGraw Hill Book Co. Inc., New York, |
| 8. Whitney, F. L. | Elements of Research. | |

# RESEARCH BIBLIOGRAPHY

1. Abelson, Harold Herbert, *The Art of Educational Research*, World Book Company, New York. 1933.
2. Alexander, Carter, *Educational Research*, New York: Teachers College, Columbia University.
3. Alexander, Carter and Burks, A. J. *How to Locate Educational Information and Data*, Teachers College, Columbia, New York, 1964.
4. Almack, John C., *Research and Thesis Writing*, Houghton Mifflin Company, New York, 1930.
5. Bain, Alexander, *Logic: Deductive and Inductive*, D. Appleton and Co.
6. Baker, John Randal, *Science and the Planned State*, The Macmillan Co., New York, 1945.
7. Barr, A. S., Good, C. V. and Scates, D. E. *The Methodology of Educational Research*, Appleton Century Co., Inc., New York, 1936.
8. Barr, A. D., Davis, R. and Johnson, Palmer O. *Educational Research and Appraisal*, J. B. Lippincott Company, 333, West Lake Street, Chicago 6, Illinois.
9. Bernard, Luther Lee, *The Fields and Methods of Sociology*, R. Long and R. R. Smith, Inc., 1934.
10. Bixler, Harold H., *Check List for Educational Research*, Teachers College, Columbia University, New York, 1928.
11. Brown, Clara Maude, *Evaluation and Investigation in Home Economics*, F.S. Crofts and Company, N. Y., 1941.

12. Buros, Oscar K., *Research and Statistical Methodology*, Rutgers University Press, New Brunswick, N. J., 1938.
13. Buckman, William W., *Guide to Research in Educational History*, New York University Bookstore, N. Y., 1949.
14. Burtt, Edwin A., *Principles and Problems of Right Thinking*., Harper and Brothers.
15. Bush, George Pollock, *Teamwork in Research, American University Press*., Washington, D. C., 1953.
16. Crawford, C. C. *The Teaching of Research* in *Education*, *University of Southern California*.
17. *Columbia Associates in Philosophy, An Introduction to Reflective Thinking*., Houghton Miffin Co.
18. Elmer, Manuel C, *Social Research*., Prentice-Hall, Inc., New York, 1939.
19. Elmer, Manuel C, *Technique of Social Surveys*., Los Angeles—Jesse R. Miller.
.0. Edward, Allen, *Experimental Design in Psychological Research*, Rinehard Company, N. Y., 1950.
21. Fowler, Thomas, *The Elements of Inductive Logic*, Oxford: Clarendon Press.
22. Fry, Charles Luther, *The Technique of Social Investigation*, Harper and Brothers, N. Y., 1934.
23. Gee, Wilson, *Research* in the *Social Sciences*. The MacMillan Company, New York, 1929.
24. *Good*, Carter Victor, *How to do Research in Education*, Warwick and York, Inc, Baltimore, 1928.
25. Good, Carter V. and Scates, Doutlas E, *Methods of Research*, Appleton-Century-Crofts, N. Y., 1954.
26. Harrel, C. G. *Selecting Projects form Research*. Pillsbury, Mills, Inc. Minneapolis, Minn., 1946.
27. Hinkle, George. *The Form for the Term or Research Paper*, Stanford University Press, Stanford University, California, 1937.
28. Hockett, H. C, *Introduction to Research in American History*, MacMillan Co.

Home Economics Series—No. 15—Bulletin 166. *Suggestions for Studies and Research for Studies Economics*

*Education*, *Washington—Federal Board of Vocational* Education, 1932.

30. Jevons, W. Stanley. *The Principle of Science*, London, MacMillan Co.
31. Johnson, Palmer Oliver, *Statistical Methods in Research*, Prentice-Hall, Inc., N. Y., 1949.
32. Johods, M., Deutsch, M. and Cook, S , *Research Methods in the Study of Social Relations*, The Dryden Press, New York 19, N. T, 1951.
33. Kelley, Truman Lee, *Scientific Method*, Ohio State University Press, The MacMillan Co.
34. Lacey, Oliver L., *Statistical Methods in Experimentations*, MacMillan Co., N. Y., 1953.
35. Menge, Edward John. *Jobs for the College Graduate in Science*, The Bruce Publishing Co., N. Y., 1932.
36. Monroe, W. S. and Englehart, *A Critical Summary of Research Relating to the Teaching of Arithmetic*, University of Illinois Bulletin Vol. xxix, No. 5.
37. Monroe, Walter S. *The Scientific Study of Educational Problems*, The MacMillan Co., New York, 1936.
38. Odum, H. W. and Jocher, *An Introduction To Social Research*, Henry Holt and Co.
39. Pollock, Philip, *Careers in Science*. E. P. Dutton and Company, Inc., New York, 1945.
40. Reeder, W. G., *How to Write a Thesis*, Public School Publishing Co.
41. Schluter, W. C., *How to do Research*, Prentice Hall
42. Schluter, W. C., *How to do Research Work*, Prentice Hall.
43. Spahr, W. E., *Methods and Status of Scientific Research*. Harper and Brothers.
44. Seyfried, J. E., *Principles and Mechanics of Research*, University of New Mexico.
45. Whitney, Frederick L. *The Elements of Research*, Prentice-Hall, Inc., N. Y., 1937.
46. Wilson, Edgar Bright, *An Introduction to Scientific Research*, McGraw-Hill, N. Y., 1952.
47. American Educational Research Association, *Improving Educational Research*, Washington, D. C., 2 copies.

48. Alexander, Carter, *How to Locate Educational Information and Data*, Columbia University, Teachers College, New York, 1950.
49. Larrabee, Harold A. *Reliable Knowledge*, Houghton Mifflin Company, 1945.
50. The National Society for the Study of Education, *Graduate Study in Education.* Fiftieth Yearbook-Kimbark Avenue, Chicago 37, Illinois.
51. Nutrition Foundation, Inc., *Research and the Science of Nutrition*, New York, 1947.
52. Dewey, John, *How We Think*, D. C. Heath.
53. Bogardus, Emory Stephen, *Introduction to Social Research*, Suttonhouse, Ltd , New York, 1936.

---